चौथी दुनिया

हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

दिल्ली रविवार 30 अगस्त 2009

मूल्य 20 रुपये

भीतर

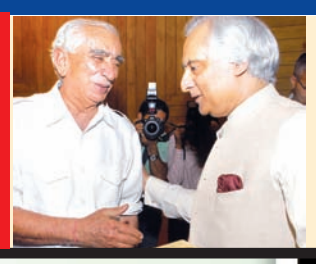

3 संघ, भाजपा, जिन्ना और जसवंत

4 नरेगा : सफलता कम, शोर ज़्यादा

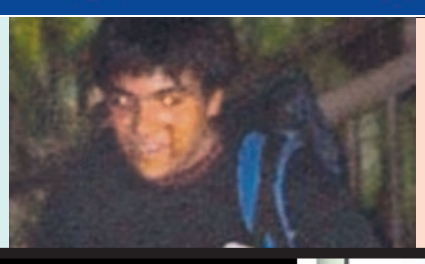

13 ऐसे बनाए जाते हैं पाकिस्तान में क़साब

मार्च में छह दिसंबर दुहराने की साज़िश

आर.के. यादव

भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) एक बार फिर अयोध्या स्थित राम जन्मभूमि निर्माण मुद्दे को गरमाना चाहती है. अपनी खोती जा रही राजनैतिक पकड़ को मज़बूत करने के लिए वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के ज़रिए 16 मार्च 2010 से इस दिशा में नई पहल शुरू करने की कोशिश में है. भाजपा की मंशा को देख संघ भी एक बार फिर अपने स्वयंसेवकों के साथ शंखनाद करके पूरे देश की राजनीति में अफरा-तफरी मचाने को तैयारी में है. मंदिर निर्माण के लिए 16 मार्च से 16 मई के बीच हरिद्वार में कुंभ मेले के दौरान निर्माण से जुड़े संगठन व संत कार्यशाला में रखी गई शिलाओं पर लग रही काई को साफ कराने तथा उन शिलाओं को विवादित परिसर के नज़दीक ले जाने की तैयारी करेंगे. हरिद्वार कुंभ मेले में संत यह भी तय करेंगे कि लखनऊ से अयोध्या तक वे पैदल चल कर जाएं और कारसेवकपुरम से राम जन्मभूमि के क़रीब तक शिलाओं को उठाकर ले जाएं. रामजन्म भूमि न्यास से जुड़े पूर्व सांसद डॉ. राम विलास वेदांती ने एक विशेष बातचीत में बताया कि अटल बिहारी वाजपेयी की नेतृत्व वाली सरकार के समय एनडीए के घटक दल नहीं चाहते थे कि मंदिर निर्माण हो. यदि भाजपा की पूर्ण बहुमत की सरकार होती तो अब तक मंदिर बन चुका होता.

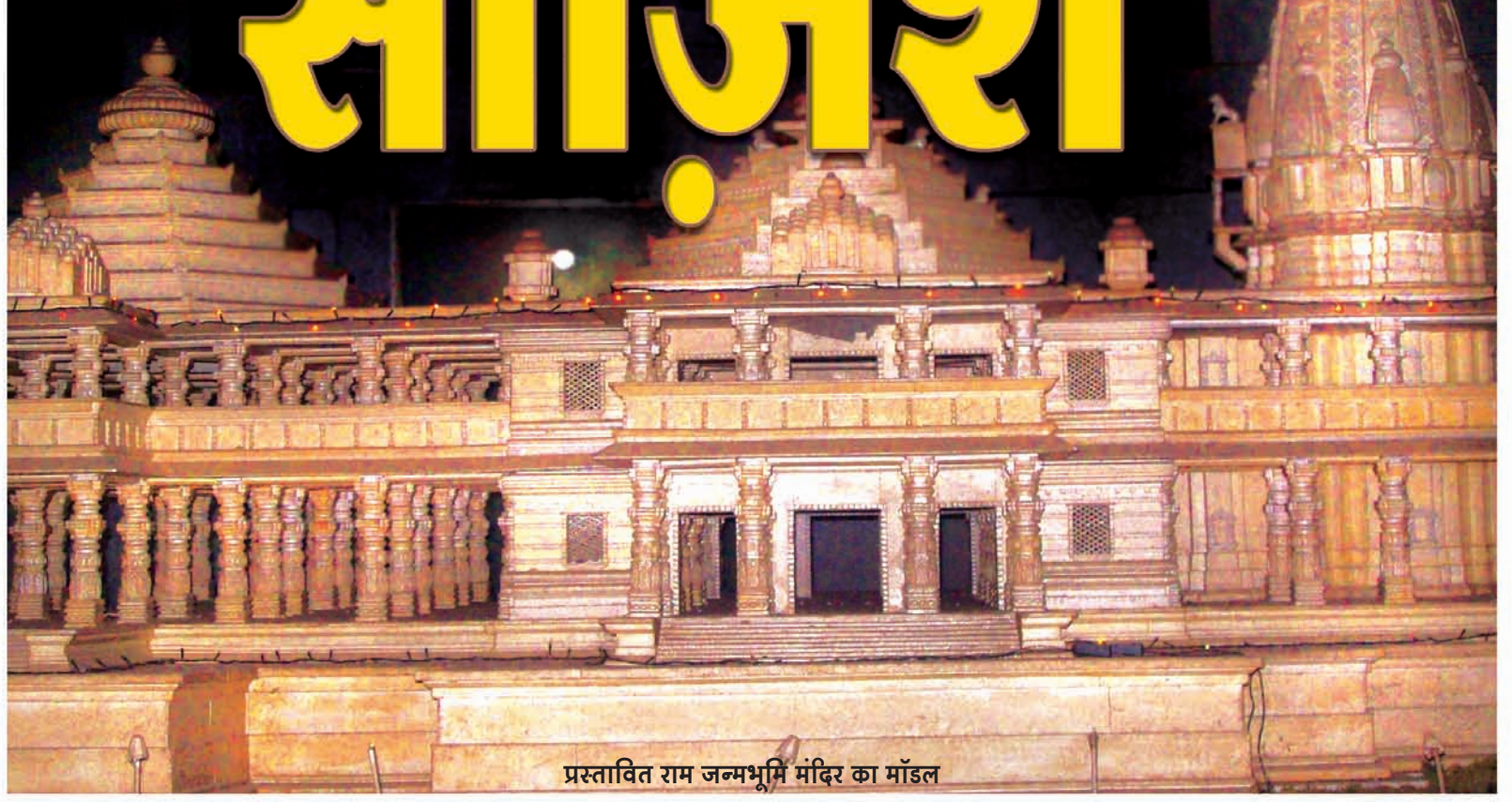

प्रस्तावित राम जन्मभूमि मंदिर का मॉडल

1999 से लेकर 2008 तक भाजपा और आरएसएस द्वारा कोई भी आंदोलन सिर्फ़ इसलिए नहीं किया गया, क्योंकि उसे आशा थी कि जनता उसे हिंदुत्व और राम मंदिर निर्माण के राष्ट्रीय मुद्दे पर शासन-सत्ता पुन: सौंप देगी. लेकिन जनता उनके छलिया आश्वासनों को समझकर उनकी नीतियों को पूरी तहर चकनाचूर कर उन्हें सत्ता के नज़दीक भी नहीं फटकने दिया. ऐसे में सत्तालोलुप भाजपाइयों ने एक बार फिर हिंदुत्व की रक्षा और राम मंदिर निर्माण के लिए कुचक्र रचने में जुट गए हैं. सिर्फ़ इस मक़सद से कि पार्टी की डूबती नैया को बचाया जा सके. इसके लिए उसने आरएसएस और संतों को फिर हथियार बना डाला है. इसी उद्देश्य की ख़ातिर अभी हाल में ही आठ अगस्त को अयोध्या स्थित राम सुंदर धाम राजकोट में विहिप सुप्रीमो अशोक सिंघल, मणिराम छावनी महंत ज्ञानदास, धर्मदास, बड़ा भक्तमाला महंत कौशल किशोर दास, दिगंबर अखाड़ा के महंत सुरेश दास, डॉ. राम विलास वेदांती, महंत जगदेव दास, महंत कन्हैया दास आदि ने बैठक की. इसमें हिंदुत्व की बुझी आग को फिर जलाने का फ़ैसला किया गया.

साधु-संतों की बैठक में उपस्थित विहिप नेता अशोक सिंघल

श्री वेदांती ने बताया कि तीन मंज़िल तक बनने वाले जन्मभूमि मंदिर की दो मंज़िल तक के पत्थर तराशे जा चुके हैं. एक मंज़िल बाक़ी है जो निर्माण के समय ही पूरी कर ली जाएगी. अभी आंदोलन की पूरी रूपरेखा कुंभ मेले में तय होनी है. संत यह भी तय करेंगे कि जिन शिलाओं का पूजन देश-विदेश में हुआ था, उन शिलाओं को विहिप से जुड़े संत राम जन्मभूमि के अत्यंत नज़दीक तक अपने सिर पर रख कर ले जाएं और वहां रखें. सवाल है कि क्या इस बार के कुंभ मेले में कारसेवकों के बिना ही संत कोई इतना बड़ा निर्णय लेने में कामयाब होंगे? ख़ास कर यह देखते हुए कि इस समय केंद्र में जहां कांग्रेस की अगुआई में मनमोहन सिंह की सरकार है, वहीं उत्तर प्रदेश में मायावती की बसपा की सरकार है. क्या मायावती सरकार इस बार भगवा ब्रिगेड को प्रदेश में घुसने की इजाज़त देगी, जबकि पूर्व में केंद्र और राज्य में भाजपा की सरकार होते हुए भी एक लाख संतों ने कभी पैदल मार्च नहीं किया और न ही मंदिर निर्माण की सुधि आई. उस समय तो भाजपा के सांसद लोकसभा में बैठकर सत्तासुख भोगने में ही लगे रहे. और तो और, साधु-संन्यासी भी भाजपा के पूरे पांच साल के शासनकाल में मंदिर मुद्दे को लेकर न तो कोई प्रचार किया और न ही कोई आंदोलन चलाया. उस समय केवल एक ही आंदोलन ख़ूब फला-फूला, वह यह कि पूरे भारत में राम मंदिर निर्माण को लेकर कई समितियां बरसाती मेढ़क की तरह पैदा हो गईं. उन समितियों ने जनता के बीच हिंदुत्व की रक्षा और राम मंदिर निर्माण के नाम पर ख़ूब धन बटोर गईं. इस सवाल के जवाब में श्री वेदांती ने माना कि अयोध्या में राम जन्मभूमि न्यास, मंदिर निर्माण की रसीद छपवा कर विभिन्न भाषाओं में लगभग 20 हज़ार फ़र्ज़ी साधु देश में घूम-घूम कर चंदा जमा करके भोग-विलास में जुटे हुए हैं. जबकि इनका मंदिर निर्माण से कोई संबंध नहीं है. मंदिर निर्माण के लिए सिर्फ़ राम जन्मभूमि न्यास ज़िम्मेवार है, जिसके अध्यक्ष नृत्य गोपाल दास हैं. बाक़ी अन्य जितने भी संगठन हैं, वे सिर्फ़ कमाने-खाने के लिए बनाए गए हैं, जिन्होंने संतों की गरिमा घटाई है और राम जन्मभूमि आंदोलन व अयोध्या की छवि को धूमिल किया है. इन्हीं नक़ली साधुओं के चलते असली साधुओं की भी निंदा होने लगी है. लोग दिगभ्रमित हो रहे हैं कि भगवान की जन्मभूमि बनाने के लिए किस-किस संत संगठन को सही माना जाए ग़ौरतलब है कि 1990 से पूरे शबाब में राम मंदिर निर्माण का जो आंदोलन पूरे देश में चला, उससे प्रभावित होते हुए विदेशों में रहने वाले करोड़पतियों ने भारी धनराशि राम मंदिर निर्माण के लिए दान स्वरूप दिया. अयोध्या में छह दिसंबर 1992 को विवादित ढांचे को तोड़ने के बाद मंदिर निर्माण के लिए उपयोग में आने वाली ईंटों तथा प्रस्तावित ढांचे को तरासने का काम युद्धस्तर पर शुरू कर दिया गया. इसका संरक्षण केवल अयोध्या के साधु-संन्यासियों के हाथों में रहा. पूरे देश में इसका इतना प्रचार-प्रसार किया गया कि जनता ने हिंदुत्व की रक्षा के लिए भाजपा की सरकार बनवा डाली. लेकिन सरकार बनने के बाद भाजपा को आख़िरकार अपनी सरकार चलाने में ही मज़ा आया और राम मंदिर की बात उसने जिस किताब में लिखकर रखी थी, उस अध्याय को ही पूरी तरह से बंद कर दिया. यह बात देश की जनता को इतनी बुरी लगी कि उसने भगवाधारी खेमे को एक सिरे से नकार दिया और सत्ता परिवर्तन करके भाजपा को ज़मीन पर ला पटका. सत्ता जाने के बाद पार्टी में विचार मंथन शुरू हुआ तो एक नया शगूफा छोड़ा गया. कहा गया कि जब-जब मंदिर निर्माण की बात पर बल दिया गया, एनडीए के घटक दल तब-तब विरोध करने लगे. यही वजह है कि निर्माण नहीं हो सका. लेकिन इस बात को जनता ने स्वीकार नहीं किया और सत्ता परिवर्तन करके देश से सांप्रदायिकता को अलग-थलग कर दिया. बहरहाल, अयोध्या में कारसेवक पुरम स्थित कार्यशाला में जो वास्तु शिल्पें तैयार रखी गई हैं, उन पर काई जम गई हैं. अयोध्या में निरंतर देश-विदेश से आने वाले पर्यटक जिज्ञासावश मंदिर निर्माण में लगने वाले तराशे गए पत्थरों को देखने के लिए जब कार्यशाला में जाते हैं तो दंग रह जाते हैं. पर्यटक जब राम मंदिर निर्माण कार्यशाला में तराशे गए शिल्पों को देखने जाते हैं, तो हिंदुत्व और राजनीति के बीच 1990 में निरीह बलिदानियों के ख़ूनों से सनी हक़ीक़त सामने आ जाती है. अब तो इस देश की जनता भी भली-भांति समझ चुकी है कि भाजपा और अन्य हिंदुत्व संगठन चाह कर भी राम मंदिर का निर्माण नहीं कराएंगे. इसलिए कि राम मंदिर मुद्दा ही उनका राजनीतिक जीवन और जीविकोपार्जन है. यदि राम मंदिर सचमुच बन गया तो भाजपा की राजनीति ही पूरी तरह से ख़त्म हो जाएगी.

1999 से लेकर 2008 तक भाजपा और आरएसएस द्वारा कोई भी आंदोलन सिर्फ़ इसलिए नहीं किया गया, क्योंकि उसे आशा थी कि जनता उसे हिंदुत्व और राम मंदिर निर्माण के राष्ट्रीय मुद्दे पर शासन-सत्ता पुन: सौंप देगी. लेकिन जनता उनके छलिया आश्वासनों को समझकर उनकी नीतियों को पूरी तहर चकनाचूर कर उन्हें सत्ता के नज़दीक भी नहीं फटकने दिया.

feedback@chauthiduniya.com

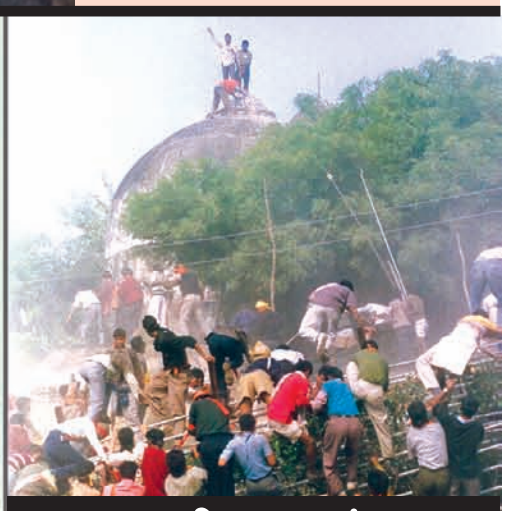

अयोध्या कांड

1989 : विवादित स्थल के बगल में एक मंदिर की नींव रखी गई, विहिप के आंदोलन ने ज़ोर पकड़ा.

1990 : तत्कालीन भाजपा अध्यक्ष लालकृष्ण आडवाणी की मंदिर के समर्थन में रथ यात्रा. एक लाख कारसेवक अयोध्या पहुंचे.

6 दिसंबर 1992 : बाबरी मस्जिद का विध्वंस, मस्जिद की जगह अस्थायी मंदिर की स्थापना. इसके बाद देश भर में हुए दंगों में 2000 लोगों की जान गई.

1993 : नरसिंह राव सरकार ने विवादास्पद जगह के चारों तरफ़ 67 एकड़ ज़मीन को क़ब्ज़ा कर उस पर राम कथा पार्क बनाने की योजना रोकी.

1994 : सुप्रीम कोर्ट ने अधिगृहित ज़मीन पर किसी भी तरह के क्रियाकलाप न करने का आदेश जारी किया और यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया.

जनवरी 2002 : विहिप ने सुप्रीट कोर्ट के आदेश के बावजूद मंदिर बनाने की घोषणा की.

16 फरवरी 2002 : तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा कि इस विवादित मसले को कोर्ट के फ़ैसले से ही सुलझाया जा सकता है, क्योंकि दोनों ही पक्ष अपने रुख़ पर अड़े हुए थे.

5 मार्च 2002 : कोर्ट के आदेश के पालन के लिए विहिप और राम जन्मभूमि न्यास सहमत.

6 मार्च 2002 : केंद्र अयोध्या मामले की शीघ्र सुनवाई के लिए इलाहाबाद हाई कोर्ट गया.

10 मार्च 2002 : मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड ने कांची के शंकराचार्य के सुझाए फ़ार्मूले को ख़ारिज़ कर दिया.

11 मार्च 2002 : विवादित स्थल पर पूजा के मसले पर वाजपेयी ने सुनिश्चित किया कि सरकार सुप्रीम कोर्ट के फ़ैसले का पालन करेगी.

13 मार्च 2002 : सुप्रीम कोर्ट ने पूजा न करने का आदेश दिया. कहा, यथास्थिति बनी रहेगी.

लिबरहान आयोग

16 दिसंबर 1992 : बाबरी मस्जिद विध्वंस मामले की जांच के लिए लिबरहान आयोग के गठन की अधिसूचना जारी. हालांकि न्यायाधीश एमएस लिबरहान से इस घटना की जांच छह महीने में पूरी करने की उम्मीद जताई गई थी, लेकिन लिबरहान अपना पूरा समय इस पर नहीं दे सके, क्योंकि वह नवंबर 2000 तक कार्यरत जज थे.

मार्च 1993 : आयोग की प्रक्रिया शुरू हुई.

मई 1995 : उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव आयोग के सामने बयान देने वाले लोगों में सबसे पहले थे.

नवंबर 2000 : न्यायाधीश लिबरहान आंध्र प्रदेश कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश के पद से सेवानिवृत.

15 जनवरी 2001 : बीजेपी की पूर्व नेत्री उमा भारती भी आयोग के समक्ष पेश हुईं

6 फरवरी 2001 : आरएसएस (राष्ट्रीय स्वयं सेवक) प्रमुख केएस सुदर्शन ने दावा किया कि बाबरी मस्जिद को उड़ाने के लिए बम रखा गया था. बाद में वह इस बात से पलट गए.

9 अप्रैल 2001 : पूर्व प्रधानमंत्री पीवी नरसिंह राव ने भी बयान दिया

15 मई 2001 : एलके आडवाणी ने आयोग के सामने बयान दिया

11 जून 2001 : मुरली मनोहर जोशी ने आयोग के सामने बयान दिया

26 जून 2001 : बजरंग दल के नेता विनय कटियार के ख़िलाफ़ समन जारी किया गया. ग़लत भाषा का प्रयोग करने के कारण उनके ख़िलाफ़ जुलाई में फिर से समन जारी किया गया.

1 सितंबर 2001 : विहिप के पूर्व अध्यक्ष विष्णु हरि डालमिया ने आयोग के सामने बयान दिया

20 नवंबर 2001 : पूर्व प्रधानमंत्री वीपी सिंह ने आयोग के सामने बयान दिए.

3 सितंबर 2003 : कल्याण सिंह के ख़िलाफ़ ग़ैर-ज़मानती वारंट जारी किया गया.

23 सितंबर 2003 : कल्याण सिंह पेश हुए, लेकिन किसी सवाल का जवाब नहीं दिया.

3 जून 2005 : आयोग ने सबूत जुटाने की कार्यवाही बंद की और रिपोर्ट लिखना शुरू किया.

30 जून 2009 : आयोग ने अपनी रिपोर्ट केंद्र सरकार को सौंपी.

वर्तमान स्थिति : रिपोर्ट सार्वजनिक नहीं हुई, आयोग की रिपोर्ट पर कोई कार्रवाई होनी अभी बाक़ी.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

हिंदी बनाम अंग्रेजी

बिहार में 1997 से ही सरकारी भाषा के तौर पर अंग्रेजी का इस्तेमाल कम हुआ है, और बाबू लोग हिंदी को आधिकारिक भाषा के तौर पर हिंदी को ही बढ़ावा देते रहे हैं. अब इतने सालों के हिंदी प्रेम के बाद नए राज्यपाल के सारे मेमो और फाइलें अंग्रेजी में मांगने के नए फ़रमान से बाबू लोग मुश्किल में हैं. अचानक से ही पटना सचिवालय के कामकाज में तेज़ी सी आ गई है और बाबूलोग अपनी अंग्रेजी दुरुस्त करने और अपने कंप्यूटरों पर जमी धूल हटाने में जुट गए हैं. लगता है कि हिंदी के इस्तेमाल पर ज़ोर इतना अधिक रहा है कि केंद्रीय मंत्रियों से बातचीत के लिए रखे गए सरकारी स्टोनोग्राफरों तक को अंग्रेजी नहीं आती.

वैसे ख़बर यह भी है कि भाषा के फेर में फंसे बाबुओं को राहत मिलने वाली है, क्योंकि राज्यपाल ख़ुद हिंदी सीखने की कोशिश में हैं. बाबुओं की तो यही दुआ है कि वह जल्दी सीख जाएं.

चुस्ती के नुस्ख़े में सुस्ती

केंद्रीय कार्मिक मंत्रालय के सभी बाबुओं को वार्षिक प्रदर्शन समीक्षा रिपोर्ट (एपीएआर) के अंतर्गत लाने के फ़ैसले को मोदी के गुजरात में नकार दिया गया है. प्रदेश के कुछ बाबुओं को इस बात से नाराज़गी है कि उनके कुछ साथी इस सिस्टम के तहत उनसे आगे निकल गए हैं.

सूत्र बताते हैं कि कम से कम 40 आईएएस अधिकारी इसके लिए मूल्यांकन अथॉरिटी, मंजुला सुब्रमण्यम (पूर्व मुख्य सचिव) को ज़िम्मेदार ठहरा रहे हैं. इससे पता चलता है कि वह किसी काम के लिए कितनी सुस्त हैं. कहा जा रहा है कि मंजुला सुब्रमण्यम ने अपनी सेवानिवृत्ति के पहले के 15 दिनों में 400 पीएआर फाइलें निपटाईं थीं. हालांकि इतने बाबुओं की अपील की समीक्षा मुमकिन नहीं लगती, क्योंकि इससे कई ऐसे बाबुओं को भी परेशानी होगी जो सच में तरक़्क़ी के हक़दार हैं. लगता है कि कार्मिक मंत्रालय के सचिव एएन तिवारी को बाबुओं को चुस्त बनाने का कोई और तरीक़ा ढूंढना होगा.

साउथ ब्लॉक

अंज़ुम ए ज़ैदी

मीणा लेंगे चौहान की जगह

मध्य प्रदेश काडर के 1980 बैच के अधिकारी पी डी मीणा, एम जे चौहान (केरल काडर 1986) की जगह नेफेड के कार्यकारी अधिकारी का पद संभाल सकते हैं. कृषि सहकारिता विभाग में हाल ही में श्री चौहान ने अपना कार्यकाल समाप्त किया है.

अपने मूल काडर में लौटेंगे बनर्जी

आईए एंड एएस के 1973 बैच के अधिकारी ए.के. बनर्जी अपने काडर में लौटने वाले हैं. लेकिन इसमें कुछ किंतु-परंतु अभी बाक़ी है. जैसे, पहले उनका उत्तराधिकारी चुना जाएगा, तभी उनकी वापसी होगी. वह इस समय नेशनल फार्मास्युटिकल अथॉरिटी डिपार्टमेंट ऑफ फार्मास्युटिकल के चैयरमैन हैं.

पेशेवरों की बढ़ेगी पूछ

सरकार अरसे बाद भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग (एएसआई) के महानिदेशक के तौर पर किसी पेशेवर की नियुक्ति करने वाली है. इसके साथ ही यह भी संभावना है कि सरकार यही कसौटी दूसरे विभागों में भी अपनाने वाली है कि केवल पेशेवर ही काम करें, नौकरशाह नहीं.

कोलकाता के नौनिहालों से सीखें सफाई के सबक़

प्रशासन से हताश हो चुके 17 छात्रों ने आठ फरवरी 2009 को एक सफाई अभियान की शुरुआत की. अब यह एक ऐसे अभियान में बदल गया है, जिसमें 15 स्कूल बड़े उत्साह से हिस्सा ले रहे हैं. हालांकि अधिकतर वयस्कों ने एक-दो शब्द कहने के अलावा मदद के लिए कभी हाथ नहीं बढ़ाया है.

पिछले सात महीनों के दौरान समाज के (तथाकथित) सबसे कमज़ोर वर्ग ने भारत की सबसे बड़ी नागरिक ज़िम्मेदारी उठाई है. ज़िम्मेदारी भारत के सबसे गंदे महानगर कोलकाता की सफाई की है.

आख़िरकार लड़ाई छात्र बनाम कूड़े की है. पांच साल. बारह साल. सोलह साल. आमतौर पर इस उम्र के लोगों को भद्रलोगों के कोलकाता में *बच्चा-रा* यानी बेकार कह कर टाल दिया जाता है.

लेकिन इन बच्चों ने उम्मीद से बढ़ कर काम किया है. उन्होंने 15 स्कूलों से 150 से भी ज़्यादा कार्यकर्ता जुटाए हैं, हर सुबह छह बजे सड़कों पर निकले हैं, 25000 किलो से ज़्यादा कचरा उठाया है, कचरे के हर कतरे को पूरी ज़िम्मेदारी से कोलकाता नगर निगम (केएमसी) के कचरे के डिब्बों में पहुंचाया है, सदर्न एवेन्यू के पास बिरला अकादमी के सामने एक बाग़ीचे के 20 हज़ार वर्गफीट इलाक़े को साफ किया है, पार्क सर्कस मैदान से 4000 किलो कचरा हटाया है और कोलकाता के दक्षिणी, उत्तरी और केंद्रीय हिस्सों से 2000 से भी ज़्यादा तख्तियां हटाई हैं.

अब सवाल है कि आख़िर यह प्रयास कोलकाता के सिविक इतिहास में क्या मायने रखता है? कुछ जायज़ कारण हैं-

- पहला, भले ही इन छात्रों को कोई बड़ी हैसियत नहीं मानता हो लेकिन सच्चाई तो यही है कि उन्होंने कोलकाता के माननीय पार्षदों से बेहतर काम किया है. वे केएमसी के कूड़ा उठाने वालों के नाम जानते हैं.
- दूसरा, इन छात्रों ने यह सब कुछ अपनी पॉकेट मनी के दम पर किया है. (यह 7000 रुपयों से ज़्यादा नहीं हो सकता)
- तीसरा, छात्रों ने केएमसी के ट्रकों से सहयोग करके कंक्रीट के कचरे को उठवाने का काम हर शनिवार सुबह किया, मीडिया को इसमें आमंत्रित किया, स्कूल टीचरों को रिपोर्ट भेजी, फेसबुक पर नेटवर्किंग के ज़रिए इस बात को हर तरफ़ फैलाया, यह बात इतनी तेज़ी से फैली की स्टाइलिश लड़कों और ख़ूबसूरत लड़कियों के बीच कूड़ा उठाना एक फैशनेबल काम बन गया.
- चौथा, छात्रों ने ज़मीन, हवा और पानी (रवींद्र सरोवर वाटर के नीचे धाकुरिया पुल) से प्लास्टिक की सफ़ाई की.
- पांचवां, छात्रों ने बीके बिरला को ख़त लिखकर पूछा कि क्या वह सहयोग करेंगे? उन्होंने कहा कि छात्र बिरला अकादमी के सामने जमा कूड़े के ढेर को साफ करेंगे और क्या श्रीमान बिरला अपने माली के ज़रिए बाक़ी काम करा लेंगे? एक पखवाड़े के भीतर जवाब आ गया-वे पूरी तरह तैयार हैं. एक महीने के अंदर छात्रों ने इस कार्य के तहत 10 हज़ार किलो प्लास्टिक उठाया और श्रीमान बिरला ने बाक़ी काम के लिए एक माली को तैनात कर दिया.
- छठा, क़रीब 40 छात्र (लक्ष्मीपत सिंहानिया स्कूल, बिरला हाई स्कूल, सेंट जोसेफ्स कॉलेज, एमसी केजरीवाल स्कूल और मॉडर्न हाई जैसे स्कूलों से) मेनोका सिनेमा के सामने रवींद्र सरोवर पर फावड़े, कुदाल लिए और दस्ताने पहने इकट्ठा हुए. 5000 फीट के क्षेत्रफल वाला गार्डन एरिया घास, खर-पतवार और टूटी डालियों से भरा हुआ था. जब दो घंटे बाद छात्र वहां से गए तो यह पूरा इलाक़ा साफ हो चुका था.

हालांकि इस पूरे घटनाक्रम में जो बात बार-बार दिखाई दी, वह छात्र कार्यकर्ताओं द्वारा सफाई की नहीं थी, वह वयस्कों द्वारा फिर से गंदगी फैलाने की थी.

छात्रों को कुछ सबक़ याद रहेंगे-

- कि अधिकतर सुबह मार्निंग-वाक पर जाने वाले लोग दूसरा रास्ता पकड़ लेते, उनमें कभी कोई रुक कर तारीफ़ कर देता (भालोई कोरछो, बाबा आमरा फुल सपोर्ट दिच्छी-अच्छा काम कर रहे हो, हमारा पूरा समर्थन है). हालांकि कभी किसी ने न तो छात्रों को मदद की, न ही कभी किसी ने कूड़े के अगले ट्रक के लिए पैसे की पेशकश की.
- कि कुछ बड़े बिना मदद की पेशकश किए ही बच्चों के पास सीधे जाकर बोले-तोमरा ओखानेई आर एकतु क्लीन करो, ओखानेई ओनेक नोनग्रा (वहां भी साफ करो, वह जगह भी गंदी है). शर्मनाक.
- कि बिड़ला अकादमी के सामने के बुलवर्ड की सफाई चुपके से करनी होगी वरना वन विभाग अपनी ग्रीन पुलिस भेज देगा और एक भी प्लास्टिक का टुकड़ा उठाने नहीं देगा.

क्या सबक़ ले रहे हैं छात्र

- कि अधिकतर बड़े सनकी हैं.
- कि अधिकतर बड़े अपनी धोती उठाकर ज़मीन पर गंदगी फैला देंगे, लेकिन मदद के लिए उंगली भी नहीं उठाएंगे.
- कि अधिकतर बड़े समझते हैं कि यह उनका काम नहीं है.
- कि अधिकतर बड़े मानते हैं कि कूड़ा उठाना सिर्फ़ शिक्षकों और एनजीओ को शोभा देता है.
- कि अधिकतर सफाई के लिए किसी और को पैसे देंगे. (हालांकि वे ऐसा भी नहीं करते)
- कि अधिकतर बड़े कहेंगे कि अच्छा काम कर रहे हो, लगे रहो और फिर निकल लेंगे.

सबसे अजीब बात यह है कि जहां हम अपने घरों को साफ-सुथरा रखते हैं, वहीं हम घरेलू कचरे को प्लास्टिक में भर कर घर की बालकनी से सीधे सड़क के कोने में फेंक देते हैं. भले ही अधिकतर के मन में एक शहरी यूटोपिया की तस्वीर है लेकिन इसे सच्चाई बनाने के लिए न तो हमारे अंदर ज़रूरी ताक़त है, न ही दिमाग़ और न ही इच्छाशक्ति.

तो क्या कोई उम्मीद है?

हां, उम्मीद तो बंधती है. उम्मीद स्मिता बजोरिया के माध्यम से बंधती है, जो जब भी बच्चे सफाई के लिए निकलते हैं तो बिना नागा 200 सैंडविच भेजती हैं. उम्मीद अर्णब बसु में भी है, जिन्होंने अपनी फैक्टरी से इन सभी कार्यकर्ताओं के लिए 200 केक का आदेश दे रखा है. उम्मीद उन प्रधानाध्यापकों में भी ज़िंदा है जो हर सोमवार सुबह अपनी एसेंबली में इन कार्यकर्ताओं के लिए खड़े होकर तालियां बजवाते हैं. उम्मीद, रेहान वारिस और इफ़्तिख़ार जैसे लोगों से बंधती है, जिन्होंने कुछ दिन पहले तक सड़क पर फेंके गए कूड़े पर ध्यान न देने वाले स्कूली छात्रों को प्रेरित करके अब कुशल तख्तियां हटाने वाला बना दिया है. 65 साल पुराने शेखर जैन-मैत्रेयी समूह से भी उम्मीद है, जो सफाई के काम में लगे छात्रों के लिए 14 किलोमीटर गाड़ियां चलाकर संदेश पहुंचाते हैं. एक उम्मीद ऐसी भी जो अपना नाम नहीं बताना चाहती, लेकिन इस 65 वर्षीय शख्स ने छात्रों की मदद में पांच हज़ार रुपये फावड़े, दस्ताने और बोरे ख़रीदने के लिए भेजे. उम्मीद का एक हिस्सा टीसी जैन भी हैं जो 200 ऐसे जूट के बोरे भेजते हैं, जिनपर सेव सदर्न एवेन्यू लिखा होता है. उम्मीद पीयूष भगत (सिल्वर स्प्रिंग) में भी है जो गिरे हुए पेड़ों के लिए क्रेन भेजते हैं, उम्मीद का एक नाम सौरभ मित्तल (ग्रीनप्लाई) भी हैं जो रवींद्र सरोवर की सफाई के लिए एक टीम भेजते हैं.

लेकिन ये केवल दस लोग हैं. अगर संख्या सौ हो जाए तो कोलकाता शायद भारत के सबसे साफ शहरों में होगा.

और अगर हज़ार हों तो?

मुद्दार पार्थेय

(लेखक एक कॉरपोरेट कम्यूनिकेशंस कन्सल्टेंट, स्टॉक मार्केट विश्लेषक, क्रिकेट इतिहासकार और कचरा उठाने वाले हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

ज़िम्मेदारी भारत के सबसे गंदे महानगर कोलकाता की सफाई की है. आख़िरकार लड़ाई छात्र बनाम कूड़े की है. पांच साल. बारह साल. सोलह साल. आमतौर पर इस उम्र के लोगों को भद्रलोगों के कोलकाता में *बच्चा-रा* यानी बेकार कह कर टाल दिया जाता है.

चौथी दुनिया
हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

आर एन आई रजि.न.45843/86

वर्ष 23 अंक 24, 24 अगस्त-30 अगस्त 2009

प्रधान संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनाट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन
चौधरी बिल्डिंग
कनाट प्लेस
नई दिल्ली 110001

फोन न.
संपादकीय +91 011 47149999
विज्ञापन +91 011 47149916
प्रसार +91 011 47149905
फैक्स न. +91 011 47149906

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनर्प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

संघ, भाजपा, जिन्ना और जसवंत

मनीष कुमार

जिन्ना–इंडिया, पार्टिशन, इंडिपेंडेंस, विवादों के घेरे में है. यह किताब वरिष्ठ भाजपा नेता जसवंत सिंह ने लिखी है. जसवंत सिंह ने किताब के शीर्षक से ही साफ कर दिया है कि उनकी किताब भारत की आज़ादी और विभाजन का विश्लेषण मोहम्मद अली जिन्ना के इर्द–गिर्द घूमती है. जसवंत सिंह की किताब का सार है कि जिन्ना साहब एक महान व्यक्ति थे और उन्हें बेवजह हिंदुस्तान में खलनायक बना दिया गया. मैंने यह किताब नहीं पढ़ी है और न ही पढ़ने की इच्छा रखता हूं. जसवंत सिंह कोई स्वतंत्र इतिहासकार नहीं हैं. भाजपा के वरिष्ठ नेता हैं. वैसे भी भारत के विभाजन पर सभी दस्तावेज़ और शोध– जिसे पढ़कर जसवंत सिंह ने इस किताब को लिखा है–हर किसी के लिए उपलब्ध है. इन्हें पढ़कर हर व्यक्ति अपनी समझ ख़ुद पैदा कर सकता है. ऐसा इसलिए भी ज़रूरी है क्योंकि स्वतंत्रता संग्राम और उस समय के सारे नेताओं का विश्लेषण हर संगठन, हर विचारधारा और अलग–अलग नेताओं ने अपने हिसाब से किया है. राजनेताओं के विश्लेषण में एक डर और भी है. ऐतिहासिक घटनाओं का विश्लेषण या तथ्यों को तोड़ना–मरोड़ना राजनीतिक फ़ायदे और किसी योजना के तहत करते हैं. इसलिए राजनेताओं द्वारा लिखी गई किताबों पर अक्सर बवाल मचता है. जसवंत सिंह की किताब भी उन्हीं किताबों में से एक है.

जसवंत सिंह की किताब का पूरा ज़ोर यह स्थापित करने पर है कि जिन्ना सेकुलर हैं और विभाजन के लिए नेहरू और पटेल ज़िम्मेदार हैं, जिन्ना सच्चे भारतीय हैं और उन्हें ग़लत तरीक़े से समझा गया है, मुसलमानों ने विभाजन की बड़ी क़ीमत चुकाई है, विभाजन के लिए कांग्रेस की केंद्रीकृत नीतियां ज़िम्मेदार हैं, जिन्ना के संघीकृत विकल्प (फेडरल डिज़ाइन) को गांधी ने सही बताया था, बंटवारे का फ़ैसला अगर नेहरू के बजाय महात्मा गांधी, राजगोपालाचारी और अबुल कलाम आज़ाद को लेना होता तो देश तोड़ने की नौबत ही नहीं आती. ऐसा लगता है कि जसवंत सिंह ने किताब लिखने वक़्त ही तय कर लिया था कि वह विवादों को जन्म देने वाली सारी बातें इस किताब में प्रस्तुत करने में कोई कसर नहीं छोड़ेंगे. इतना सब कुछ लिखने के बाद जसवंत सिंह कहते हैं कि यह किताब पार्टी का दस्तावेज़ नहीं है, उनकी निजी राय है. अब यह बात तो समझ के परे है कि कोई शख़्स एक राष्ट्रीय पार्टी का वरिष्ठतम नेता हो, देश का वित्त मंत्री ही नहीं विदेश मंत्री भी रहा हो, उसकी राय एक आम भारतीय की या फिर निजी कैसे हो सकती है ?

जसवंत सिंह इस बात को पहले से ही जानते हैं कि जिन्ना को सेकुलर व सच्चा भारतीय बताना, और पटेल व नेहरू को विभाजन के लिए ज़िम्मेदार साबित करने का नतीजा क्या होगा? उन्हें यह भी पता है कि ऐसा लिखने से पार्टी उनके साथ नहीं होगी, कार्यकर्ता भी उन्हें छोड़ देंगे और वह संघ के निशाने पर आ जाएंगे. हमें नहीं भूलना चाहिए आडवाणी पिछले चुनाव में प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार थे और कई लोग मानते हैं आडवाणी के बाद जसवंत सिंह ही ऐसे व्यक्ति हैं जो प्रधानमंत्री बन सकते हैं. तो अब सवाल उठता है कि आडवाणी और जसवंत सिंह जैसे पढ़े– लिखे और ज़िम्मेदार लोग क्या जानबूझ कर अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारने को आतुर हैं या फिर यह किसी बड़ी योजना का हिस्सा है?

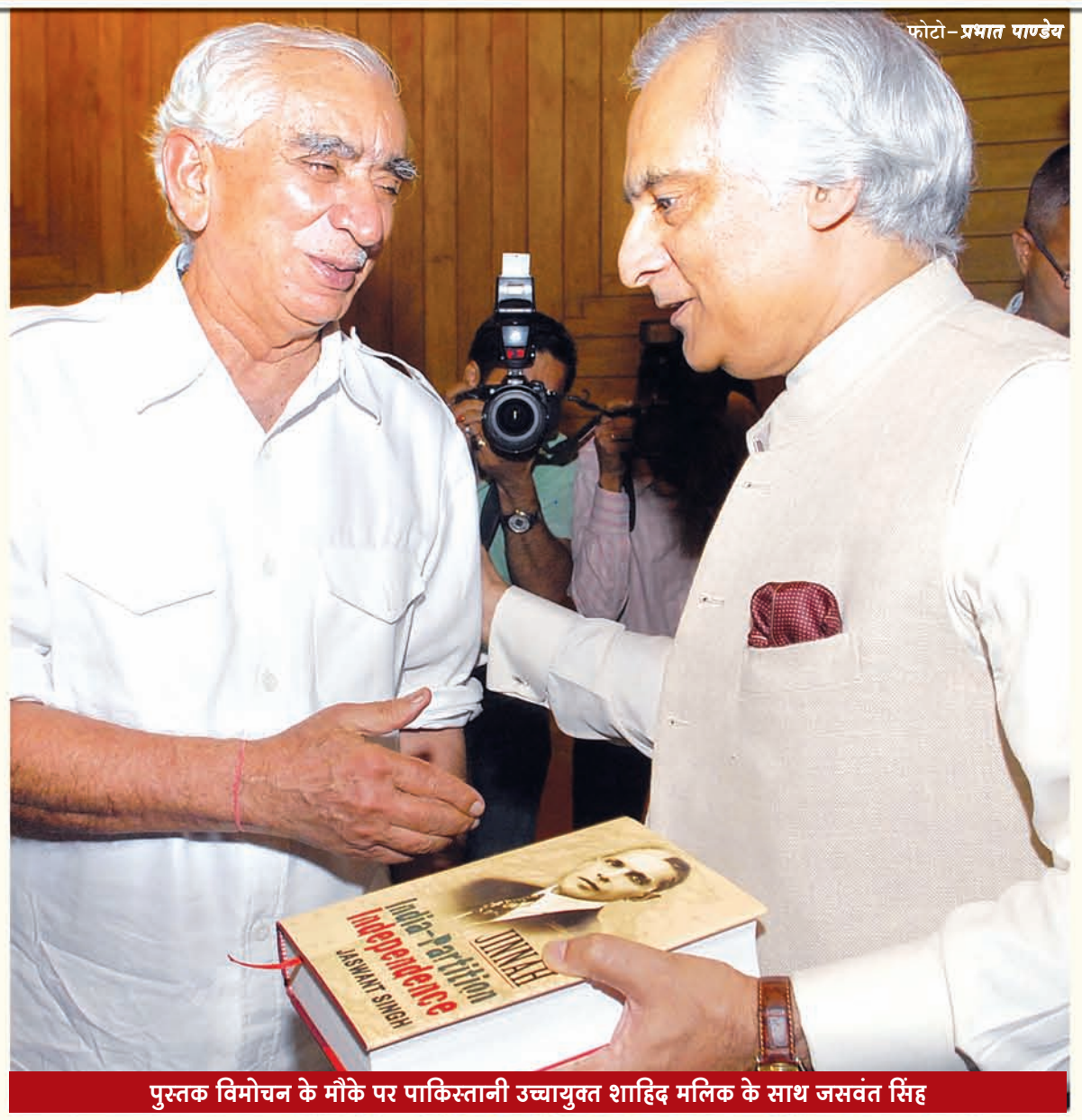

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

पुस्तक विमोचन के मौके पर पाकिस्तानी उच्चायुक्त शाहिद मलिक के साथ जसवंत सिंह

जिन्ना साहब एक महान नेता थे. इसकी शुरुआत 2005 में लालकृष्ण आडवाणी ने की थी, जब वह अपनी जन्मभूमि पाकिस्तान गए. उन्होंने क़ायद–ए–आज़म की समाधि के विजिटर्स बुक में यह लिखा कि जिन्ना साहब हिंदू–मुस्लिम एकता के अग्रदूत थे. पाकिस्तान में उन्होंने क़ायद–ए–आज़म को धर्मनिरपेक्ष बता दिया तो भारत में संघ परिवार में हंगामा खड़ा हो गया. पार्टी के लोग ख़िलाफ़ हो गए. संघ इतना नाराज़ हो गया कि उन्हें पार्टी के अध्यक्ष पद से इस्तीफा देना पड़ा. जिन्ना विवाद में जब आडवाणी जैसे नेता को संघ ने सबक़ सिखा दिया तो जसवंत सिंह की क्या बिसात? जसवंत सिंह भी जानते होंगे कि जिन्ना को सच्चा भारतीय बताने पर उनका साथ देने वाला नहीं कोई होगा. फिर इस किताब को लिखने का मतलब क्या है? दरअसल, भाजपा के नेताओं को ग़लतफहमी है कि जिन्ना की प्रशंसा करते ही मुसलमान वोटर उन्हें धर्मनिरपेक्ष और उदार मान लेंगे. आडवाणी जानते थे कि आने वाले चुनाव में वह प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार होंगे और देश में, ख़ासकर मुसलमानों के बीच उनकी छवि कट्टर हिंदू की है. इसलिए उन्होंने जिन्ना पर जुआ खेला. यह अलग बात है कि उन्हें लेने के देने पड़ गए. अब सवाल है कि क्या जसवंत सिंह ख़ुद को अगली लोकसभा चुनाव में आडवाणी की जगह देखना चाहते हैं? क्या उन्हें लगता है कि ऐसे विचार सामने रख कर वह एनडीए के सहयोगी पार्टियों के बीच भाजपा के सबसे मान्य नेता बन कर उभरेंगे? क्या उन्होंने भाजपा के अंदर चल रहे सत्ता संग्राम में अपनी एक चाल चली है? ऐसे कई सवाल हैं जिनके जवाब जसवंत सिंह के किताब से मिल सकते हैं. भाजपा के जिन्ना प्रेम एक दूसरा मक़सद भी है. जिन्ना को सेकुलर और सच्चा भारतीय बता कर वह आसानी से नेहरू और कांग्रेस पर हमला बोल सकते हैं. अगर जिन्ना महान थे, तो विभाजन के लिए लिए नेहरू और पटेल जैसे लोग दोषी थे. भाजपा के नेताओं को लगता है कि जिन्ना के ज़रिए नेहरू को तो नीचा दिखाया जा सकता है. भाजपा की समस्या है कि इस योजना में भाजपा के रास्ते संघ दीवार की तरह खड़ी है. जसवंत की किताब से आरएसएस फिर आगबबूला है. इसमें किसी को हैरानी नहीं होनी चाहिए कि जिन्ना को अच्छा बताने वाला कोई भी शख़्स आरएसएस के निशाने पर तो आएगा ही. इसकी वजह सिर्फ़ इतनी है कि संघ और भाजपा अपने हिसाब से स्वतंत्रता संग्राम को देखते हैं. आरएसएस के लोग मोहम्मद अली जिन्ना का नाम सुनते ही इसलिए बेक़ाबू हो जाते हैं क्योंकि उन्होंने संघ के सपने को ख़त्म करने का काम किया. जिन्ना की वजह से संघ का अखंड भारत का सपना, सपना ही रह गया. दूसरी बात यह भी कि संघ को हमेशा खटकता है कि ये लोग तो हिंदूराष्ट्र नहीं बना सके , लेकिन जिन्ना मुसलमानों के लिए अलग देश बनाने में कामयाब रहे. आरएसएस की नाराज़गी की वजह एक और भी है. चुनाव में हार के बाद संघ भाजपा को दुरुस्त करने में लगा है, लेकिन यह किताब उनकी मान्यताओं और विचारधारा के बिल्कुल उलट है. कांग्रेस पार्टी की तरफ़ से भी जिन्ना का जब विश्लेषण होता है तो वह भी किसी सच्चाई पर टिका नहीं होता है. वाजिब है, जिन्ना की लड़ाई ही कांग्रेस के साथ थी, नेहरू और गांधी के विचारों से थी. इसलिए कांग्रेस पार्टी इतिहास के उस नज़रिए को सच मानती है जिसमें जिन्ना को भारत के बंटवारे के लिए ज़िम्मेदार बताया जाता है. जो नेहरू पर सवाल खड़े करता है, उसे कांग्रेस इतिहास के तथ्यों के साथ छेड़छाड़ और मज़ाक बताती है. कांग्रेस यह मानती है कि जिन्ना के चलते ही भारत और पाकिस्तान में दंगे हुए और हज़ारों लोगों की जान गई. जसवंत सिंह की किताब पर कांग्रेस की प्रतिक्रिया भी उनकी अपनी राजनीति और नज़रिए से प्रेरित है. कांग्रेस के मुताबिक पाकिस्तान और जिन्ना की धर्मनिरपेक्षता भाजपा, आडवाणी और जसवंत सिंह को इसलिए ज़्यादा भाती है क्योंकि यह उनकी कट्टर विचारधारा के ज़्यादा क़रीब है. ये लोग सांप्रदायिक हैं, इसलिए भाजपा के नेताओं को जिन्ना ज़्यादा पसंद हैं. समझने वाली बात यह है कि देश के विभाजन के लिए कोई एक नेता ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है. नेहरू और पटेल को विभाजन के लिए ज़िम्मेदार बताना इसलिए ग़लत है कि कैबिनेट मिशन के सुझावों को कांग्रेस कार्यसमिति ने माना था. 1940 से 1947 तक हर बड़े नेता से कुछ ग़लती हुई. शायद कोई दूसरा रास्ता भी नहीं था, इसलिए किसी एक को ज़िम्मेदार बताना ग़लत है. आज़ादी के इतने दिनों बाद इस मामले को उठाने का मक़सद राजनीतिक छोड़ और कुछ नहीं हो सकता है.

manish@chauthiduniya.com

सभ्यताओं के टकराव से कैसे निबटें हम?

सौमित्र मोहन

सैमुअल पी. हटिंगटन ने 1993 में छपे अपने लेख *क्लैश ऑफ सिविलाइजेशन* में दावा किया था कि शीत युद्ध के बाद की दुनिया में विवाद विचारधारा और आर्थिक कारणों की जगह सांस्कृतिक कारणों से होगा. हटिंगटन ने कहा था, स्थानीय संघर्ष, जो अहम युद्ध में तब्दील होंगे, उस धुरी पर होंगे जो सभ्यताओं को एक दूसरे से अलग करते हैं. अगला विश्व युद्ध, सभ्यताओं के बीच का युद्ध होगा. हटिंगटन के इस निष्कर्ष पर आने के बाद कई लेख इसके पक्ष और विपक्ष में लिखे गए.

हालांकि, इस संदर्भ में यह मान लेना कि विपरीत धार्मिक विश्वास कभी सभ्यताओं में विवाद की वजह बन सकता है, वास्तविकता की सामान्य और बेहद सतही समझ होगी. अमर्त्य सेन ने 2003 में लिखा कि मानवों का यह एकपक्षीय विभाजन और उनकी बहुतेरी पहचानों को अनदेखा करने की प्रवृत्ति–कि कोई भी मानव दरअसल अपने व्यक्तिगत पहचान को पाना चाहता है– दरअसल एक बौद्धिक भ्रम है जो कि ख़तरनाक विभाजनों को जन्म दे सकता है. ऐसे नज़रअंदाज की हुई पहचान में राष्ट्रीयता, स्थान, वर्ग, पेशा, सामाजिक स्तर, भाषा, राजनीति और आर्थिक स्तर शामिल हैं. इसीलिए, हटिंगटन के निष्कर्ष को उच्छेदनवादी (रिडक्शनिस्ट को शायद हिंदी में यही कहेंगे), सामान्य और एकतरफ़ा कहा गया है. जॉर्ज बुश भले ही कहते हों कि सभ्यताओं के बीच टकराव की स्थिति नहीं है और यह महज़ इतिहास का मिथक है, लेकिन सच्चाई यही है कि अच्छाई और बुराई की जंग किसी न किसी शक्ल में निरंतर चल रही है. मोर्चे फतह होते हैं, जंग कभी नहीं जीती जाती. हटिंगटन की शब्दावली में सभ्यताओं के टकराव की स्थिति भले न हो लेकिन आज विचारों में टकराव ज़रूर हो रहा है. और वे भी कैसे विचार? हम आख़िर किस दुनिया की ओर बढ़ रहे हैं? दुनिया भर में आज कई ऐसे आतंकी संगठन हैं जो विश्व को डराने का काम कर अपने विचारों के लिए ज़मीन तलाश रहे हैं, जिसपर वे अपना मालिकाना हक़ समझ रहे हैं. उन्हें नतीजों की परवाह नहीं, न ही इस बात की परवाह कि यह जंग जायज़ है या नाजायज़. वे किसी भी हद तक जाने के लिए तैयार हैं.

पॉली टोनबी ने नवंबर 2002 में ब्रिटिश गार्जियन में लिखा कि दुनियाभर में अतिवादी आज पश्चिमी मूल्यों से नफरत करने के लिए एकजुट हो रहे हैं. इटली के प्रधानमंत्री सिल्वियो बरलस्कोनी का बयान कि उनकी सभ्यता इस्लाम से महान है, या फिर अमेरिकी जनरल विलियम बोयकिन का बयान कि उनका ईश्वर किसी दूसरे के ईश्वर से महान है, महज़ कट्टरवादियों को उकसाने का काम करते हैं. यह शायद किसी भी बिबलोलेट्रस (एक ग्रंथ पर आधारित धर्म) धर्म की मजबूरी है. इसके साथ ही सभ्य और बीमार राज्यों का वर्गीकरण करने के पीछे अहम वजह डर पैदा करना है. इसके साथ ही इससे सभ्य समाज के नागरिकों में दूसरों के लिए नफ़रत और घृणा पैदा करना है. पश्चिमी देशों के ज़्यादातर बयान और कारनामे, साथ ही उनकी यह कोशिश– कि तथाकथित बीमार देशों और ग़ैर–ईसाई समाज में आज़ादी और अधिकार स्थापित हो ही– शायद ओसामा बिन लादेन जैसी ताक़तों के पैदा होने की वजह है. ज़्यादातर ऐसे आतंकवादी और आतंकी संगठन बेख़ौफ़ होकर काम कर रहे हैं और अक्सर इनके हमले हमें हतप्रभ कर रहे हैं. भले ही वे समाज पर जुल्म करने में सक्षम हैं, लेकिन उनको एक बार यह सोचने की ज़रूरत है कि ऐसा करने से उन्हें क्या हासिल हो रहा है. जैसा कि महात्मा गांधी ने कहा था कि नेक काम करने के लिए भी अगर ग़लत माध्यम चुना जाता है तो नतीजे हमेशा ग़लत ही होंगे. हम वाकई आतंकवादियों के हाथों मारे जा रहे हज़ारों बेगुनाहों के पीछे छिपे मक़सद को नहीं समझ पा रहे हैं.

दुनिया भर में ऐसे उदाहरणों पर ग़ौर करें तो देखने को मिलता है कि जहां भी क्रांतिकारी ताक़तों ने परिवर्तन थोपने की कोशिश की और उसके लिए हिंसा का रास्ता अपनाया, वहां या तो ऐसी ताक़तों को ख़त्म कर दिया गया या फिर उन्होंने उदारवादी लोकतंत्र का रास्ता चुन लिया. वे चाहे फासिस्ट, नाज़ी, कम्युनिस्ट या फिर कोई भी विचार हो, सभी को लोकतंत्र के मूल्यों ने पराजित किया, क्योंकि वह लोगों को अपना भविष्य ख़ुद तय करने का विकल्प देता है. उदारवादी लोकतंत्र की यह जीत भले ही डेनियल बेल के *एंड ऑफ आइडियॉलोजी* या फिर फ्रांसिस फूकोयामा की *एंड ऑफ हिस्ट्री* पर मुहर नहीं लगाती. हां, इससे इतना ज़रूर साबित होता है कि अन्य विचारधाराओं को इसके अनुरूप अपने आप को ढालने की ज़रूरत है.

अहम बात यह है कि ऐसे समय में जब दुनिया में सरहद का अस्तित्व ख़त्म हो रहा है और विज्ञान का अभूतपूर्व विकास हुआ है, आज संप्रभु राज्यों के सामने बड़ी चुनौती है. इंटर कांटिनेंटल बैलिस्टिक मिसाइल, अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं और क़ानून, इंटरनेट और अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद ने नेशन–स्टेट की क्षमता पर लगाम लगाई है. ज़ाहिर है, ऐसे में कैसे कोई संप्रभु सरकार अपने नागिकों की रक्षा आतंकवादियों के अप्रत्याशित ख़तरों से कर सकती है.

अब यह महसूस होने लगा है कि नेशन–स्टेट आज के राजनीतिक और आर्थिक पटल पर कालबाह्य (आउटडेटेड) हो चुका है और आज ज़रूरत इस बात की है कि हम इससे आगे बढ़ कर सरहद के बिना की वैश्विक दुनिया के बारे में सोचें. संयुक्त राष्ट्र को और शक्तियां देने की ज़रूरत है और राज्यों को चाहिए कि वे संयुक्त राष्ट्र को प्रभावी बनाने के लिए ख़ुद में निहित शक्तियों को इस संस्था में निहित करें. आज की वैश्विक समस्याओं का समाधान भी वैश्विक होना चाहिए. लिहाज़ा, राष्ट्र–राज्यों को चाहिए कि वे अपने कृत्यों को सामंजस्य में रख कर अपने नए दुश्मनों से लड़ें.

ध्यान देने वाली बात यह है कि इस जटिल अंतर–स्वतंत्रता वाले समय में, केवल व्यापार ही ऐसा क्षेत्र है जहां पूंजी की गतिशीलता तो बनी रहती है, लेकिन मज़दूरी की नहीं. साथ ही, सैन्य तरीक़े से भी देखें, तो विश्वयुद्ध के पहले के दिनों का अंतर–स्वातंत्र्य भी देखने को नहीं मिलता. यह छोटे राज्यों के लिए अधिक मायने रखता है, न कि बड़े राज्यों के लिए जो अब भी अपनी ज़रूरत का 80 से 90 फ़ीसदी हिस्सा पैदा करते और खा लेते हैं, न कि उसे बाक़ी दुनिया से साझा करते हैं. जो भी हो, केनेथ एन वाल्ट्ज के शब्दों में, *एक अबूझ ताक़त ही दुनिया को चलाती है.* कई बार चीज़ें उस तरह से इच्छित या निर्देशित नहीं होतीं, जिस तरह वे घटती हैं. आप चाहें या न चाहें, प्रभावित आपको होना ही है. आपको बाक़ी देशों के संघ से जुड़ना है या फिर नष्ट हो जाना है, फ़ैसला आपको करना है. *वर्ल्ड वैल्यू सर्वे* की एक गणना के मुताबिक इतिहास के इस समय पर दुनियाभर में लोकतंत्र की अत्यंत सकारात्मक छवि है. वहीं फ्रीडम हाऊस की एक रिपोर्ट के मुताबित दुनिया भर के दो–तिहाई लोकतांत्रिक देशों में चुनाव कराए जाते हैं. 1930 और 40 के दशक की तुलना में यह एक नाटकीय बदलाव है, जब फासीवादी ताक़तों ने कई समाजों में बेहद सफलता पाई और कई दशकों तक साम्यवादी तबके को भी भरपूर समर्थन मिला. अब जब यह दिखता है कि लोकशाही प्रशासन का सबसे बेहतर तरीक़ा है, तो हम हमें यह सुनिश्चित करने की ज़रूरत है कि यही बात पूरे प्रशासनिक ढांचे में भी दिखे. अगर ज़रूरत हो, तो उसमें स्थानीय स्तर के हिसाब से ढाला जा सके. एक राजनीतिक विश्लेषक हुए हैं, बेंजामिन बार्बर. उन्होंने 2003 में ही कहा था कि जिहाद और मैक् वर्ल्ड (यानी आज की नव–उदारवादी दुनिया) को अंतरराष्ट्रीय नागरिक समाज के पक्ष में ही जीता जा सकता है, बशर्ते इस दुनिया में लोकशाही अपना परचम पूरी तरह फहरा दे. तो, आख़िर आज हमारी ज़रूरत क्या है? हमें उन ख़तरनाक आतंकियों से निबटना है और वह भी देशों के एक समूह के तौर पर. शायद यह काम संयुक्त राष्ट्र के तहत किया जा सके. साथ ही हमें, उन पुनरुत्थानवादी ताक़तों से भी निबटना होगा, जो उदारवादी लोकशाही में सक्रिय हैं.

(लेखक प. बंगाल में आईएएस अधिकारी हैं. आलेख में व्यक्त विचार उनके अपने हैं और इनका सरकार के विचारों से संबंध नहीं है.)

feedback@chauthiduniya.com

नरेगा : सफलता कम शोर ज़्यादा

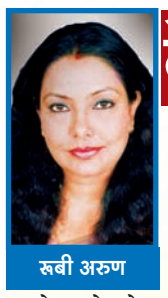

रूबी अरुण

केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री सीपी जोशी इन दिनों बेहद उत्साह में हैं. वह नरेगा को नए अवतार में पेश करने को लेकर ज़ोर-शोर से जुट गए हैं. इसकी ख़ातिर नरेगा के क़ानून में भी फेरबदल किया गया है. वह भी केंद्रीय ग्रामीण रोज़गार परिषद में चर्चा कराए बग़ैर. पूर्व ग्रामीण विकास मंत्री रघुवंश प्रसाद सिंह को आशंका है कि इससे नरेगा का मूल स्वरूप ही बिगड़ जाएगा. इसके अलावा उन्हें नरेगा के नए रूप में अवतरित होने से केंद्र और राज्य सरकारों के बीच टकराव होने का भी संशय है. क्योंकि अब नरेगा में मज़दूरों से सीमांत और लघु किसानों के खेतों में भी काम कराया जा सकता है. ऐसे में न्यूनतम मज़दूरी को लेकर राज्य सरकारें केंद्र सरकार के सिर पर ठीकरा फोड़ेंगी. मशीनों का उपयोग बढ़ेगा और ठेकेदार दखलंदाज़ी करेंगे. ज़ाहिर है, टकराव बढ़ेगा. ग़ौरतलब है कि नरेगा को रघुवंश प्रसाद ने ही 2006 में अपने मंत्रीत्वकाल में लागू कराया था.

लेकिन सीपी जोशी को इन बातों की परवाह नहीं है. वह बेहद उत्साहित हैं. वह कहते हैं कि उनकी और सरकार की मंशा बस इतनी है कि नरेगा से ज़्यादा से ज़्यादा ग़रीब फ़ायदा उठा सकें. इरादा तो नेक है, पर क्या यह सचमुच इतना कामयाब या फ़ायदेमंद साबित हुआ है, जितनी उम्मीद की जा रही है या फिर जिसका ढिंढोरा पीटा जा रहा है? प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने तो स्वतंत्रता दिवस पर लाल किले के प्राचीर से यह घोषणा भी कर दी कि अब तक इससे चार करोड़ परिवारों को फ़ायदा हुआ है और ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचागत सुविधाएं सुधरी हैं. लिहाज़ा ग़रीबों के लिए रोज़गार के इस कार्यक्रम में और अधिक पारदर्शिता और जवाबदेही लाई जाएगी. पर क्या सचमुच तस्वीर ऐसी ही गुलाबी-गुलाबी सी है? नरेगा की केंद्रीय समिति के सदस्य प्रो. ज्यां द्रेज इस कार्यक्रम की सफलता के बारे में पूछने पर टिप्पणी से इंकार कर देते हैं. पर वह यह ज़रूर कहते हैं कि जो ख़ुशनुमा तस्वीर दिखाई जा रही है, उसका कोई ठोस आधार नहीं है. आज भी यह योजना क़दम दर क़दम संघर्ष कर रही है. इसके सफल होने की संभावना तो ज़रूर है, पर यह कहना जल्दबाज़ी होगी कि इसने सफलता के मानकों को पार कर लिया है. जो सरकारी आंकड़े पेश किए जा रहे हैं वे यक़ीन के लायक नहीं हैं. ज्यां द्रेज बताते हैं कि राजस्थान और दक्षिणी राज्यों में स्थिति ज़रूर बेहतर है. लेकिन बिहार, झारखंड और उड़ीसा जैसे राज्यों में इस योजना पर स्वार्थी तत्वों का क़ब्ज़ा है. ख़ास कर झारखंड में हालत बेहद ख़राब है. नौकरशाहों ने नरेगा को एक ऐसी बेबस और लाचार योजना में बदल दिया है, जिसकी चाभी उनके हाथों में है. इसका सबसे बड़ा उदाहरण केंद्रीय नियोजन गारंटी परिषद का लकवाग्रस्त हो जाना है. केंद्र और राज्य सरकारों ने धारा-30 का भी उल्लंघन किया है, जिसके तहत प्रावधान है कि अगर मज़दूरी भुगतान में देरी होती है तो मज़दूरों को मुआवज़ा दिया जाए. धारा 19 को भी नज़रअंदाज़ किया गया, जिसके तहत शिकायत निवारण नियम बनाए जाने थे. मतलब साफ है कि यूपीए सरकार की सबसे महत्वाकांक्षी योजना भी लालफीताशाही से नहीं बच सकी. इसके बावजूद, सरकार अपनी कामयाबी के ढोल पीट रही है.

भारत के नियंत्रक और महालेखा-परीक्षक ने उत्तर प्रदेश और अन्य राज्यों के बारे में जो रिपोर्ट सौंपी है, उसमें साफ तौर पर नरेगा के कार्यान्वयन में कमी की बात कही गई है. उत्तर प्रदेश विधानसभा में 2008-09 के लिए प्रस्तुत प्रतिवेदन में महालेखा परीक्षक ने मस्टर रोल में हेरफेर, ग़लत भुगतान, एक ही मज़दूर को कई अलग-अलग जगहों से भुगतान, साथ ही मज़दूरी भुगतान में तीन से 286 दिनों तक के विलंब सहित अनेक गड़बड़ियों की तरफ़ इशारा किया गया है. इसके अलावा राज्यों की हरेक पंचायत में एक रोज़गार सहायक की नियुक्ति की जानी थी, पर मौजूदा अभिलेखों से पता चला कि एक तिहाई ग्राम पंचायतों में इनकी नियुक्तियां हुई ही नहीं. कई मज़दूरों को एक ही दिन में दो-दो, तीन-तीन जगहों पर काम करते हुए दिखाया गया है. सबसे बड़ी बात यह कि नरेगा का जो मुख्य उद्देश्य है, कि ग़रीबों को घर के पास ही आजीविका उपलब्ध कराई जाए, वही पूरा नहीं हो पा रहा. वक़्त पर मज़दूरी न मिलने से यह मक़सद अधूरा रह जा रहा है. नरेगा की योजनाओं पर अरबों रुपये पानी की तरह बहाए जा रहे हैं. हर वर्ष दस हज़ार करोड़ रुपये नरेगा के विभिन्न कार्यक्रमों पर ख़र्च किए जा रहे हैं, पर इसका फ़ायदा ज़रूरतमंदों को नहीं मिल पा रहा. ख़ुद कांग्रेस महासचिव राहुल गांधी इस लूट-खसोट की बात स्वीकारते हैं. राहुल ने अक्सर अपने बयानों में इस बात को स्वीकारा है कि ऐसी योजनाओं की कुल राशि का महज़ दस पैसा ही ज़रूरतमंदों तक पहुंच पाता है. भाजपा नेता रविशंकर प्रसाद कहते हैं कि राहुल का यह बयान दुर्भाग्यपूर्ण है. यह देश की ग़रीब जनता के साथ छलावा है. सरकार उनकी है. मशीनरी उनकी है, फिर भी वह यह राग आलाप रहे हैं तो इससे दुखदायी कुछ नहीं हो सकता.

नरेगा के केंद्रीय समिति के सदस्य ज्यां द्रेज कहते हैं कि नरेगा ने यूपीए के पक्ष में थोड़ी गुडविल ज़रूर हासिल की. लेकिन इस योजना को अमली जामा पहनाने में इतनी गड़बड़ियां हैं जो लोगों की नाराज़गी के लिए काफ़ी हैं. नरेगा सही और निर्बाध तरीक़े से देश भर में लागू हो सके और इसमें कम से कम गड़बड़ियां हों, इसकी ख़ातिर सबसे अहम है कि सरकार एक मज़बूत और सशक्त शिकायत निवारण समिति का गठन करे. क़ानून में शामिल जवाबदेही संबंधी प्रावधानों पर कड़ाई से नज़र रखी जाए. नरेगा सरकार का फ्लैगशिप प्रोग्राम है. फिर भी उसके साथ मज़ाक किया जा रहा है.

पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन के अध्यक्ष डॉ. विमल जालान ने नेशनल काउंसिल आफ एप्लायड इकॉनोमिक रिसर्च के सहयोग से नरेगा के क्रियान्वयन से जुड़े साक्ष्यों तथा अब तक की उपलब्धियों का ब्योरा जमा किया है. वह बताते हैं कि नरेगा तभी ग़रीबों के लिए लाभकारी साबित होगा, जब इसकी कार्यप्रणाली कुशल बनाई जाएगी. देश में ऐसी आसान ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना की ज़रूरत है जो जटिल औपचारिकताओं से मुक्त हो. तभी आम आदमी इसका लाभ उठा सकता है. फ़िलहाल यह प्रक्रिया नौकरशाही की जकड़ में है, जिसके लिए बहुत सारी काग़ज़ी कार्रवाई करनी पड़ती है. रोज़गार कार्ड जारी करने के लिए निष्पक्ष और स्वतंत्र कार्यप्रणाली की भी ज़रूरत है.

नरेगा के कार्यान्वयन में भ्रष्टाचार किस हद तक पैठ बनाए हुए है, यह इस बात से समझा जा सकता है कि जिस राजस्थान में कांग्रेस की सरकार नरेगा के दम पर आने का दावा करते नहीं अघा रही है, वहां से महज़ 90 दिनों में 700 शिकायतें प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति तक पहुंची हैं. प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति ने राजस्थान सरकार से इस बाबत जवाब तलब किया है. नरेगा के सहारे सत्ता में आने वाली गहलोत सरकार भी शिकायतों की संख्या से हैरान है. संभवतः राज्य में यह पहली ऐसी योजना है, जिसने शिकायतों का यह रिकार्ड बनाया है. हालत यह है कि अब नरेगा की योजनाएं सरकार के क़ाबू के बाहर हो गई हैं. राजस्थान में नरेगा में किस कदर महाघोटाला हो रहा है, वह आंकड़ों से ही ज़ाहिर है. राजस्थान में 2008-09 में नरेगा से संबंधित 11536 शिकायतें दर्ज़ की गई हैं. 2009-10 की शुरुआत में ही आठ हज़ार शिकायतें दर्ज़ हो चुकी हैं. इसके अलावा देश भर से नरेगा से संबंधित शिकायतों का भी अंबार लगा हुआ है. सरपंचों के स्तर से भी गड़बड़ियों की बहुतेरी शिकायतें आ रही हैं. सरपंच नियमों के विपरीत लोगों को लाभ दे रहे हैं. राजनीतिक निहितार्थ के तहत सारा खेल हो रहा है. लिहाज़ा, सरकारी अधिकारी भी राजनीतिक दबाव के आगे नतमस्तक हो जा रहे हैं. जॉब कार्ड में नाम किसी का और काम करने वाला होता है कोई और. जॉब कार्ड में फोटो बदल कर भी धोखाधड़ी की जा रही है. मज़दूरी के भुगतान में कमीशन लेना तो अब आम बात हो गई है. काग़ज़ी काम ज़्यादा है, लिहाज़ा ग़रीब और अनपढ़ महिलाओं को खाता खोलने में ख़ासी मशक्कत करनी पड़ती है. बिहार के गया और मुज़फ्फरपुर ज़िलों की दलित महिलाओं की शिकायत है कि काम वे करती हैं और उनकी मज़दूरी का पैसा सवर्णों में बांट दिया जाता है. यही नहीं, कार्यस्थल के निर्धारण में भी दलित और सवर्णों के आधार पर भेदभाव किया जाता है. उन्हें जातीय समूहों में बांट कर काम का निर्धारण किया जाता है. हज़ारों ऐसे मामले हैं, जिनमें यह बात सामने आई है कि जहां दलित परिवारों के एक भी सदस्य को काम नहीं मिला है वहीं सवर्णों के एक-एक परिवार के कई-कई सदस्यों को रोज़गार मुहैया कराया गया है. यही हाल उत्तर प्रदेश में भी है. आज़मगढ सहित उत्तर प्रदेश के कई इलाक़ों के नरेगा से संबंधित रजिस्टर अगर चेक कर लिए जाएं, तो पता चलेगा कि हर साल एक ही तालाब में और एक ही सड़क पर मिट्टी डाल कर उसे भरा जाता है और फिर उसी तालाब की खुदाई दिखा दी जाती है, सड़क को जर्जर दिखा दिया जाता है. सैकड़ों गांवों में मज़दूरों की कमी है. मज़दूर किसान संगठन की अरुणा राय कहती हैं कि पुराने प्रावधानों में ही काफी अंधेरगर्दी मची थी. अब जबकि नरेगा में ग्रामीण मज़दूर सीमांत और लघु किसानों के खेतों पर भी काम करेंगे तो लूट और मचेगी. इसलिए केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री चंद्र प्रकाश जोशी को चाहिए कि सबसे पहले वह भंग केंद्रीय रोज़गार गारंटी परिषद को तुरंत गठित करें, ताकि नरेगा के कार्यान्यवन में फैले भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाया जा सके.

ruby@chauthiduniya.com

फोटो-प्रभात पाण्डेय

भारत के नियंत्रक और महालेखा-परीक्षक ने उत्तर प्रदेश और अन्य राज्यों के बारे में जो रिपोर्ट सौंपी है, उसमें साफ तौर पर नरेगा के कार्यान्वयन में कमी की बात कही गई है. उत्तर प्रदेश विधानसभा में 2008-09 के लिए प्रस्तुत प्रतिवेदन में महालेखा परीक्षक ने मस्टर रोल में हेरफेर, ग़लत भुगतान, एक ही मज़दूर को कई अलग-अलग जगहों से भुगतान, साथ ही मज़दूरी भुगतान में तीन से 286 दिनों तक के विलंब सहित अनेक गड़बड़ियों की तरफ़ इशारा किया गया है.

नरेगा पर माकपाइयों का क़ब्ज़ा

पश्चिम बंगाल में नरेगा पर माकपाइयों का क़ब्ज़ा है. कई ज़िलों में नरेगा की राशि से माकपा ने अपने कार्यालय भवन का निर्माण करा लिया है. हुगली ज़िले के 65 फ़ीसदी मज़दूरों को साल में 21 दिन भी काम नहीं मिला. पुरुलिया में 40 हज़ार मज़दूरों को साल में एक दिन भी काम नहीं मिला. मालदह में नरेगा के लिए आई राशि में से आधी भी ख़र्च नहीं हुई. बांकुड़ा में तो 90 करोड़ में से महज़ 35 करोड़ रुपये का ही इस्तेमाल हो सका. पश्चिमी मेदिनीपुर के दासपुर ब्लॉक के विकास अधिकारी कल्लोल सूर पर माकपा वाले पंचायत ने नरेगा की राशि की नाजायज़ वसूली को लेकर इतना दबाव डाला कि उन्होंने आत्महत्या कर ली. इस मामले में माकपा के पंचायत प्रधान कार्तिक मंडल और नेता अजय भौमिक पर प्राथमिकी भी दर्ज़ की गई थी. कई ज़िलों से ऐसी भी शिकायतें आईं कि मज़दूरों को मज़दूरी के बाद भी उनका मेहनताना नहीं मिला. यानी उनके पैसे माकपाइयों ने हड़प लिए. कहने का मतलब यह कि नरेगा के बहाने राज्य में ज़बरदस्त लूट-खसोट मची हुई है, पर पश्चिम बंगाल सरकार को इस बात की कोई परवाह नहीं है. केंद्र सरकार की तरफ़ से प्रणव मुखर्जी ने एक बयान जारी कर बंगाल में नरेगा कार्यक्रमों की बदहाली को लेकर राज्य सरकार की आलोचना भी की है. संसदीय चुनाव प्रचार में कांग्रेस महासचिव राहुल गांधी और अध्यक्ष सोनिया गांधी ने भी राज्य सरकार की आलोचना की थी. लेकिन नतीजा कुछ नहीं निकला. वहां के मज़दूर आज भी दाने-दाने को मोहताज हैं और बदहाली का जीवन जीने को विवश हैं. केंद्र की इस कल्याणकारी योजना की एक किरण भी उनकी ज़िंदगी को छू तक नहीं सकी है. पश्चिम बंगाल सरकार इस योजना के प्रति इतनी उदासीन है कि केंद्र के सहयोग और उपलब्ध कराई गई राशि के बावजूद वहां आज तक नरेगा के पंजीकरण तक की माकूल व्यवस्था नहीं है. रोज़गार कार्ड, मस्टर रोल बनाने में भारी अनियमितता है. मज़दूर को खाता खुलवाने में एड़ियां रगड़नी पड़ जाती हैं. पर राज्य सरकार को इन बातों से कोई लेना-देना नहीं है. न ही केंद्र सरकार आगे बढ़ कर कोई क़दम उठा रही है.

झारखंड में बदतर हालात

जब से नरेगा लागू हुआ है, झारखंड में बजाय तरक़्क़ी और सुख-शांति के ख़ून-ख़राबे का माहौल हो गया है. पिछले तीन सालों के दौरान सामाजिक कार्यकर्ता ललित मेहता की हत्या, हज़ारीबाग के तापस सोरेन की आत्मदाह, बुंडू में तूरिया मुंडा की आत्महत्या आदि की घटनाओं ने प्रदेश को दहला कर रख दिया है. नरेगा यहां घोर विफलता से जूझ रहा है. हालांकि यहां नरेगा को सुचारू रूप से लागू कराने की तमाम कोशिशें भी हुई हैं. देश में यह पहला प्रदेश है जहां लोक अदालत की तर्ज़ पर नरेगा अदालत लगाई गई है और जिसमें हाई कोर्ट के जस्टिस भी मौजूद रहते हैं. नरेगा अधिनियम के तहत यहां योजना के प्रति लापरवाह अधिकारियों पर जुर्माना भी लगाया गया है. फिर भी यहां नरेगा विफल साबित हुआ है. सरकारी स्तर पर भ्रष्टाचार का बोलबाला है. छह महीने में नरेगा के तीन-तीन आयुक्त बदल दिए जाते हैं. ढीले-ढाले अधिकारियों के कारण बिचौलियों की पौ बारह रहती है. हालांकि गांवों में अब थोड़ी बहुत जागरूकता आने लगी है . मज़दूरी की रक़म भी तय सरकारी मानकों के मुताबिक पहुंच रही है. पर सबसे बड़ी दिक़्क़त है मज़दूरों को काम मिलना. यहां के माओवादियों ने भी इस योजना पर नज़र रखनी शुरू कर दी है. वे जगह-जगह पोस्टर चिपका कर लोगों और सरकार को आगाह कर रहे हैं कि इस योजना से दलालों को दूर रखें. कमीशन न दें. इस योजना के सूत्रधारों में एक प्रो. ज्यां द्रेज झारखंड में इस योजना को सफल बनाने के लिए शुरुआत से ही दल-बल सहित डेरा डाले हुए हैं. वह कहते हैं कि झारखंड में इसे सफल बनाने हेतु जिस राजनैतिक इच्छाशक्ति और सोच की ज़रूरत है, वही शुरू से नदारद रही है. यही वजह है कि यह इस कदर विफल रहा है.

पंजाब में पैसे हैं, पर ख़र्च नहीं

पंजाब की हालत भी झारखंड से अलग नहीं है. कुछ दिनों पहले केंद्र सरकार ने पंजाब को नरेगा के मद में जारी की गई राशि ख़र्च नहीं करने पर लताड़ा था. तब मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल ने आनन-फानन में अधिकारियों की बैठक बुलाई और नरेगा मद के एक हज़ार करोड़ रुपये को ख़र्च करने के आदेश दिए. यहां कड़वी हक़ीक़त यह है कि मज़दूरों की तादाद बेहद कम है. जो भी मज़दूर हैं, वे मशीन से काम करते हैं. ऐसी स्थिति में एक हज़ार करोड़ रुपये को भला कहां ठिकाने लगाया गया? यह एक बड़ा सवाल है.

ग्रामीण विकास और पंचायत विभाग से मिले आंकड़ों के मुताबिक पंजाब में साल 2007-08 के दौरान जालंधर, नवांशहर, अमृतसर और होशियारपुर ज़िलों में ही यह योजना लागू हो पाई थी. 2008-09 के दौरान सभी ज़िलों में यह योजना लागू कर दी गई. लेकिन इस दौरान पंजाब सरकार ने केंद्र द्वारा भेजी गई राशि में प्रदेश का फंड नहीं मिलाया. राज्य के दस ज़िलों के नरेगा के तहत काम होना था. यानी राज्य सरकार अपनी ज़िम्मेदारियों से विमुख रही. लिहाज़ा काम माकूल तरीक़े से नहीं हो सका. इसके अलावा बिहार और उत्तर प्रदेश से पंजाब आने वाले मज़दूरों की संख्या भी कम रही. इस वज़ह से मौजूद फंड भी ख़र्च नहीं हो सका. 2008-09 में केंद्र सरकार ने पंजाब को 6449.57 लाख रुपये और 2007-08 में 2819.47 लाख रुपये दिए. लेकिन इनमें से महज़ 7465.21 लाख रुपये ही ख़र्च किए जा सके. सहज ही समझा जा सकता है कि यहां भी नरेगा का हश्र बुरा ही हुआ. हालांकि बिहार, हरियाणा, मध्य प्रदेश, उत्तराखंड आदि राज्यों में नरेगा ने सफलता के मानदंड भी बनाए हैं. इन राज्यों में मज़दूरों को रोज़गार भी मिला है और उनका पलायन भी रुका है. केंद्र द्वारा दी गई राशि का समुचित उपयोग भी इन राज्यों ने किया है. फिर भी पूरी तरह यह योजना नौकरशाहों के चंगुल से आज़ाद नहीं हो सकी है. इसकी वज़ह से भ्रष्टाचार की गुंज़ाइश बनी रहती है. सरकार अब नरेगा को नए कलेवर में पेश कर रही है. अगर सरकार की नीयत वाकई नेक है और वह चाहती है कि ग़रीबों को इस योजना का भरपूर लाभ मिल सके तो उसे इस योजना में सिर्फ़ कथनी में ही नहीं, बल्कि करनी में भी भरपूर पारदर्शिता लानी पड़ेगी.

राजकुमार शर्मा

उपचुनाव में निशंक की प्रतिष्ठा दांव पर

उत्तराखंड विधानसभा के विकासनगर क्षेत्र में होने वाला उपचुनाव मुख्यमंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक के लिए प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया है. विकासनगर विधानसभा सीट पर उपचुनाव भाजपा विधायक मुन्ना सिंह चौहान के इस्तीफ़े के कारण हो रहा है. उन्होंने हाल में हुए संसदीय आम चुनाव के दौरान भाजपा को छोड़ कर बसपा का दामन थाम लिया था. बसपा के टिकट पर लोकसभा का चुनाव भी लड़ा, लेकिन कामयाबी नहीं मिली. ग़ौरतलब है कि यहां 10 सितंबर को होने वाले उपचुनाव का परिणाम 14 सितंबर को आ जाएगा.

विकासनगर सीट पर भाजपा का क़ब्ज़ा शुरू से रहा है. लेकिन अबकी भाजपा के सामने इस परंपरागत सीट को बचाने की गंभीर चुनौती है. वैसे अगर देखा जाए, तो यह भाजपा से अधिक मुख्यमंत्री निशंक की प्रतिष्ठा से अधिक जुड़ गया है. इस चुनाव में एक बार फिर राज्य की मुख्य विपक्षी पार्टी कांग्रेस से भाजपा का सीधा मुक़ाबला होगा. संसदीय आम चुनाव में पांचों संसदीय सीट पर कांग्रेस ने सफलता पाई थी. इससे राज्य के कांग्रेसियों में आया उत्साह आज भी बरकरार है. उधर, लोकसभा की एक भी सीट नहीं जीत पाने के कारण भाजपा ने भुवन चंद्र खंडूरी की जगह निशंक को मुख्यमंत्री बना लिया. मुख्यमंत्री के तौर पर निशंक के सामने विकासनगर का उपचुनाव पहला कोई चुनाव है, जिसे उन्हें जीत कर पार्टी की साख बचानी है.

विकासनगर उपचुनाव में कांग्रेस अपने पूर्व कैबिनेट मंत्री नवप्रभात को चुनाव मैदान में उतारने का मन बना चुकी है. जबकि भाजपा में उम्मीदवार चयन को लेकर स्थिति अभी साफ नहीं है. दिल्ली से देहरादून तक अंदरूनी कलह से परेशान भाजपा के लिए किसी एक नाम पर पार्टी में सहमति बनाना आसान भी नहीं है. ऐसे में निशंक के समक्ष एक ओर जहां इस परंपरागत सीट पर क़ब्ज़ा बनाए रखने की चुनौती है, वही सरकार व संगठन स्तर पर उठे आपसी विवादों को दबाते हुए चुनाव जिताने की ज़िम्मेदारी भी है. इस चुनाव में भाजपा के लिए कभी युवा तुर्क कहे जाने वाले मुन्ना सिंह चौहान भी अबकी अपनी पुरानी पार्टी को सबक़ सिखाने के मूड में हैं. भाजपा को अलविदा कह चुके मुन्ना सिंह का यह रुख़ निश्चय ही उपचुनाव में गुल खिलाएगा.

राजनीति के जानकार मानते हैं कि इस उपचुनाव का नतीजा चाहे जो भी रहे, लेकिन भाजपा से बसपा में गए मुन्ना सिंह चौहान के राजनैतिक करियर के लिए यह निर्णायक साबित होगा. वर्तमान विधानसभा के लिए भाजपा के टिकट पर यहां से चुनाव जीते मुन्ना ने यहीं से बसपा के टिकट पर संसदीय चुनाव लड़ने के लिए दो अप्रैल को विधानसभा की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया था.

वर्ष 2007 में हुए विधानसभा चुनाव में सात दलों के प्रत्याशियों के मध्य हुए मुक़ाबले में भाजपा के मुन्ना सिंह चौहान ने 29297 मत पाकर कांग्रेस नेता और तत्कालीन सरकार में कैबिनेट मंत्री रहे नवप्रभात को हराया था. तब नवप्रभात को 24141 मत प्राप्त हुए थे. उस चुनाव में तीसरे स्थान पर बसपा के क़ादिर हुसैन रहे थे, जिन्हें 8842 मत मिले थे. चौथे स्थान पर एनसीपी के रघुनाथ सिंह और पांचवें स्थान पर निर्दलीय प्रत्याशी विपुल जैन रहे थे. जबकि सपा छठे और यूकेड अंतिम स्थान पर रही थी. सपा प्रत्याशी प्रकाश सिंह को मात्र 1636 मत मिले थे. उस चुनाव में सबसे ख़राब प्रदर्शन यूकेडी के प्रत्याशी गुलफाम अली का रहा था, जिन्हें महज़ 523 वोट ही मिले थे.

कांग्रेस ने विगत दिनों संपन्न संसदीय चुनाव में जिन 51 विधानसभा क्षेत्र में शानदार प्रदर्शन किया था, उनमें विकासनगर विधानसभा क्षेत्र भी है. इस चुनाव में जहां एक ओर भाजपा के खेमे में कोई उत्साह नज़र नहीं आ रहा है, वहीं कांग्रेस का हर नेता उत्साह से भरा है और अभी से नवप्रभात की शानदार जीत का दावा कर रहा है. भारतीय जनता पार्टी के गिरे हुए मनोबल का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है, कि पार्टी में बतौर प्रत्याशी किसी का नाम शुरुआती स्तर पर भी नहीं चल रहा है. कहा तो यहां तक जा रहा है कि भाजपा को अबकी यहां के लिए कोई अच्छा प्रत्याशी ही नहीं मिल रहा है. राजनीति के जानकार मानते हैं कि इस उपचुनाव का नतीजा चाहे जो भी रहे, लेकिन भाजपा से बसपा में गए मुन्ना सिंह चौहान के राजनैतिक करियर के लिए यह निर्णायक साबित होगा. वर्तमान विधानसभा के लिए भाजपा के टिकट पर यहां से चुनाव जीते मुन्ना ने यहीं से बसपा के टिकट पर संसदीय चुनाव लड़ने के लिए दो अप्रैल को विधानसभा की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया था. इसलिए उनके इस्तीफ़े के कारण हो रहे इस उपचुनाव में मुन्ना का भी राजनैतिक करियर भी दांव पर लग गया है. वैसे तो यह उपचुनाव पूरी तरह से कांग्रेस और भाजपा के मध्य माना जा रहा है, लेकिन मुन्ना सिंह चौहान इस चुनाव में तीसरा कोना बनने को आतुर हैं. कांग्रेस के नेता विजय सारस्वत कहते हैं कि भाजपा ने प्रत्याशी तो अभी तय नहीं किया है, लेकिन सरकारी मशीनरी का इस्तेमाल करने में मुख्यमंत्री निशंक ज़रूर जुट गए हैं. उन्हें विश्वास है कि जनता भाजपा के जंगल राज का जवाब इस उपचुनाव में अवश्य दे देगी.

बहरहाल, भुवन चंद्र खंडूरी को उनकी राजनैतिक असफलता के कारण मुख्यमंत्री की कुर्सी से उतार चुकी भाजपा को नए मुख्यमंत्री निशंक से बहुत उम्मीद है. निशंक को जिस हाल में मुख्यमंत्री का पद मिला है, उसमें उनके कंधों पर इस समय संगठन और सरकार की सफलता का भारी ज़िम्मा है. गुटों में बंटी भाजपा के कई नेता अब भी विश्वासघात कर निशंक की साख पर बट्टा लगाने की साज़िश रचने में लगे हैं. मुख्यमंत्री बनने के बाद निशंक का यह पहला इम्तहान होगा, जिसे उन्हें पास करना ही होगा. फेल होने पर उनकी सरकार के लिए बुरे दिन आने तय हैं.

इस विधानसभा क्षेत्र में इस समय मतदाताओं की संख्या 1,11,902 है, जबकि पिछले विधानसभा चुनाव के समय यहां 1,13,076 मतदाता थे. इस विधानसभा क्षेत्र में कुल 165 मतदान केंद्र हैं. पिछले विधानसबा चुनाव में 15 प्रत्याशियों के लिए 72,566 मतदाताओं ने वोट डाले थे. विपक्षी पार्टी कांग्रेस के नेता हरक सिंह रावत को आशंका है कि निशंक सरकार अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग कर सकती है.

बहरहाल, चुनाव आयोग द्वारा जारी कार्यक्रम के अनुसार 17 अगस्त से नामांकन प्रक्रिया शुरू होगी और उसी दिन अधिसूचना भी जारी की जाएगी. 24 अगस्त को नामांकन की अंतिम तिथि होगी. 25 अगस्त को नामांकन पत्रों की अंतिम जांच की जाएगी. 27 अगस्त को नामांकन वापसी का अंतिम दिन होगा. 10 सितंबर को सुबह सात बजे से शाम पांच बजे तक मतदान होगा. चुनाव परिणाम 14 सितंबर को आ जाएगा.

feedback@chauthiduniya.com

पिथौरागढ़ में ज़मीन पर बरसी मौत

देवभूमि उत्तराखंड के लिए प्राकृतिक आपदा एक नियति बन गई है. पिथौरागढ़ ज़िले के ला, झेकला और बेडूमहर गांव में आई आपदा ने रुद्रप्रयाग के ऊखीमठ तहसील में आई ग्यारह वर्ष पहले की भीषण तबाही की याद दिला दी. पिछले एक दशक में आई सरकारों ने आपदा से निपटने के पुख्ता इंतज़ामों के बजाय उनके आने का इंतज़ार ही किया. सरकार की भूमिका सिर्फ़ मुआवज़ा बांटने तक ही सीमित रही. ज़िला मुख्यालय पिथौरागढ़ से क़रीब 90 किलोमीटर दूर मुनश्यारी तहसील के तीन गांवों ला, झेकला और बेडूहार में रात ढाई बजे के क़रीब मौत बन कर फटे बादल ने पूरे गांव में तबाही का मंज़र बिखेर दिया. सात अगस्त की वह रात इन ग्रामीणों के लिए काली रात बन कर आई, जिसमें बादल फटने के बाद हुए भूस्खलन के मलबे में 43 लोग ज़मींदोज हो गए. इस दैवी आपदा का सबसे दुखद पहलू यह रहा कि ला और झेकला गांव में एक भी व्यक्ति जीवित नहीं बचा.

दाफा के ग्रामीणों के अनुसार अगले दिन शनिवार (आठ अगस्त) की सुबह पांच बजे जब वे लोग जागे तो ला और झेकला गांव का नक़्शा ही पूरी तरह से बदला हुआ था. गांव के खेत मलबे से पटे हुए थे. ला गांव में कुल सात परिवार और झेकला गांव में कुल पांच परिवार रहते थे. इनमें से क्रमश: 26 एवं 12 लोग मलबे में दब गए. शनिवार देर रात तक ला गांव में मलबे से चंद्र सिंह, नंदन सिंह, जगदीश, बलवंत, गंगा सिंह, लक्ष्मण सिंह, नवीन सिंह, त्रिभुवन सिंह और तुलसी देवी के शव को निकाला गया. चार शव जल से बह कर जाकुला नदी के किनारे पहुंच गए थे. वहां से कमला देवी, गोविंद सिंह, मोहन सिंह एवं विमला के शव बरामद किए गए. इस तबाही के शिकार मानवों के साथ ही भारी संख्या में पालतू जीव-जानवर भी हुए. सरकारी आंकड़े बताते हैं कि ला गांव में कुल चार दर्जन बकरियां, एक दर्जन बैल, 10 गाय, चार भैंस, दो बछड़े और एक दर्जन के क़रीब कुत्ते-बिल्ली भी काल के गाल में समा गए. इस गांव की पांच सौ नाली (पहाड़ी इलाक़ों में ज़मीन की माप की इकाई) ज़मीन में बोई गई धान, सोयाबीन की फ़सल अब रेत और पत्थरों के ढेर में दफ़न हो गए हैं. झेकला गांव में दो बैल, चार गाय, एक भैंस, चार बाछियां भी मलबे में दब गए. इस गांव की लगभग सौ नाली ज़मीन मलबे में पट गई. इन गांवों को जोड़ने वाले तीन पैदल पुल, पेयजल योजना, हाईटेंशन तार पूरी तरह से तबाह हो गए. फलदार पेड़ों और बाग़-बाग़ीचों का तो कहीं नामोनिशान भी नहीं बचा.

सरकार ने मिलने वाले शवों का मौक़े पर ही पोस्टमार्टम करने की व्यवस्था के साथ 108 आपात वाहन पहुंचा दिए. बेडूमहर गांव पर भी इस आपदा का कहर टूटा, इस गांव के भी लगभग आधा दर्जन लोग मलबे की चपेट में आ कर घायल हो गए.

बार-बार टूटा है कहर

इस जगह के लोग बार-बार आई आपदा को याद कर सिहर उठते हैं. अगस्त 1977 में तवाघाट में 44 लोग मारे गए. वर्ष1983 में धामगांव के दस लोग मलबे में दब गए. वर्ष 1996 में बेरीनाम तहसील के केलकोट और रताली में भूस्खलन से 18 लोगों की मौत हुई थी. 1998 में मालपा गांव के हादसे को लोग आज भी भुला नहीं पाए हैं, इस हादसे में पांच दर्जन कैलाश यात्रियों सहित 100 से अधिक लोगों की मौत हो गई थी. 2000 में पिथौरागढ़ ज़िले के हुडकी गांव में भूस्खलन में 19 लोगों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा था. 2002 में टिहरी ज़िले की घनसाली तहसील की बुढ़ाकेदार क्षेत्र में आई दैवी आपदा में चार गांव के 28 लोग काल के गाल में समा गए थे, उसी वर्ष टिहरी ज़िले के एक गांव में बादल फटने से दस ग्रामीणों की मौत हो गई थी. 2007 में बरम में आई तबाही में डेढ़ दर्जन लोग मारे गए थे. 2008 में भी चमोली ज़िले के हेमकुंड मार्ग पर ग्लेशियर टूट कर गिरने के कारण 11 लोगों की मौत हो गई.

हादसे के बाद बस रस्मअदायगी

मुनश्यारी की आपदा की ख़बर मिलते ही सूबे के मुख्यमंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक उसी दिन घटनास्थल पर पहुंच गए. उनके इस कार्यक्रम के चलते निश्चित रूप से बचाव राहत कार्य में भारी बाधा उत्पन्न हुई. इन आपदाओं में मारे गए लोगों के परिजनों को एक लाख रुपये की सरकारी सहायता दिए जाने पर सूबे का प्रतिपक्ष मुखर हो उठा है. नेता प्रतिपक्ष हरक सिंह रावत कहते हैं कि आपदा प्रबंधन अधिनियम में पहले से यह व्यवस्था है कि आपदा में मारे गए मृतक के परिजनों को एक लाख एवं घायल को पच्चीस हज़ार रुपये ज़िला प्रशासन तत्काल राहत के तौर पर प्रदान करेगा. मुख्यमंत्री के पहुंचने पर आपदा पीड़ितों को कम से कम मृतक के परिजनों को पांच लाख की सहायता देनी चाहिए थी. कांग्रेस के प्रदेश अध्यक्ष यशपाल आर्या कहते हैं कि यह पूरी घटना सरकार और आपदा प्रबंधन की लापरवाही का नतीजा है. उन्होंने कहा कि इस तरह की आपदाओं को रोकने के लिए ठोस उपाय की ज़रूरत है. कांग्रेस के सांसद अजय टम्टा ने दो दिनों तक आपदा प्रभावितों के मध्य सरकार द्वारा रोटी-पानी कपड़ा तक की व्यवस्था न कर पाने पर गहरी आपत्ति व्यक्त करते हुए कहा कि सरकार में बैठे लोग जनहित को भूल कर अपनी नेतागीरी चमकाने में लगे हैं. भारत सरकार में मंत्री हरीश रावत का भी आपदा प्रभावित क्षेत्र में ख़ाली हाथ आना लोगों को पसंद नहीं आया, इस आपदा प्रभावित क्षेत्र में सत्ता एवं विपक्ष के नेता अपने आश्वासन व आरोप-प्रत्यारोप का दौर चला रहे हैं.

पिछले एक दशक में आई सरकारों ने आपदा से निपटने के पुख्ता इंतज़ामों के बजाय उनके आने का इंतज़ार ही किया. सरकार की भूमिका सिर्फ़ मुआवज़ा बांटने तक ही सीमित रही. ज़िला मुख्यालय पिथौरागढ़ से क़रीब 90 किलोमीटर दूर मुनश्यारी तहसील के तीन गांवों ला, झेकला और बेडूहार में रात ढाई बजे के क़रीब मौत बन कर फटे बादल ने पूरे गांव में तबाही का मंज़र बिखेर दिया.

हालांकि आवश्यकता है कि पिथौरागढ़ के संवेदनशील समझे जाने वाले 60 गांवों को कहीं और बसाने एवं आपदा पीड़ितों की हर संभव मदद में दलगत भावना से ऊपर उठ कर कार्य करने की. इस पूरे आपदा प्रभावित क्षेत्र में आईटीबीपी के जवानों ने जिस दरियादिली से लोगों की सेवा की है उससे लोगों में उनके प्रति श्रद्धा की भावना देखी गई.

राजकुमार शर्मा

feedback@chauthiduniya.com

दलित ईसाई भी अनुसूचित जाति में शामिल होंगे!

डॉ. मनहोहन सिंह के नेतृत्व वाली सरकार जल्द ही भारतीय चर्च नेताओं को ख़ुशख़बरी देने वाली है. चर्च सूत्रों के मुताबिक क़ानून व न्याय मंत्री वीरप्पा मोईली अनुसूचित जातियों से संबंधित संवैधानिक आदेश–1950 को चुनौती देने वाला आदेश जारी करने की तैयारी कर रहे हैं. यह वही आदेश है, जिसके आधार पर अनुसूचित जातियों से ईसाई बनने वालों को अनुसूचित जाति का दर्जा नहीं मिल पाया. ग़ौरतलब है कि इस आदेश में केवल हिंदू दलितों को ही यह दर्जा प्राप्त है.

चर्च नेतृत्व दलित ईसाइयों को अनुसूचित जातियों की श्रेणी में शामिल कराने के लिए भारत सरकार पर लगातार दबाव डालता रहा है. पिछले माह आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री वाईएस राजशेखर रेड्डी ने भी दिल्ली स्थित कांग्रेस मुख्यालय में चर्च की इस मांग का समर्थन किया था. साथ ही इस मामले में 1950 के संवैधानिक आदेश को जल्द बदलने की अपील की थी. सूत्रों के मुताबिक संप्रग अध्यक्षा सोनिया गांधी भी चर्च नेतृत्व की इस मांग से सहमत हैं. इस से पूर्व जस्टिस रंगनाथ मिश्र की अध्यक्षता वाले राष्ट्रीय, भाषायी और अल्पसंख्यक आयोग ने धर्मांतरित ईसाइयों को अनुसूचित जाति में शामिल करने का सुझाव दिया है. इस आयोग का गठन भारत सरकार ने उच्चतम न्यायालय के सुझाव पर किया था, जो दलित ईसाइयों को अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल करने को लेकर दायर एक जनहित याचिका पर सुनवाई कर रहा था. याचिका कुछ चर्च समर्थक लोगों एवं संगठनों की है. भारतीय चर्च नेतृत्व पिछले कई दशकों से अनुसूचित जातियों से ईसाइयत में दीक्षित होने वालों के लिए हिंदू मूल के अनुसूचित जातियों के समान ही सुविधाओं की मांग करता आ रहा है. इसलिए कि धर्म बदलते ही अनुसूचित जाति वालों की वे तमाम सुविधाएं ख़त्म हो जाती हैं जो उन्हें हिंदू रहते हुए उपलब्ध होती हैं. इसी कारण अनुसूचित जातियों से ईसाइयत में दीक्षित होने वालों की संख्या उनकी आबादी के हिसाब से आदिवासी समूहों के मुक़ाबले बहुत कम है.

भारत में धर्मांतरण दो कारणों से हुआ है. पहला–सामाजिक–आर्थिक विसंगतियों एवं शोषण के ख़िलाफ़ विक्षोभ तथा दूसरा, लाभ के लिए व्यक्तिवादी सोच. जातिवादी व्यवस्था एवं सामाजिक उत्पीड़न–शोषण से मुक्ति की आशा में ही बड़ी संख्या में अनुसूचित जातियों के लोगों ने ईसाइयत की दीक्षा ली. माना गया कि ईसाइयत में किसी भी प्रकार के जातिवादी भेदभाव या शोषण के लिए कोई स्थान नहीं है. लेकिन चर्च नेतृत्व ने मुक्ति की आशा में आए लोगों को महज़ एक संख्या ही माना और उनके विकास पर ध्यान देने की जगह वह अपना साम्राज्य बढ़ाने में लगा रहा. धर्मांतरित ईसाइयों की इससे बड़ी विडंबना क्या हो सकती है कि जिस चर्च नेतृत्व पर उन्होंने विश्वास करते हुए अपने पूर्वजों के धर्म तक का त्याग कर दिया, उसी चर्च नेतृत्व ने उनकी आस्था के साथ विश्वासघात करते हुए उन्हें वापस उसी जातिवादी व्यवस्था में धकेलने का बीड़ा उठा लिया है.

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

चर्च नेतृत्व ने वंचित वर्गों के बीच अपना आधार ही इस प्रलोभन के तहत बढ़ाया कि ईसाइयत के बीच जाति भेदभाव नहीं है और ईसाई धर्म के बीच दलितों से मत परिवर्तित करके ईसाइयत अपनाने वाले लोगों के साथ समानता का व्यवहार किया जाएगा. ईसाई समाज में समानता के इस स्थान की झूठी आशा में ही दलितों ने ईसाई धर्म अपनाया. यदि आज भी वे दलित हैं तो सवाल उठता है कि अब उनका शोषण–उत्पीड़न कौन कर रहा है? यह सच है कि जब वे हिंदू समाज में थे, तो जाति प्रथा के शिकार थे. लेकिन क्या ईश्वर के समक्ष की गई यह प्रतिज्ञा नहीं थी कि उन्हें (धर्मांतरित ईसाइयों को) बिना किसी भेदभाव के मसीही प्रेम का भागीदार बनाया जाएगा? संविधान निर्माताओं ने जब दलितों के लिए आरक्षण उपलब्ध कराया था तो हिंदुओं, जो कि बहुसंख्यक थे, ने दलितों के आरक्षण को सिद्धांत रूप में स्वीकार किया. संविधान में समानता के अवसर को उन्होंने दलितों के पक्ष में क़ुर्बान कर दिया. इसे बुरे व्यवहार और भेदभाव के मुआवज़े के रूप में, जो उनके पूर्वजों ने दलितों से किया था.

यहां यह कहना ज़रूरी है कि अमेरिका के गोरे ईसाइयों ने काले ईसाइयों के प्रति इस प्रकार की उदारतापूर्ण नीति अपनाने से साफ इंकार कर दिया था. ईसाई समाज में दलितों का होना और उनकी भरपाई की पूरी ज़िम्मेदारी चर्च नेतृत्व की है, क्योंकि ईसाई समाज में सामाजिक भेदभाव उसी की देन है. दलित ईसाइयों के संगठन पुअर क्रिश्चियन लिबरेशन मूवमेंट का मानना है कि यदि चर्च की पूरी शक्ति दलित ईसाइयों के पीछे लगा दी जाए, तो उनके सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में बड़ा परिवर्तन लाया जा सकता है. धर्म परिवर्तन के नाम पर विदेशों से भेजी जा रही अकूत धनराशि का सदुपयोग यदि उनके विकास पर ख़र्च किया जाए तो उनके जीवन में परिवर्तन लाया जा सकता है, लेकिन सत्य कुछ और ही है. चर्च केवल अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य को ही सर्वोपरि रखता है. जस्टिस रंगनाथ मिश्र की अध्यक्षता वाले राष्ट्रीय, भाषायी और अल्पसंख्यक आयोग की सिफ़ारिशों को अगर सरकार मानकर दलित ईसाइयों को अनुसूचित जाति की सूची में शामिल कर भी लेती है, तो इसका लाभ चर्च नेतृत्व को ही होगा. देश में पहले से जारी धर्मपरिवर्तन के कार्य में बहुत तेज़ी आएगी. अगर ऐसा हुआ तो देश में अनावश्यक तनाव भी बढ़ेगा. जैसा कि उड़ीसा के कंधमाल में पिछले वर्ष हुए दंगों की जांच करने वाले आयोग के अध्यक्ष जस्टिस एससी महापात्रा ने अपनी अंतरिम रिपोर्ट में कहा है. चर्च नेतृत्व दलित ईसाइयों के साथ दोहरा खेल खेलता रहा है. एक तरफ़ वह हिंदू दलितों को हिंदू समाज में फैली कुरीतियों, छुआछूत, उत्पीड़न, भेदभाव आदि का भय एवं प्रलोभन दिखाकर अपने पाले में लाता रहा है. दूसरी तरफ़ वह फिर उन्हें हिंदू दलितों की सूची में शामिल कराने के लिए हर हथकंडा अपना रहा है. इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि जो करोड़ों दलित अपनी सरकारी सुविधाएं छोड़कर समानता की तलाश में चर्च की शरण में आए हैं, वे चर्च संस्थानों एवं चर्च के अन्य संसाधनों में अपनी हिस्सेदारी की भी मांग कर रहे हैं. इसलिए कि चर्च नेतृत्व उनके साथ हर क्षेत्र में भेदभाव कर रहा है. कई सरकारी समितियों और आयोगों की रिपोर्ट में यह बात सामने आई है कि धर्मांतरित ईसाइयों की स्थिति हिंदू दलितों से ज़्यादा ख़राब है. समाज के अलावा चर्च संगठनों में भी वह छुआछूत जैसी बुराई है. यही कारण है कि पुअर क्रिश्चियन लिबरेशन मूवमेंट ने वैटिकन एवं भारतीय चर्च नेतृत्व से दलित ईसाइयों को मुआवज़ा देने की मांग की है.

हज़ारों स्कूलों, कॉलेजों एवं अन्य संस्थानों का संचालन करने, ग़रीबों के विकास के नाम पर विदेशों से हज़ारों करोड़ विदेशी अनुदान लेने वाले चर्च नेतृत्व के अनुयायी इतनी दयनीय स्थिति में क्यों हैं? इसका जवाब चर्च नेतृत्व को देना होगा. हाल ही में भारत सरकार द्वारा जारी एक सर्वे रिपोर्ट के मुताबिक सबसे ज़्यादा निराक्षरता, बेरोज़गारी एवं ग़रीबी ईसाई समाज के अंदर है. चर्च नेतृत्व का योगदान शिक्षा के क्षेत्र में सबसे ज़्यादा माना जाता है. देश की 25 प्रतिशत शिक्षा ढांचे पर चर्च का क़ब्ज़ा है. इसके बावजूद शहरी क्षेत्रों में 15 प्रतिशत एवं ग्रामीण क्षेत्रों में 40 प्रतिशत दलित ईसाई बच्चे अशिक्षित हैं. क्या चर्च की इस मामले में कोई जवाबदेही नहीं बनती? इस स्थिति के लिए ख़ुद चर्च नेतृत्व ज़िम्मेवार है. ईसाई संस्थानों में दलित ईसाइयों की भागीदारी लगभग नगण्य है. कैथोलिक बिशप्स कांफ्रेंस ऑफ इंडिया के 160 बिशपों में कितने दलित हैं? 15 हज़ार पादरियों में शायद एक हज़ार भी दलित ईसाई नहीं हैं. कितने दलित पादरी एवं नन ईसाई संस्थानों के प्रमुख हैं? इसका ब्यौरा चर्च नेतृत्व समाज के सामने रखे. वैसे, दलित ईसाइयों को अनुसूचित जाति का दर्जा मिल जाने से ही उन्हें समानता नहीं मिल जाने वाली. अगर सरकार सचमुच दलित ईसाइयों का भला चाहती है तो वह चर्च संगठनों में पारदर्शिता लाकर उसके ढांचे में दलित ईसाइयों को इनका वाज़िब हक़ दिलाने की राह पकड़े.

आर.एल.फ्रांसिस

(लेखक पुअर क्रिश्चियन लिबरेशन मूवमेंट से जुड़े हैं)

feedback@chauthiduniya.com

खनन से भूकंप का ख़तरा

सुरेन्द्र अग्निहोत्री

उत्तर प्रदेश का अंतिम जनपद ललितपुर भूकंप के संभावित ख़तरे से सहमा हुआ है. इस जनपद के निवासी इस बात को लेकर भयभीत हैं कि खनन माफिया–ग्रुपों की धनलिप्सा से यहां के पर्यावरण को भारी नुक़सान पहुंचने का ख़तरा पैदा हो सकता है. चित्रकूट, हमीरपुर में धरती फटने की घटना आने वाले ख़तरे की चेतावनी दे रही है. खनन माफिया ने बुंदेलखंड के झांसी, ललितपुर, चित्रकूट, हमीरपुर, महोबा और जालौन जनपद में खनिज संपदा इतना अधिक दोहन कर लिया है कि उसके कारण इस क्षेत्र में लगातार पांच वर्षों से सूखा पड़ रहा है. बुंदेलखंड वासियों के सामने जीवन–मरण का सवाल खड़ा हो गया है. पहले चंदेलकालीन छह हज़ार तालाबों और नदियों के कारण हरियाली से भरपूर रहने वाला यह क्षेत्र आज उजाड़ क्षेत्र बनने को मजबूर है. ग़ौरतलब है कि ललितपुर जनपद अपने गर्भ में बेशक़ीमती पत्थरों–ग्रेनाइट, सैंड स्टोन, डाइस्पोर, गौरा पत्थर, लाइम स्टोन व लौह अयस्क छुपाए हुए है. ग्रेनाइट पत्थर के एक–एक शिलाखंड को एक लाख से पांच लाख रुपए तक में ख़रीदने के लिए व्यापारियों में होड़ लगी रहती है. बता दें कि ग्रेनाइट खनन का काम राजघाट रोड तथा पुराने चंदेरी मार्ग पर हो रहा है. 10 बड़ी कंपनियों तथा 30 से अधिक छोटी कंपनियां खनिज विभाग से मिली खदानों में तो खुदाई कर ही रही हैं, इसके अलावा अवैध रूप से वनक्षेत्र में भी बेरोक–टोक खनन कर रही हैं. नियमावली के प्रावधानों का खुला उल्लंघन करते हुए यहां के खनिज माफिया प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ रहे हैं. लगातार ज़मीन को खोखला करने के बाद उसे खुला छोड़ देने के कारण यहां अनेक प्रकार की समस्या खड़ी हो गई है. चट्टानों को तोड़ने के लिए यहां जिस तरह विस्फोटक का प्रयोग किया जाता है वह और भी ख़तरनाक है. ग्रेनाइट उत्खनन से संभावित भूकंप के ख़तरों को रोकने के लिए एक संस्था भी बनी. बुंदेलखंड विकास सेना नामक इस संगठन का गठन एक दशक पहले किया गया था. हालांकि कालांतर में यह संगठन भी खनिज माफियाओं का भोंपू बन गया. फिल्म अभिनेता राजा बुंदेला का कहना है कि बुंदेलखंड की सियासी राजनीति खनिज माफिया के इर्द–गिर्द उलझी हुई है. सत्ता किसी की हो, अवैध खनन का सिलसिला रुकने का नाम नहीं लेता है. इससे जहां एक ओर वन समाप्त हो रहे हैं, वहीं जंगली जानवरों के लिए भी ख़तरा पैदा हो गया है. बुंदेलखंड के बदतर हालात पर उत्तर प्रदेश की विधान सभा में झांसी के विधायक प्रदीप जैन आदित्य ने कहा कि यहां की 70 प्रतिशत आबादी कुपोषण और भुखमरी की शिकार है. जल स्तर 15 मीटर तक नीचे खिसक गया है. हैंडपंप से फ्लोराइड और आर्सेनिक निकल रहा है तथा लोग आत्महत्या कर रहे हैं. अगर शासन एवं प्रशासन की ओर से ध्यान नहीं दिया गया तो यहां के लोग हथियार उठा सकते हैं और यहां पर भी नक्सलवाद की समस्या पैदा हो जाएगी.

खनन माफिया के लालच की बलि चढ़ते मज़दूर

ललितपुर जनपद में जहां एक ओर पत्थर माफिया जल्द से जल्द अपनी तिजोरी भरने में लगे हैं, तो वहीं दूसरी ओर पत्थर काटने में लगे मज़दूरों को सिलकोसिस नामक जानलेवा बीमारी काम शुरू करने के लगभग सात सप्ताह बाद ही अपने आगोश में जकड़ लेती है. खांसी, जुकाम और सर्दी से शुरू यह घातक बीमारी, एक वर्ष पूरा होते–होते मज़दूरों की मौत पक्की कर जाती है. इस दौरान सीने में दर्द होता है और मुंह से ख़ून गिरने लगता है. मज़दूर पांच वर्ष के भीतर ही मौत के मुंह में चला जाता है. सिलिका नामक धूल की वजह से मनुष्य के शरीर में यह बीमारी पैदा होती है. सिलिका की धूल पत्थर काटते समय श्वास लेने पर फेफड़ों में जमा हो जाती है और फेफड़े को कमज़ोर कर देती है. इस जानलेवा बीमारी का अभी तक कोई इलाज संभव नहीं है, इसलिए उपचार के अभाव में प्रतिवर्ष सैकड़ों मज़दूर मौत के मुंह में जा रहे हैं. वर्ष 1986 में 16 मज़दूरों की एक साथ मौत सिलकोसिस से होने पर तत्कालीन सांसद शरद यादव ने राज्यसभा में सरकार का ध्यान इस समस्या की ओर खींचा था. तब केंद्र सरकार ने इस रोग की पहचान एवं उपचार के लिए डॉ. एच.एन. सैयद के नेतृत्व में राष्ट्रीय व्यावसायिक स्वास्थ्य संस्थान, अहमदाबाद के एक विशेषज्ञ दल को सर्वेक्षण हेतु ललितपुर भेजा था. उक्त दल ने इस क्षेत्र के 500 से अधिक पत्थर खदान मजदूरों में सिलकोसिस के लक्षण पाए थे. वर्तमान में ग्राम नाराहट, डोगराकला, पाली, जाखलौन, धौर्रा, कपासी, मादोन, बंट, पटना, पारोट, राजघाट, भरपतुरा, मदनपुर, सौरई आदि ग्रामों के पास लगी पत्थर खदानों में काम करने वाले खान मज़दूर इस बीमारी के शिकार हैं. बालू के अवैध खनन के चलते बुंदेलखंड की जीवनदायनी नदी बेतवा के अस्तित्व पर संकट खड़ा हो गया है. खनिज माफियाओं की ताक़त के आगे प्रदेश शासन भी झुका हुआ है. उनकी मर्ज़ी से सपा शासन काल में बुंदेलखंड के ही निवासी खनिज मंत्री विशम्भर प्रसाद निषाद को चलता कर दिया गया तो आरोप है कि बसपा शासन में खनिज माफियाओं के कहने पर बुंदेलखंड के ही बाबू सिंह कुशवाहा को खनिज मंत्री बनाया गया है.

नहीं रूक रहा अवैध खनन

रायल्टी हो या हो ऊपरी कमाई का मामला, खनिज विभाग का कोई सानी नहीं. कंपनी अपना काम ख़त्म कर महीनों पहले चली गई, मगर दबंगों द्वारा अवैध खनन लगातार जारी है. शिकायतें हुईं पर कार्रवाई आज तक नहीं हुई. उधर खनिज अधिकारी इसे वैध करार देते हुए कोई शिकायत न आने का दंभ भर रहे हैं. मालूम हो कि बबीना थाना क्षेत्र के ग्राम खैलार में एक खदान (खसरा नंबर 669) का पट्टा एक कंपनी को हुआ था. वर्ष 2007 के प्रारंभ में उक्त कंपनी वहां से चली गई और खनन भी रुकवा दिया गया. इसी दौरान कुछ मौक़ापरस्तों से खनिज विभाग में जुगाड़ लगाकर इसी खदान से अवैध रूप से खनन प्रारंभ कर दिया. इसकी भनक लगते ही कंपनी ने अपने एक प्रतिनिधि को झांसी भेजा, जिसने अवैध खनन रुकवाने के संबंध में खनिज अधिकारी को 21 जून 2007 में प्रार्थना पत्र दिया. इसके बाद भी जब खनन नहीं रुका तो फिर वर्ष 2008 में उक्त प्रतिनिधि ने संबंधित विभागीय अधिकारियों व जिलाधिकारी समेत अन्य अफसरों को पंजीकृत डाक से प्रार्थना पत्र भेजकर अवैध खनन रोके जाने की मांग की. इसके बावजूद खनिज अधिकारी के कानों पर जूं नहीं रेंगी. जब खनिज अधिकारी एन.दास से बातचीत की गई तो उन्होंने अपने पास किसी भी प्रकार की शिकायत आने से ही इंकार कर दिया. उन्होंने दावा करते हुए बताया कि उक्त खदान पर होने वाला खनन क़ानूनी तरीक़े से किया जा रहा है. इस अवैध खनन से जनपद में बन रही फोर लेन सड़कों पर मिट्टी तथा पत्थर की आपूर्ति की जा रही है.

रायल्टी पर्ची बिकती है पान की दुकानों पर

बुंदेलखंड के महोबा जनपद में खनिज नियमों का खुला उल्लंघन देखने को कभी भी मिल सकता है. पान की दुकानों पर एम.एम. ग्यारह प्रपत्र की बिक्री ऐसे की जाती है जैसे उसकी कोई क़ीमत ही नहीं. वास्तव में एम.एम. ग्यारह खनिज निकासी का वह प्रपत्र होता है जिसमें पत्थर खदान से निकलने वाले खनिज की घन मीटर में स्थिति दर्ज़ की जाती है. लेकिन खनिज विभाग से जोड़–तोड़ करके फ़र्ज़ी खदानों के नाम प्रपत्र जारी करा लिया जाता है. इसके माध्यम से अवैध खनन को निकासी हेतु प्रयोग किया जा रहा है. भाजपा के एमएलसी स्वतंत्र देव सिंह ने इस मामले की जानकारी होने पर प्रदेश सरकार को आगह कराया है कि खनिज माफियाओं के गठजोड़ को तोड़ने के लिए रायल्टी पर्ची बिक्री पर रोक लगाई जाए. बीते माह पुलिस द्वारा छापा मारने पर फ़र्ज़ी एम.एम. ग्यारह पर अवैध निकासी करते दो व्यक्तियों को गिरफ़्तार किया गया था. वर्ष 2005 में डी.एम. महोबा ने स्टोन क्रशर पर छापा मारकर दस लाख के फ़र्ज़ी एम.एम. पत्र पकड़े थे.

feedback@chauthiduniya.com

अगले साल आएगा नया कर ढांचा

देश में जल्द ही नया कर ढांचा तैयार हो जाएगा. सरकार ने 1961 से चले आ रहे प्रत्यक्ष कर (डायरेक्ट टैक्स) के ढांचे को बदलने का फ़ैसला किया है. डायरेक्ट टैक्स कोड के लिए नया मसौदा जारी होने के साथ ही इसकी शुरुआत हो गई है. इस मसौदे पर लोगों की राय मांगी गई है. नए कर ढांचे से आम आदमी की बचत बढ़ने की आशा की गई है. वित्त मंत्रालय के सूत्रों के मुताबिक टैक्स का यह नया कोड शायद 2011 से क़ानूनी रूप ले लेगा. इसमें पीएफ आदि बचत योजनाओं से पैसे निकालने पर भी कर का प्रस्ताव है. आइए, इस नए कर ढांचे के प्रस्ताव पर कोई राय बनाने से पहले देख लें कि आय और कर के लिहाज़ से कितने प्रभावित हो सकते हैं आप.

सभी फोटो–प्रभात पाण्डेय

आयकर राहत

अभी एक सामान्य कर दाता को 1.60 लाख से 3 लाख रुपये की आय पर 10 फ़ीसदी, 3 से 5 लाख रुपये पर 20 और 5 लाख से अधिक पर 30 फ़ीसदी का आयकर देना पड़ता है. लेकिन नए कोड में 10 लाख रुपये तक की आय पर 10 फ़ीसदी ही आयकर देना होगा. इसी तरह 10 लाख से 25 लाख रुपये पर 20 और 25 लाख से अधिक की आय पर लगेगा 30 फ़ीसदी आयकर.

- दस लाख रुपये तक की आय पर सभी के लिए दस प्रतिशत की दर से आयकर का प्रावधान किया गया है. लेकिन दस लाख से अधिक की आय वाले बुज़ुर्गों और महिलाओं को आयकर में थोड़ी राहत मिलेगी.
- वैसे बुज़ुर्गों और महिलाओं को शुरुआती स्लैब में अभी साधारण श्रेणी के आयकर दाताओं से अधिक लाभ मिल रहा है. साधारण श्रेणी के वेतनभोगियों की 1.60 लाख रुपये की सालाना आय को कर से मुक्त रखा गया है. बुज़ुर्गों के लिए करमुक्त आय की सीमा 2.40 लाख और महिलाओं के लिए 1.90 लाख रुपये सालाना है.
- साधारण श्रेणी के आयकर दाता को 10 लाख रुपये से 25 लाख रुपये तक की आय पर अब 84,000 रुपये और 20 फ़ीसदी टैक्स देना होगा. बुज़ुर्गों को 76,000 रुपये और 20 फ़ीसदी और महिलाओं को 81,000 रुपये और 20 फ़ीसदी आयकर देना होगा. इस तरह बुज़ुर्गों के लिए बेसिक राहत 8,000 रुपये और महिलाओं के लिए 3000 रुपये की होगी.
- इसी तरह 25 लाख रुपये से अधिक जितनी भी आय होगी, उस पर साधारण श्रेणी के आयकर दाता को 3.84 लाख रुपये और 30 फ़ीसदी कर देना होगा. बुज़ुर्गों को 3.76 लाख और 30 फ़ीसदी, महिलाओं को 3.81 लाख और 30 फ़ीसदी कर देना होगा. इस तरह इस स्लैब में भी बुज़ुर्गों और महिलाओं को 8000 और 3000 रुपये का अतिरिक्त लाभ ही मिलेगा.

निवेश पर छूट की सीमा बढ़ेगी

इस समय आम आयकर दाता को 80-सी के तहत एक लाख रुपये तक की बचत या निवेश की छूट है. नए कोड में इसे बढ़ा कर तीन लाख रुपये करने का है सुझाव.

ब्याज पर बंद होगी कटौती

नया कोड लागू हुआ तो बैंक से मिलने वाले ब्याज या किसी स्कीम पर मिलने वाले बोनस व ब्याज पर नहीं होगी कोई कटौती. पूरी राशि मिलेगी. लेकिन करदाता को उसे आय में जोड़कर दिखाना होगा.

ईईटी

लंबी अवधि की सेविंग स्कीम को लाया जाएगा ईईटी के दायरे में. इस तरह जब आप पैसे निकालेंगे, तभी होगी टैक्स की कटौती. पीएफ और पेंशन फंड में होगी छूट, लेकिन 31 मार्च 2011 तक जमा राशि पर ही.

कॉरपोरेट टैक्स

नए कर ढांचे में कॉरपोरेट टैक्स को 30 फ़ीसदी से घटाकर 25 फ़ीसदी करने का प्रस्ताव. लंबे समय से इसकी मांग कर-करके थक चुकी कंपनियों को मिलेगी राहत.

वेल्थ टैक्स

आपकी कुल संपदा अगर 50 करोड़ रुपये से अधिक है, तो देना होगा संपदा कर यानी वेल्थ टैक्स. इसकी दर 0.25 फ़ीसदी होगी.

घाटे की भरपाई

यह फ़ायदा अब मिल सकता है हमेशा के लिए. इस समय अगर किसी कंपनी को एक साल घाटा हुआ और अगले साल फ़ायदा, तो फ़ायदे में से घाटे की भरपाई के बाद ही टैक्स देना होता है. यह छूट कंपनी को आठ साल तक के लिए ही मिली हुई है. लेकिन अब इसमें ख़त्म की जा सकती है समयसीमा.

एसटीटी

शेयरों की ख़रीद-बिक्री पर लगने वाले सिक्योरिटीज ट्रांजेक्शन टैक्स (एसटीटी) को ख़त्म करने की सिफ़ारिश. फ़िलहाल शेयरों की ख़रीद-बिक्री पर कारोबारियों को हर सौदे पर 0.125 फ़ीसदी का देना पड़ता है एसटीटी.

लांग टर्म कैपिटल गेन टैक्स

इस समय शेयरों को ख़रीदकर एक साल बाद बेचने पर कोई टैक्स नहीं देना पड़ता है. लेकिन सरकार अब लांग टर्म कैपिटल गेन टैक्स लगाना चाहती है. यानी शेयर ख़रीदने के बाद बेशक़ कोई उसे दो या पांच साल बाद बेचे, उसे कैपिटल गेन टैक्स देना पड़ेगा. कैपिटल गेन भी आय का हिस्सा बन जाएगा. लांग और शॉर्ट टर्म गेन का फ़र्क़ होगा ख़त्म.

हादसे का पर्याय बन गया है गैमन

प्रयाग अकबर

गैमन इंडिया में सब कुछ ठीक-ठाक नहीं चल रहा है. पिछले दिनों में निर्माणाधीन दिल्ली मेट्रो रेल प्रोजेक्ट की दुर्घटना के बाद से ही इस बुनियादी ढांचा निर्माण कंपनी ने बहुत सारी सुर्ख़ियां बटोरी हैं. अभी हाल की बात है, जब 27 जुलाई को उन्हें एक कारण बताओ नोटिस दिया गया. इसमें उनसे पूछा गया कि आख़िर उन्हें क्यों न काली सूची में डाल दिया जाए. गंभीरता का पता इसी से चल जाता है कि स्वतंत्र रूप से कराई गई एक जांच में गैमन को घटिया सामग्री और ग़लत डिज़ाइन के इस्तेमाल का दोषी ठहराया गया है. उनके काम को इतना घटिया करार दिया गया है कि मेट्रो के प्रमुख ई. श्रीधरन ने मेट्रो की आने वाली परियोजनाओं के लिए गैमन को बोली लगाने की भी मनाही कर दी है.

लोगों के बीच गैमन का नाम पहली बार चर्चा में तब आया, जब 12 जुलाई की तड़के सुबह उनके बनाए एक गर्डर के गिरने से सात मज़दूरों की जान चली गई. यह घटना दक्षिण दिल्ली में लाजपतनगर के पास जमरूदपुर में घटी थी. कंपनी को इससे पहले हैदराबाद में बनाए एक फ्लाईओवर के गिरने से हुई दो लोगों की मौत के मामले में भी लापरवाही का दोषी पाया गया था.

बहरहाल, 12 जुलाई तो उस परेशानी भरे पखवाड़े की शुरुआत भर थी जिसने उनके चैयरमैन और मुख्य प्रबंधक अभिजीत राजन की नींद उड़ा दी होगी. इस एक पखवाड़े (12 जुलाई से 26 जुलाई) में कई घटनाएं हुईं. पहले घटनास्थल पर मलबा हटाने लगी एक क्रेन भी टूट गई, जिससे एक और जान चली गई, 22 जुलाई को अशोक पार्क में गैमन द्वारा बनाए जा रहे एक मेट्रो स्टेशन में स्टील की बीम गिरने पर एक मज़दूर मारा गया और 25 जुलाई को मेट्रो की नोएडा लाइन के पिलर नं. 10 और 14 में कई दरारें पाई गईं. 28 को मेट्रो प्रमुख ई श्रीधरन ने कहा कि-सही बात तो यह होगी कि उन्हें तुरंत ही हटाया जाए, लेकिन हमें उनकी ज़रूरत है. उनकी जगह लेने वाला कोई नहीं है. हम अब इतना ही कर सकते हैं कि हर काम की उच्च गुणवत्ता सुनिश्चित करें और डिज़ाइनों की किसी स्वतंत्र डिज़ाइन ऑफिस से जांच कराएं.

इस तरह फ़िलहाल गैमन 300 करोड़ रुपयों की उन पांच परियोजनाओं पर काम करती रहेगी जो उसे मेट्रो के दूसरे फेज़ में मिली थीं. यह सच है कि इस कंपनी ने देश की कई महत्वपूर्ण परियोजनाओं को पूरा किया है. लेकिन साथ ही यह भी उतना ही सच है कि हालिया समय में कंपनी के हिस्से बदनामी भी काफी आई है. इसके बावजूद, इस कंपनी के बारे में लोगों को कम ही पता है.

गैमन की शुरुआत एक ब्रिटिश इंज़ीनियर जॉन गैमन ने की थी. जॉन गैमन 1920 में गेटवे ऑफ इंडिया के मुख्य आर्किटेक्ट थे. उस काम के अलावा गैमन कंपनी कई और बड़ी परियोजनाओं में भी शामिल रही है. इन परियोजनाओं में से ट्रांबे का 500 मेगावाट थर्मलपावर स्टेशन, कोंकण रेलवे के लिए भारत की सबसे लंबी रेल सुरंग बनाने की परियोजना भी शामिल रही है. ग़ौरतलब है कि कोंकण रेलवे परियोजना भी वर्तमान मेट्रो प्रमुख ई. श्रीधरन के नेतृत्व में ही पूरी हुई थी. हालांकि यह श्रीधरन ही थे जिन्होंने सार्वजनिक तौर से इसकी आलोचना की. श्रीधरन के स्वतंत्र जांच रिपोर्ट को सामने लाने और गैमन इंडिया की अपने कर्तव्य में लापरवाही बरतने की बात कहने से कंपनी के शेयरों में भारी गिरावट आई.

हालांकि इस तरह का यह कोई पहला मौक़ा नहीं है, जब गैमन इंडिया को ऐसी बदनामी का शिकार होना पड़ा है. 2006 में सिक्युरिटीज के बाज़ार पर नज़र रखने वाली संस्था सेबी (सिक्युरिटीज एंड एक्सचेंज बोर्ड ऑफ इंडिया) ने भी उसकी जांच की थी. तब सेबी ने पाया था कि एमडी राजन सहित कंपनी के प्रमोटरों ने कंपनी के फंड का दुरुपयोग किया. इसके अलावा कई और दूसरे सौदे भी थे, जिनकी जांच की गई. आरोपों में घाटा न दिखाने के लिए एक दूसरी फर्म से हुए सौदे को छुपाना, ज़रूरत से ज़्यादा संपत्ति दिखाना और बैंक खातों का ग़लत तरीक़े से इस्तेमाल आदि शामिल थे. सेबी ने फ़ैसला दिया कि राजन और दूसरे प्रमोटर अगले तीन वर्षों तक गैमन इंफ्रास्ट्रक्चर के अपने शेयर नहीं बेच सकते.

इस बीच, 12 जुलाई को दक्षिण दिल्ली में घटी घटना के सिलसिले में अपने परिजन गंवाने वाले 11 परिवारों ने दिल्ली उच्च न्यायालय में गैमन इंडिया और दिल्ली मेट्रो रेल कॉरपोरेशन (डीएमआरसी) के ख़िलाफ़ एक याचिका दायर की है. अधिवक्ता अमिताभ सेन ने कोर्ट में दलील दी कि गैमन इंडिया ने खंभों में दरारों के बारे में कई मज़दूरों द्वारा बार-बार बताए जाने के बाद भी सुरक्षा संबंधी कोई उपाय नहीं किए. बहरहाल, मामला अदालत में चल रहा है, जहां गैमन और डीएमआरसी के पास जवाब तैयार करने के लिए 20 अगस्त तक का वक़्त है.

feedback@chauthiduniya.com

सार्वजनिक ख़र्च और मानव विकास

अबुसालेह शरीफ

हमारा वर्तमान प्रशासनिक ढांचा सामाजिक क्षेत्र में एक मज़बूत और आंतरिक सरकारी हस्तक्षेप की मांग करता है. इस क्षेत्र का चरित्र कुछ ऐसा है, जो इसे पूरी तरह से प्रतियोगी बाज़ार बनने से रोकता है. इसी वज़ह से सरकार पर ही यह ज़िम्मेदारी आती है कि वह मोटे तौर पर निवेश करके वंचित तबकों की तरफ़ अपने संसाधनों का रुख़ मोड़ दे. सामाजिक क्षेत्र में सार्वजनिक ख़र्च कई मोर्चों पर आलोचना का शिकार हुआ है और इसी वजह से इस मसले पर सुधार अपरिहार्य हैं. हालांकि प्रशासनिक और वित्तीय सुधार एक ही नहीं हैं, लेकिन वे मूलभूत तौर पर एक ऐसी वित्त व्यवस्था से जुड़े हुए हैं, जो स्थायी विकास और ग़रीबी हटाने के लिए एक अहम शब्द है.

केंद्र और राज्य, दोनों ही स्तरों पर वित्त व्यवस्था कमज़ोर और खोखली है. इसमें बेहद लंबा-चौड़ा वित्तीय घाटा शामिल है (2003-04 में ही केंद्र और राज्य दोनों को मिलाकर वित्तीय घाटा सकल घरेलू उत्पाद का 9.2 फ़ीसदी था). वित्तीय अनुशासनहीनता और सरकारों का लगातार कर्ज़ पर निर्भर होना इसकी मुख्य वजह है. हालांकि संप्रग सरकार ने व्यावहारिक वित्तीय नीतियों को अपनाने के प्रति अपना रुझान दिखाया है. इसका सबूत *फिस्कल रिस्पांसिबिलिटी एंड बजट मैनेजमेंट एक्ट 2003* से मिलता है. इस साल के अंत तक राजस्व घाटा को बिल्कुल ख़त्म कर देना एक कठिन कार्य दिखता है.

किसी बच्चे के विकास में उसके क्रमिक बढ़ाव पर लगातार और पूर्ण ध्यान देने की ज़रूरत होती है, इसे वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है. लेकिन क्या भारत में प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के योगदान को अपनी चेतना में पूरी तरह धंसाया है? शायद इसका जवाब हां में होगा. 2001 की जनसंख्या के आंकड़ों के मुताबिक ग्रॉस प्राइमरी इनरॉलमेंट रेट (जीपीइआर) तक़रीबन 96.3 फ़ीसदी पर जाकर अटकता है. दुखद बात यह है कि 90-91 के मुक़ाबले यह घट गया है जब कि जीपीइआर 100.1 फ़ीसदी था. कई और देशों की तरह ही हमारे देश में भी इन स्रोतों से प्राप्त आंकड़े दरअसल, वास्तविकता को बढ़ा-चढ़ाकर दिखाते है. घरेलू सर्वेक्षण के आंकड़े (हाउसहोल्ड सर्वे डाटा) के स्रोत सीमित होते है और वह इन्हीं आंकड़ों पर कमतर बताते है. ठीक इसी तरह यह तथ्य भी हैरान करने वाला है कि उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा छह से नौ तक) में नामांकन करने की संख्या महज 60 फ़ीसदी पर ख़त्म हो जाती है. इसके साथ ही यह तमाम आंकड़े अंतरराज्यीय, लिंग आधारित और शहरी ग्रामीण भेदभाव को पूरी तरह उजागर कर देते है. यह केवल इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि गुणवत्ता की वजह से इसमें दिक़्क़त है बल्कि इसलिए कि यह गंभीर सामाजिक- आर्थिक चुनौतियों को दर्शाते है.

वांछनीय तौर पर कोई भी गुणवत्ता संबंधी सुधार लाने के लिए स्रोतों की ज़रूरत-चाहे वह प्रभावी उपयोग या फिर केवल पूरी रकम के संदर्भ में हो-पड़ती है. इससे भी बढ़कर अहम बात तो यह कि इसके लिए हमारा संकल्प मज़बूत होना चाहिए. यह आशा की जाती है कि

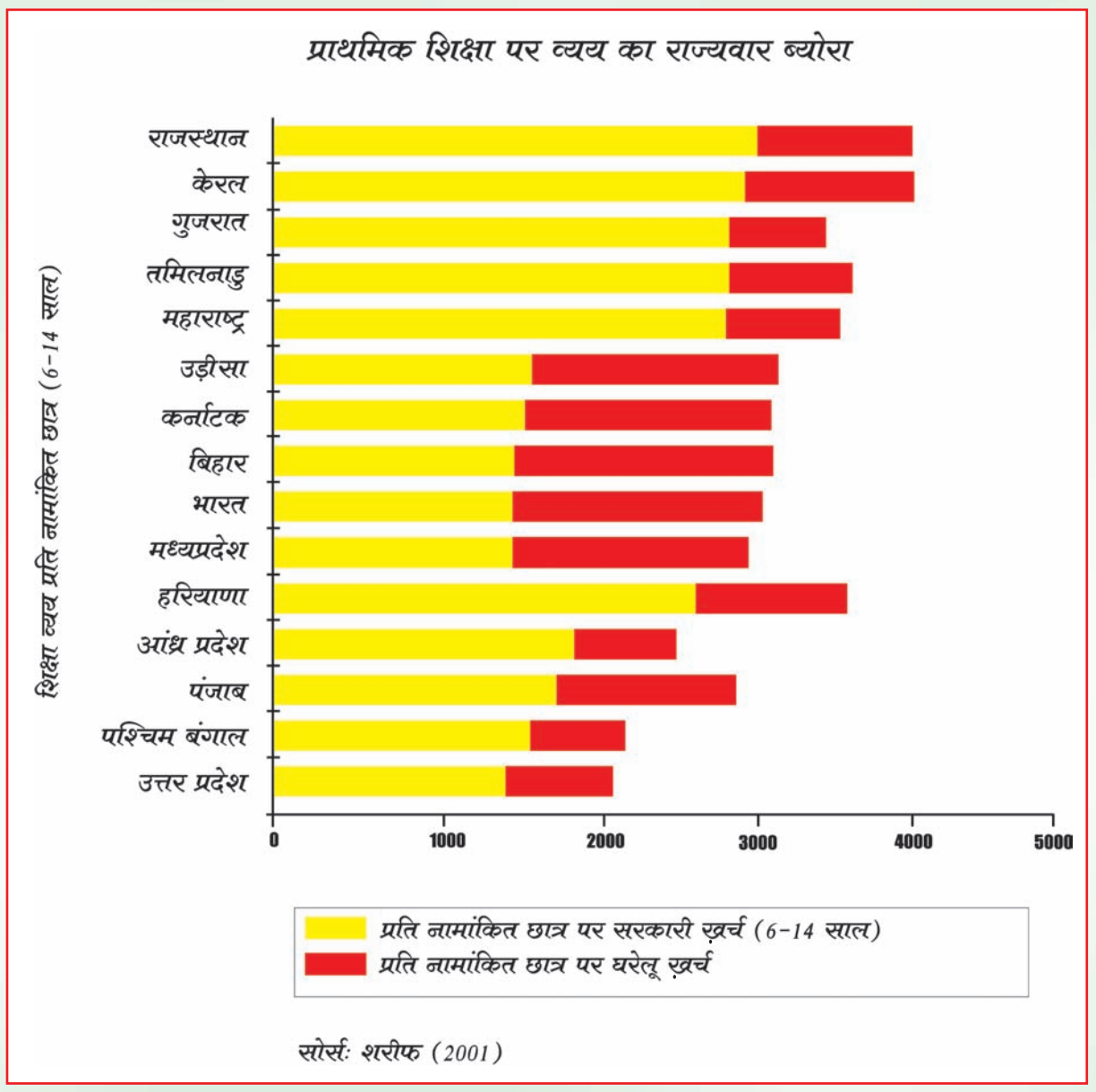

केंद्र और राज्य, दोनों ही स्तरों पर वित्त व्यवस्था कमज़ोर और खोखली है. इसमें बेहद लंबा-चौड़ा वित्तीय घाटा शामिल है (2003-04 में ही केंद्र और राज्य दोनों को मिलाकर वित्तीय घाटा सकल घरेलू उत्पाद का 9.2 फ़ीसदी था). वित्तीय अनुशासनहीनता और सरकारों का लगातार कर्ज़ पर निर्भर होना इसकी मुख्य वजह है.

प्राथमिक शिक्षा में संसाधनों की कमी का ब्योरा

राज्य	बच्चों पर होने वाला घरेलू ख़र्च (रुपये करोड़ में)	बच्चों पर पूरा सरकारी व्यय (रुपये करोड़ में)	बच्चों के स्वास्थ्य पर होने वाला कुल ख़र्चा (रुपये करोड़ में)
आंध्र प्रदेश	1102	659	1762
बिहार	1421	337	1758
गुजरात	341	420	761
हरियाणा	291	185	477
हिमाचल प्रदेश	107	187	294
कर्नाटक	149	477	627
केरल	401	387	788
मध्य प्रदेश	842	387	1230
महाराष्ट्र	751	921	1672
उड़ीसा	288	256	543
पंजाब	423	339	761
राजस्थान	705	493	1199
तमिलनाडु	972	621	1593
उत्तर प्रदेश	2135	922	3057
पश्चिम बंगाल	847	712	1559
भारत	12259	8713	20971

स्रोत - शरीफ (2001)

लोगों को लुभाने के लिए बजट के प्रावधान ने भारतीय राज्यों को उनके कारनामों से छूट पाने के लिए मुक्त कर दिया है. कुछ राज्यों की वित्तीय अव्यवस्था, लोकलुभावन राजनीति की बढ़ती कवायद और बदलती शुरुआती स्थितियों ने राज्यों की वित्तीय ज़रूरतों और प्रदर्शन में काफी बड़ा अंतर ला दिया है. इसी समस्या की वज़ह से केंद्रीय अनुदान में भी कमी आ गई है. ग़रीब राज्य लगातार केंद्र के संसाधनों को चूस रहे हैं, जबकि प्रदर्शन बनाम नीति बनाम ज़रूरत के आधार पर संसाधनों का बंटवारा अब तक अधर में लटका हुआ है. इसकी वजह से कोषीय बंटवारा अनिश्चित सा हो गया है जिसकी वजह से नीतियों और फंड पर रोक लग रही है जो ग़रीबी हटाने के कार्यक्रमों को स्थायी बनाने के लिए बेहद ज़रूरी हैं. इसके साथ ही कई प्रभावित इलाक़ों में मुहैया कराए गए धन का पूरा इस्तेमाल न होना भी चिंता का सबब है, जहां राज्य के साथ ही दूसरी इकाइयों का भी यह कहना है कि देरी की मुख्य वजह तो फंड के लगातार प्रवाह में कमी है. आवश्यकता है कि हम तुरंत ही आवंटन, पुनर्आवंटन और केंद्र और राज्य के बीच संसाधनों के बंटवारे को ज़रूरत और ताक़त के हिसाब से आंकें और नियम बनाएं, ताकि राज्यों के बीच समुचित बंटवारा हो सके. इसी तरह, संसाधनों का इस्तेमाल अधिक पिछड़े राज्यों में लोगों के प्रशिक्षण, व्यवस्थागत चुस्ती और बुनियादी ढांचों को ताज़ातरीन और समय के साथ चलने लायक बनाने में लगाया जाना चाहिए.

हमारे बच्चों पर कितना होता है निवेश?

संप्रग सरकार ने अपने हालिया बजट में सकल घरेलू उत्पाद का सात फ़ीसदी हिस्सा तक शिक्षा पर ख़र्च करने का वादा किया है. इनमें से कम से कम आधा रुपया प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा पर ख़र्च किया जाना है. पिछली सरकार ने ही यह प्रस्ताव दिया था कि हरेक केंद्रीय कर पर अतिरिक्त दो फ़ीसदी एजुकेशनल सैश लगाया जाए, जिसे हम बाख़ुशी निभाने की कोशिश कर रहे हैं. हालांकि सवाल यह है कि क्या यह लक्षित व्यय हरेक को शिक्षा देने के लिए पर्याप्त है. हाल की सांख्यिकी हमें यह बताती है कि शिक्षा पर कुल व्यय सकल घरेलू उत्पाद का चार फ़ीसदी है, जिसे बढ़ाकर सात फ़ीसदी करने का दावा किया जा रहा है. राज्यवार आकंड़ा 10 फ़ीसदी से बीस फ़ीसदी तक बदलता रहता है. लगभग 15,000 करोड़ रुपए अभी शिक्षा पर ख़र्च किए जा रहे हैं और ज़ाहिर तौर पर यह काफी नहीं है. साक्षरता की सीमित परिभाषा के बावजूद भारत में अब भी राज्यों में साक्षरता की दर 47.5 फ़ीसदी से लेकर 90.92 फ़ीसदी तक जाती है. केरल भले ही इसका अपवाद हो. पूरे भारत में साक्षरता की दर बमुश्किल 66 फ़ीसदी तक पहुंचती है. हालांकि यह संतोष की बात है कि 1991 में यह दर 52.2 फ़ीसदी थी और उस लिहाज़ से हम काफी गुणात्मक सुधार की अवस्था में पहुंचे हैं. अनिवार्य शिक्षा विधेयक हमारे कुल नामांकन आंकड़ों में ज़रूरी सुधार लाएगा और वह उपस्थिति, आदान-प्रदान, शिक्षा की पूर्णता, समानता और सबसे बढ़कर शिक्षा के नतीजों को बढ़ावा देगा.

अपर्याप्त सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा

प्राथमिक शिक्षा की तरह ही का अध्ययन कौशल इस्तेमाल कर नवजात से 14 वर्ष तक के बच्चों के स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च को भी आंका गया. इस समूह के बच्चे दरअसल भारत की जनसंख्या का तक़रीबन 33 फ़ीसदी हिस्सा हैं और वे ही इस देश की शारीरिक, भावनात्मक, बौद्धिक और सामाजिक विकास के आंकड़े तय करते हैं. तो फिर भारत का भविष्य कितना सुरक्षित है. मोटे तौर पर सापेक्षिक और पूर्णात्मक हिसाब से देखे तो कोई सकारात्मक पहलू नहीं मिल सकता. जो भी हो इतना तो तय है कि हम स्वास्थ्य सेवाओं के मामले में अभी भी बहुत पीछे है. कुछ आंकड़े देखने से ही इसका पता चल जाता है. हमारे देश में शिशु मृत्यु दर 69 प्रति हज़ार थी, यह बात हम 2002 की बता रहे हैं. अभी भी यह कम होकर बहुत आशाजनक स्थिति तक नहीं पहुंचा है. यह हालत तब है, जब संयुक्त मानव विकास रिपोर्ट के मुताबिक यह दर मध्यम विकासशील देशों में भी 45 प्रति हज़ार थी. सोचिए हम कहां है. भारत शिशु कुपोषण के मामले में सबसे बदतर दिखता है. हमारे देश के चार वर्ष से कम आयु के 47 फ़ीसदी बच्चे कुपोषित है और उनका वजन ज़रूरी से कम है. हमारे देश में शिशुओं की स्वास्थ्य संबंधी हालत को देखते हुए यह सोचना ही पड़ता है कि आख़िर सरकार प्राथमिक सरकार सुविधा पर कितना ख़र्च करती है. हालत यक़ीनन निराशाजनक है. हम ज़ाहिर तौर निजी प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं का ज़्यादा इस्तेमाल करते हैं क्योंकि सरकारी सुविधा या तो उपलब्ध नहीं है या फिर वह इतनी दूर है कि हम उसका इस्तेमाल नहीं कर सकते.

प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा में संसाधनों की कमी का ब्योरा

राज्य	सकल घरेलू ख़र्च (रुपये करोड़ में)	नामांकन पर सरकारी ख़र्च (रुपये करोड़ में)	पासआउट बच्चों के नामांकन पर ख़र्च (रुपये करोड़ में)	100 फ़ीसदी नामांकन पर ख़र्च (रुपये करोड़ में)
आंध्र प्रदेश	745	2578	475	3797
बिहार	794	2832	1980	5606
गुजरात	387	2326	358	3072
हरियाणा	514	946	239	1699
हिमाचल प्रदेश	202	610	8	820
कर्नाटक	589	2302	483	3373
केरल	566	1490	2	2058
मध्य प्रदेश	417	2113	1144	3675
महाराष्ट्र	930	4785	383	6098
उड़ीसा	269	1519	505	2292
पंजाब	473	829	62	1364
राजस्थान	788	2681	1676	5145
तमिलनाडु	584	2725	121	3430
उत्तर प्रदेश	1602	3790	2245	7637
पश्चिम बंगाल	663	2133	1049	3845
भारत	10806	40883	12963	64652

स्रोत - शरीफ (2001)

लेखक सच्चर कमेटी के मेम्बर सेक्रेटरी रहे हैं.

feedback@chauthiduniya.com

मीडिया वाच

और कृष्ण ने ले लिया जन्म...बचना ऐ हसीनो

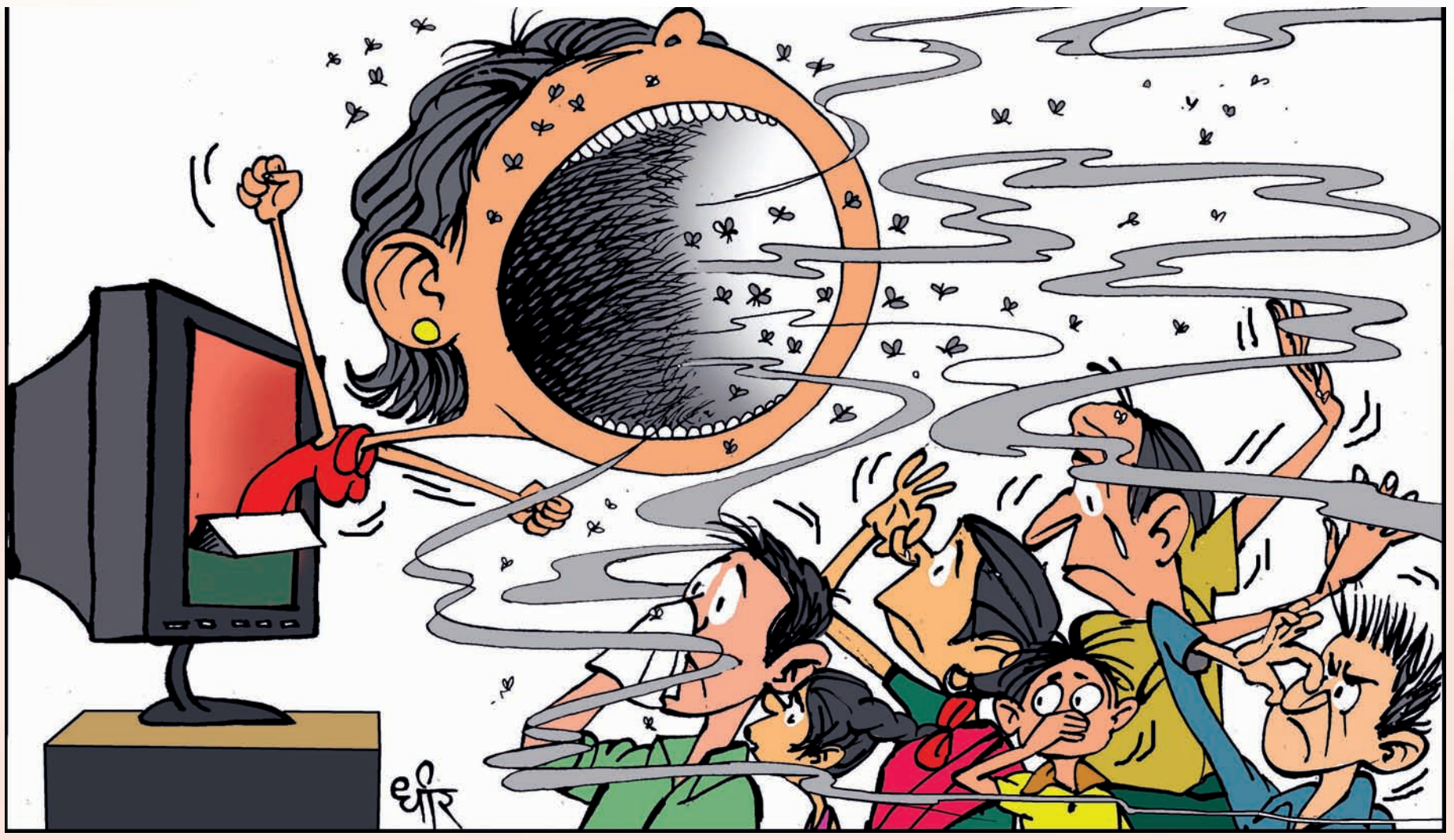

गंगेश मिश्र

हम लोगों ने एक दिन के अंतर पर अभी-अभी दो पर्व मनाए हैं. पहले कृष्णाष्टमी, फिर स्वतंत्रता दिवस. इन दोनों पर्वों को हमारे ख़बरिया चैनलों ने भी मनाया. कैसे?आइए देखते हैं-

पहले कृष्णाष्टमी. रात ग्यारह बजे के बाद लगभग सभी ख़बरिया चैनल चिल्लाने लगे-आने ही वाले हैं भगवान...जन्म लेने ही वाले हैं...देखिए... एक साथ देखिए-मथुरा, द्वारिका, दिल्ली के इस्कॉन मंदिर..और..मुंबई में दही-हांडी फोड़ते गोविंदा...फिर बैकग्राउंड में गाना बजने लगा-*बचना ऐ हसीनो*.

स्टूडियो में बैठे एंकर ने फिर कहा-प्रकट होने ही वाले हैं भगवान कृष्ण, पूरी तैयारी हो चुकी है...आधी रात को...बारह बजते ही जन्म ले लेंगे माखन चोर, नंदकिशोर, भगवान कृष्ण...इसके बाद फिर गाना बजा-*आ देखें ज़रा...*

टीवी स्क्रीन पर दिखाए जा रहे चार फ्रेमों में से एक बीच वाला अचानक बड़ा हुआ, और उसमें दिखा मुंबई के दही-हांडी प्रोग्राम में शामिल हीरोइनें अपने प्रशंसकों की ओर हाथ हिला रही थीं. किसी भी ख़बरिया चैनल पर यह समझदारी देखने को नहीं मिली कि भगवान कृष्ण का यह हैप्पी बर्थ डे मन रहा है. ठीक उसी तरह, जैसा हम-आप अपने बच्चों की सालगिरह मनाते हैं. क्या ख़बरिया चैनल वालों के घर बर्थ डे पर बच्चा फिर जन्म लेता है?

सबसे तेज़ चैनल वालों का हाल उस रात ऐसा था, मानो किसी नशे (शायद टीआरपी) में आंय-बांय बके चले जा रहे हैं. एंकर भी कोई नया नहीं, वर्षों पुराना. ज़ाहिर है, ऐसा वे करियर की शुरुआत से करते आ रहे हैं. ख़बरिया चैनल वाले ऐसे मामलों में आम तौर पर दो तर्कों का सहारा लेते हैं. एक, ऐसा पहले भी हो चुका है. दूसरे, इक्कीसवीं सदी में यह कैसी बात की जा रही है? यानी, जो ग़लती उन्होंने करियर की शुरुआत में की थी, उसे साल दर साल बढ़ाते ही रहेंगे. हम-आप जैसे श्रद्धालु इन्हें इसी तरह झेलते रहेंगे. और, अगर इनके ख़िलाफ़ ऐसी कोई बात किसी मंच से कह दी जाए, तो बेशर्मी से कहेंगे-ज़बरदस्ती नहीं दिखाता टीवी. रिमोट आपके हाथ में होता है,आप बंद कर लीजिए.

लगभग यही हाल स्वतंत्रता दिवस का रहा. लाल किले के प्राचीर से प्रधानमंत्री ने कई महत्वपूर्ण घोषणाएं की थीं. लेकिन ख़बरिया चैनल उसके विश्लेषण के बजाय दिल्ली में हो रही बारिश के मज़े ले रहे थे.

रंग में भंग तब पड़ गया, जब अमेरिका से शाहरुख ख़ान वाली ख़बर आ गई. शाम तक तो इसे राष्ट्र के अपमान के तौर पर लिया जाता रहा, जो काफी हद तक ठीक भी था. लेकिन सलमान ख़ान के इस बयान के बाद स्थिति पलट गई कि इसमें कोई नई बात नहीं है, पहले भी कई लोगों के साथ ऐसा हो चुका है. फिर तो रात आते-आते तक कई चैनलों पर ख़बर प्रस्तुत करने का नज़रिया ही बदल गया था.अब हिसाब बराबर करने का खेल शुरू हो चुका था. मामला ख़ान वार के रंग में रंग गया था. पहले तो कुछ नामी लोगों से बाइट ली गई, फिर फराह ख़ान आदि की खिल्ली भी उड़ाई जाने लगी. यह कहते हुए कि शाहरुख़ के दोस्त हैं, इसलिए अधिक दुखी हैं. इन सबमें सबसे तगड़ा बयान अपनी सूचना और प्रसारण मंत्री अंबिका सोनी जी ने दे दिया. वह भी किसी ख़बरिया चैनल वाले अंदाज़ में-अमेरिका वालों के साथ भी हमें ऐसा ही करना चाहिए.

इस मामले में एक सवाल यह भी उठाया गया कि फिल्मी हस्ती से जुड़े होने के कारण ही यह मामला उठा, जबकि आए दिन इस तरह की जांच से लोग गुज़रते ही रहते हैं. पूर्व राष्ट्रपति डॉ. एपीजे कलाम के साथ भी तो ऐसा हो चुका है? तो क्या, इस बिना पर सुरक्षा के नाम पर ऐसा घटिया मज़ाक चलते रहने देना चाहिए? अगर कोई इसके विरोध में खड़ा होता है, तो क़्या गलत करता है? कतई नहीं. दरअसल हमारे ख़बरिया चैनल वालों को पता ही नहीं रहता कि आख़िर लाइन कौन-सी ली जाए? इसलिए अक्सर पहले तो वे अपनी ओर से पहल करके तमाशा खड़ा करते हैं, फिर मज़े भी लेने लगते हैं. मज़े लेने के इनके तरीक़े भी अलग क़िस्म के होते हैं. जैसे, अगर कुछ सही या सकारात्मक कहा जा रहा होता है तो उसकी बाल की खाल निकाल कर उसे ग़लत साबित करने में पिल पड़ते हैं. इसी तरह, अगर किसी को ग़लत माना जा रहा है तो इक्कीसवीं सदी की मिसाल देकर उसे सही ठहराया जाने लगता है. उलटबांसी लगता है कि ख़बरिया चैनलों के ख़ून में ही शामिल हो गई है.

वैसे शाहरुख़ भी कम सहानुभूति के पात्र नहीं हैं. पहले अमेरिका में उनके साथ ग़लत व्यवहार तो हुआ ही, रही-सही कसर हमारे ख़बरिया चैनलों ने पूरी कर दी. एसएमएस के ज़रिए उनके अपमान से भी कमाई कर ली. जिस देश में सत्तर करोड़ लोग महज़ बीस रुपये प्रतिदिन पर जी रहे हैं, उस देश की जनता को स्वतंत्रता दिवस पर भी इस तरह मूर्ख बनाने का काम सिर्फ़ और सिर्फ़ गिरे हुए लोग ही कर सकते हैं इक्कीसवीं सदी के नौजवानों की भागीदारी और पसंद के नाम पर ऐसे खेल क्या बंद नहीं होने चाहिए? दरअसल, नौजवानों की इस तरह चर्चा कर रहे ये लोग अपनी ज़िम्मेदारी से मुक्त हो लेते हैं. भारत नौजवानों का देश है, इसके आंकड़े दे देने भर से उन्हें कोई रास्ता नहीं मिल जाता. नौजवानों की कठिनाइयां दूसरी हैं. इसलिए भी कि देश के असली नौजवान *एमटीवी रोडीज़*, *स्पिट्सविला* या यूटीवी-बिंदास चैनल पर दिखाई जाने वाले रियलिटी शो-*दादागीरी*-के प्रतियोगी नहीं हैं. इन प्रतियोगियों के लिए एसएमएस करने और कराने वाले तब बगलें झांकने लगते हैं, जब देश के असली और शेष नौजवानों की बात की जाती है. सच्चाई तो यह है कि जब अपना रास्ता तय करने में जुटे देश के असली और अधिकतर नौजवान मीडिया से अपने रास्ते में आने वाले मोड़ और गड्ढों की जानकारी चाहते हैं, तो उनके सामने पेश कर दिए जाते हैं-रियलिटी शो के प्रतियोगी. *एमटीवी रोडीज़*, *स्पिट्सविला* से लेकर *दादागीरी* तक के ऐसे प्रतियोगी, जिन्हें शो में टिके रहने के लिए जीभ से सफेद जूते को रंगने में भी शर्म नहीं आती.

feedback@chauthiduniya.com

दार्जिलिंग में गुरुंग ने बनाई समानांतर पुलिस

दार्जिलिंग में राज्य की पुलिस ने अपनी ताक़त खो दी है. गोरखा लैंड पर्सनेल (जीएलपी) अब सार्वजनिक तौर पर ख़ुद को गोरखालैंड की पुलिस कहती है. धमकी और ताक़त के ज़ोर पर जीएलपी अब क़ानून और व्यवस्था संभाल रही है. पश्चिम बंगाल पुलिस मूक दर्शक बनी यह सब देख रही है.

जीएलपी दरअसल गोरखा जनमुक्ति मोर्चा (जीजेएम) प्रमुख बिमल गुरुंग के दिमाग़ की उपज है. गुरुंग ने पिछले साल ही दार्जिलिंग पर क़ब्ज़ा जमाने के लिए अपनी हथियारबंद और प्रशिक्षित फौज तैयार की थी. अब यही फौज जीएलपी बन गई है और ज़िले में पुलिस का काम संभालते हुए सही-ग़लत का फ़ैसला कर रही है. जीजेएम के सूत्र बताते हैं कि जीएलपी के क़रीब 15000 लोग पहाड़ों में-दार्जिलिंग, कलिम्पांग, कुर्सियांग अनुमंडलों में-तैनात किए गए हैं.

जीएलपी ने पूरे दार्जिलिंग पर नियंत्रण क़ायम कर लिया है. साथ ही वह उनके लिए आतंक का पर्याय है जो जीजेएम और उसकी नीतियों से इत्तेफ़ाक़ नहीं रखते. जीएलपी का दख़ल क़ानून-व्यवस्था, सामाजिक या व्यक्तिगत सभी मामलों में होता है. किसी भी विवाद की स्थिति में जीएलपी ही मामले की सुनवाई करती है और फ़ैसला भी सुनाती है.

इन सबके बीच उसके निशाने पर सबसे पहले पुलिस है. भरोसेमंद सूत्र बताते हैं कि जीएलपी को बिमल गुरुंग और उनके जीजेएम के समर्थन में अलग गोरखालैंड बनाने के लिए खड़ा किया जा रहा है. हालांकि इसमें शामिल होने की प्रक्रिया आसान नहीं है. जो इसके लिए आवेदन करते हैं, उन्हें बड़े ध्यान से चुना जाता है और फिर उन्हें ख़ुद की मानसिक और शारीरिक फिटनेस साबित करने के लिए कड़ी परीक्षा से गुजरना पड़ता है. आख़िरी चयन के बाद इन्हें ज़ोरदार प्रशिक्षण के लिए भेजा जाता है. जीएलपी के पास कई प्रशिक्षण कैंप हैं, इनमें से अधिकतर जंगलों में हैं. सेना से रिटायर हो चुके कई अधिकारी इन कैंपों को चलाते हैं.

> जीएलपी दरअसल गोरखा जनमुक्ति मोर्चा (जीजेएम) प्रमुख बिमल गुरुंग के दिमाग़ की उपज है. गुरुंग ने पिछले साल ही दार्जिलिंग पर क़ब्ज़ा जमाने के लिए अपनी हथियारबंद और प्रशिक्षित फौज तैयार की थी. अब यही फौज जीएलपी बन गई है और ज़िले में पुलिस का काम संभालते हुए सही-ग़लत का फ़ैसला कर रही है. जीजेएम के सूत्र बताते हैं कि जीएलपी के क़रीब 15000 लोग पहाड़ों में-दार्जिलिंग, कलिम्पांग, कुर्सियांग अनुमंडलों में-तैनात किए गए हैं.

जब प्रशिक्षण पूरा हो जाता है तो जीएलपी के इन नए रंगरूटों को नीले और पीले ट्रैकसूट और छड़ियां दी जाती हैं. खाने-पीने की सुविधा के साथ-साथ इन्हें पहले पहल हज़ार रुपये महीना दिए जाते हैं. जीजेएम के समर्थक पूर्व सेना अधिकारियों को जीएलपी के यूनिट प्रमुखों के तौर पर नियुक्त किया जाता है. इस तरह एक प्रशिक्षित और हथियारबंद समांतर सेना तैयार हो रही है.

स्थानीय पुलिस में अपना अविश्वास दिखाते हुए जीजेएम प्रशिक्षित जीएलपी सैनिकों को अपनी केंद्रीय कमिटी के सदस्यों की सुरक्षा के लिए तैनात कर रही है. एक जीजेएम सदस्य ने बताया कि-जीएलपी क़ानून-व्यवस्था बनाए रखने और अपराध रोकने में अहम भूमिका निभाता है.

हालांकि स्थानीय नागरिक इस बात को नहीं मानते. उनमें से अधिकतर यह मानते हैं कि जीएलपी क़ानून-व्यवस्था बनाने के नाम पर सारी सीमाएं लांघ रही है.

हाल में ही एक पत्रकार को जीएलपी काडरों ने बिना कारण घेरकर गंभीर परिणामों की चेतावनी दी. वह पत्रकार जीजेएम के बंद के बारे में एक नौकरशाह के पुराने ड्राइवर से बात कर रहा था. यह घटना दार्जिलिंग मॉल पर घटी. जीएलपी ने एक होटल पर छापेमारी भी की और कुछ लोगों को पूछताछ के लिए हिरासत में लेकर एक ठिकाने पर भी ले जाया गया. जीएलपी के ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई नहीं की गई. जीजेएम के महासचिव और प्रवक्ता रोशन गिरी समांतर फौज बनाने की इस बात को जायज़ ठहराते हुए कहते हैं कि अगर मार्क्सवादी अपने काडर बना सकते हैं, भाजपा के साथ स्वयंसेवक संघ हो सकता है, कांग्रेस का अपना सेवा दल है तो जीजेएम के जीएलपी बनाने से क्या परेशानी है? यह लोग समाज सेवक हैं और शांति बनाए रखने में अपनी भूमिका निभाते हैं. वे हमारे आंदोलन में भाग नहीं लेते. समाज को उनकी भूमिका की अहमियत को समझना चाहिए.

हालांकि एक जीएनएलएफ(गोरखा नेशनल लिबरेशन फ्रंट) नेता अपना नाम न बताने की शर्त पर कहते हैं कि, जीएलपी का एकमात्र उद्देश्य जीएनएलएफ, सीपीएम और अन्य पार्टियां, जो बिमल गुरुंग के रवैए का विरोध करते हैं, को परेशान करना है. हम राज्य सरकार की असहायता को देख कर हैरान हैं.

जीएलपी के बारे में पूछे जाने पर दार्जिलिंग में एक सीनियर आईपीएस अधिकारी कहते हैं कि-हम सब जानते हैं लेकिन जबतक कोलकाता से निर्देश नहीं आते तबतक हम कुछ नहीं कर सकते.

सौम्या एस.

feedback@chauthiduniya.com

एम जे अकबर

स्वात पर ध्यान देने के लिए क्या जंग करनी ही होगी?

अमेरिका की मुख्यधारा की बाक़ी दुनिया में क्या अभिरुचि है, उसे जांचने का एक सौ फ़ीसदी पक्का तरीक़ा है. *न्यूयॉर्क टाइम्स* में प्रकाशित पहेली (क्रॉसवर्ड) देखिए. 11 अगस्त को इसमें प्रकाशित पहेली का 17 वां संकेत (तीन अक्षरों वाला) कुछ इस तरह का था– इस्लामाबाद की ज़मीन : अब्र. पाकिस्तान की खोज शुरू हो चुकी है. भारत तो एक पुरानी, लेकिन स्थायी और उत्सवधर्मी कहानी है, जिस पर कभी–कभार निगाह आगरा के ताजमहल या फिर *स्लमडॉग मिलिनेयर* के माध्यम से डाल ली जाती है. नेहरू अब भी शानदार तरीक़े से अपना क़द ऊंचा रखने में कामयाब हैं, हालांकि उनकी उपस्थिति अब धुंधला रही है.

इसका श्रेय निश्चित तौर पर तालिबान की ज़िद और रिचर्ड हॉलब्रुक की भाषाई दक्षता को जाना चाहिए, जिन्होंने अमेरिकी चेतना को नया विस्तार दिया है. शायद ठीक उसी तरीक़े से, जिस तरह सद्दाम हुसैन और जॉर्ज बुश ने आइराक़ (इराक़) को अमेरिकी भाषा का ही एक अंग बना दिया था. यह सचमुच बड़ा अजीब लगता है कि मशहूर होने के लिए जंग की ज़रूरत पड़े, लेकिन महाशक्तियों के साथ तो ऐसा ही है. ब्रिटेन का नाम रोमा के घर–घर में तभी गूंजा, जब जूलियस सीज़र वहां गया था. स्वात शायद अगला नाम हो, जो पहेलियों में अपनी जगह बना ले. यह शायद एनाग्राम (शब्द के अक्षरों को उलटफेर कर नया शब्द बनाना) के लिए भी काफी उपयोगी हो.

यह बिल्कुल साफ हो चुका है कि इस्लामाबाद ने अपने नागरिक युद्ध का एक मूल तथ्य नहीं समझा है. इस वर्ष या अगले वर्ष, जंग का चाहे जो भी नतीजा हो, लड़ाई की ज़मीन तो कहीं और खिसक चुकी है. तालिबान का विद्रोह केवल धार्मिक भावनाओं से नहीं उपजा, यह तो पाकिस्तान के शोषणकारी आर्थिक संबंधों को बदलने की भी मुहिम है.

आख़िर दांव पर क्या लगा है, जिसकी वजह से अगले 10 वर्षों में स्वात घाटी–जिसे अक्सरहां पाकिस्तान का कश्मीर कहा जाता है–अतुल्य पाकिस्तान का सबसे पसंदीदा अमेरिकी पर्यटन स्थल होगा. शायद, तार्किकता तो इस सवाल को दूसरे ढंग से पूछने में ही है. वर्ष 2019 में क्या स्वात घाटी कश्मीर बन जाएगी, या कश्मीर स्वात घाटी बन जाएगा? ख़ुदा ही जानता है, लेकिन वह आजकल अजीब तौर पर ख़ामोशी अपनाए हुए है.

पाकिस्तानी सेना इस साल स्वात के मोर्चे पर बढ़त बनाएगी, लेकिन हम पूरे जंग की बात कर रहे हैं. पाक सेना जंग के सबसे प्रभावी उपकरण के साथ है–वह है उसका ख़ुद का हित. तालिबान की जीत ज़ाहिर तौर पर उन संस्थानों को अस्थिर कर देगी, जो इस्लामाबाद में ताक़त को बांटे हुए हैं और यह सीधे और मूलभूत तौर पर पाक सेना के चरित्र, लक्ष्य और उद्देश्यों में बदलाव ला देगी. इसके अधिकारी यथास्थितिवाद से संतुष्ट हैं. वे मुल्लाओं का इस्तेमाल अपनी ज़रूरत के हिसाब से करना चाहते हैं, हालांकि वे ख़ुद इस्तेमाल नहीं होना चाहते.

हालांकि, यह बिल्कुल साफ हो चुका है कि इस्लामाबाद ने अपने नागरिक युद्ध का एक मूल तथ्य नहीं समझा है. इस वर्ष या अगले वर्ष, जंग का चाहे जो भी नतीजा हो, लड़ाई की ज़मीन तो कहीं और खिसक चुकी है. तालिबान का विद्रोह केवल धार्मिक भावनाओं से नहीं उपजा, यह तो पाकिस्तान के शोषणकारी आर्थिक संबंधों को बदलने की भी मुहिम है. इनमें से सबसे बुरा तो भूमि और किसानों का संबंध है. मोहम्मद सूफ़ी और बैतुल्लाह महसूद को समर्थन मिला, क्योंकि उन्होंने उन ज़मींदारों को चुनौती दी, जिन्होंने स्वात घाटी के साथ ही पाकिस्तान के काफी बड़े हिस्से को भी गुलाम बना रखा है. आज़ादी के छह दशकों के बाद भी पाकिस्तान की स्वाधीनता किसानों की आज़ादी में तब्दील नहीं हो सकी है. अभी भी वहां भूमि सुधार नहीं हुए हैं. लगता है, इस्लामाबाद ने बॉर्बन राजाओं (16 वीं से 18वीं सदी का प्रमुख यूरोपियन राजपरिवार) की तरह ही न तो कुछ भूला है और न ही कोई सबक़ सीखा है. अब जबकि, संघ शासित जनजातीय इलाकों (फाटा) के कई हिस्सों पर सेना का क़ब्ज़ा है, तो इस्लामाबाद वापस उन ज़मींदारों को बुला रहा है, जिनको तालिबान ने बेदख़ल कर दिया था.

अक्तूबर 1949 में नेशनल कांफ्रेंस के संस्थापक नेता शेख मोहम्मद अब्दुल्ला ने अपनी पार्टी का विशेष सत्र बुलाकर भारतीय गणराज्य में राज्य के सम्मिलित होने पर मुहर लगाने को कहा था. एक नए कश्मीर के उनके एजेंडे में सबसे ऊपर भूमि सुधार था. राज्य में बीस लाख एकड़ से भी अधिक कृषियोग्य भूमि मुख्य तौर पर संभ्रांत डोगरा और उनके जागीरदारों के क़ब्ज़े में थी. उसी वक़्त 22.75 एकड़ ज़मीन से अधिक रखने पर रोक लगा दी गई. किसानों का क़र्ज़ लगभग एक करोड़ 10 लाख रुपये से घटाकर 20 लाख रुपये के आसपास कर दिया गया. जो किसान अपनी संपत्ति गिरवी रखने को बाध्य हुए थे, क्योंकि ब्याज की दर बहुत अधिक थी, उन्हें उनके अधिकार वापस मिले. साझे में खेती करने वालों की बंटाई आधे से बढ़कर दो–तिहाई हो गई, जबकि उत्पादन का ख़र्च अब आधा हो गया.

जवाहरलाल नेहरू ख़ुद एक कश्मीरी हिंदू थे और उन्होंने शेख अब्दुल्ला को पूरा समर्थन दिया. इसकी वजह यह थी कि नेहरू की नज़र में ग़रीबी का कोई धर्म नहीं था. ग़रीबी मिटाने और आर्थिक समानता को प्राप्त करना ही उनके सेकुलर, आधुनिक और गतिशील नए भारत का लक्ष्य था. नेहरू दिल्ली में रहने वाले किसी भी आदमी की तुलना में यह बेहतर जानते थे कि कश्मीर के ज़मींदार हिंदू हैं. हालांकि, उनके लिए हिंदू धनी किसी भी तुलना में न तो मुसलमान धनिकों से जुदा थे और न ही हिंदू ग़रीब किसी मुसलमान ग़रीब की तुलना में कम हक़दार. इसी वजह से वह भारत के बहुतेरे हिस्सों में भूमि–सुधार लागू कर सके. हालांकि विभिन्न स्वार्थी हितों और चुनावी राजनीति की अपरिहार्य मजबूरियों ने हरेक क़दम पर उनको नुक़सान पहुंचाया. नेहरू और अब्दुल्ला चार बार साझेदार रहे हैं. 1949 में, 1975 में, 1987 और अब 2009 में. यह राजनीतिक संबंध शानदार वायदों से लेकर ख़तरनाक तबाही की ओर धकेलने वाला रहा है, हालांकि व्यक्तिगत समीकरण अपनी जगह क़ायम रहे. उमर अब्दुल्ला और राहुल गांधी इसी शृंखला की चौथी कड़ी हैं. वह शायद अक्तूबर 1949 की 60 वीं वर्षगांठ को मनाना चाहेंगे. उस ज़हर को याद नहीं करना चाहेंगे, जो उनकी राजनीति में घुस गया है, लेकिन उस शुद्धता को याद करेंगे, जिसने हमें भूमि–सुधार दिया.

हालिया मिजाज़ वे स्वयंभू संस्थान और लोग तय कर रहे हैं, जिन्होंने राष्ट्रनिर्माण के मूल स्तंभ भूमि सुधार को ही भुला दिया है. आज के टैलेंट हंट करोड़ों रुपये जीतने वालों को सम्मानित करते हैं, उनको नहीं जिन्होंने करोड़ों नौकरियों का निर्माण किया है. इस सप्ताह दिल्ली और इस्लामाबाद ने अपनी 62वीं सालगिरह शपथों और भाषणों के साथ मनाई, जबकि एक अलग तरह के धमाके बलूचिस्तान, स्वात और नक्सल कॉरीडोर में हो रहे थे.

ज़ाहिर है, पहले का आनंद लें, लेकिन दूसरे से सीख भी लें.

feedback@chauthiduniya.com

रवि किशोर

आरके आनंद मामला : न्यायिक जवाबदेही का नया युग

न्यायिक क्षेत्र में जवाबदेही और पारदर्शिता–ख़ास तौर पर जजों का अपनी संपत्ति की घोषणा करना–आज बहस का एक अहम मसला है. इस मसले पर कई तरह के विचार आए हैं. इस मामले में माननीय मुख्य न्यायाधीश के नेतृत्व में न्यायपालिका ने जो रुख़ अपनाया है वह वकीलों, संसद और आरटीआई कार्यकर्ताओं के ठीक विपरीत है. निस्संदेह इस विषय पर एक समग्र और विस्तृत समाधान की ज़रूरत है. यह समाधान ऐसा हो, जो न सिर्फ़ न्याय प्रक्रिया में पारदर्शिता और जवाबदेही लाने के लिए हो, बल्कि न्यायिक फ़ैसले को तेज़ बनाए और लंबित मामलों के जल्द निपटारे में भी सहायक हो.

गत 16 अगस्त को प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी अदालत में लंबित पड़े तीन करोड़ मामलों को काफी गंभीर बताते हुए कहा कि हर एक वादी के आंसू पोंछना आख़िरी लक्ष्य होना चाहिए.

इसके साथ ही न्यायतंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने वाले दूसरे पक्ष यानी वकीलों के कामकाज में भी सुधार लाना अत्यावश्यक है. वकीलों को भी जवाबदेह बनाने की ज़रूरत है. वकीलों को और अधिक निष्पक्ष और सक्रिय भूमिका अदा करने की ज़रूरत है, ताकि न्यायिक व्यवस्था की प्रक्रिया में मदद मिल सके और फ़ैसलों में तेज़ी आ सके. वकीलों को भी एडवोकेट्स एक्ट और बार काउंसिल ऑफ इंडिया द्वारा बनाए गए नियमों के अंतर्गत अपने आचरण और नीति के प्रति भी जवाबदेह बनना होगा.

इसकी पृष्ठभूमि के वह हालिया मामला है, जहां सर्वोच्च न्यायालय ने वरिष्ठ अधिवक्ता और पूर्व सांसद आरके आनंद को दोषी पाया है. उन्हें एक चैनल के स्टिंग ऑपरेशन में बहुचर्चित बीएमडब्ल्यू मामले के मुख्य गवाह के साथ समझौता करते दिखाया गया था. ऐसा पहली बार हुआ है जब किसी पुराने और वरिष्ठ वकील को कोर्ट की अवमानना एक्ट के तहत दोषी पाया गया है. न्यायाधीश बीएन अग्रवाल, जीएस सिंघवी और आफताब आलम की खंडपीठ ने उच्च न्यायालयों को एडवोकेट्स एक्ट के अंतर्गत उचित क़ानून बनाकर इस तरह के मामलों को रोकने के निर्देश भी दिए. बार काउंसिल ऑफ इंडिया और स्टेट बार एसोसिएशन को उच्च स्तर के अनुशासन बनाने में नाकाम रहने पर निशाना बनाते हुए अदालत ने उम्मीद जताई कि भविष्य में इस तरह के उदाहरण दोहराए नहीं जाएंगे.

इससे पहले दिल्ली उच्च न्यायालय ने आरके आनंद और वरिष्ठ अधिवक्ता आईयू ख़ान–जो इस मामले के सरकारी वकील थे–को अवमानना का दोषी पाया था (एक स्टिंग ऑपरेशन में इस मामले के एक प्रत्यक्षदर्शी गवाह सुनील कुलकर्णी के साथ उन्हें समझौता करते हुए दिखाया गया था). उच्च न्यायालय ने इन दोनों को वरिष्ठ अधिवक्ता की पदवी से हटा दिया था. साथ ही चार महीने तक किसी भी कोर्ट में पैरवी करने से उन्हें रोक दिया गया था और उन पर 2000 रुपये का जुर्माना किया गया था.

ख़ान और आनंद द्वारा दायर याचिका पर सुनवाई करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने ख़ान को आरोपमुक्त कर दिया, जबकि आनंद की सज़ा बढ़ाने के निर्देश दिए. इस मसले पर अपनी नाराज़गी जताते हुए न्यायाधीश आफताब आलम ने फ़ैसले में कहा कि ऐसे वकील और उनकी संस्था–जिसे लोगों का विश्वास और भरोसा हासिल हो, जो जनता की आशाओं, आकांक्षाओं और मूल्यों को मानते हों और जनता की पहुंच में हों– की मदद के बिना लोकतंत्रिक समाज में कोई भी न्यायिक व्यवस्था संतोषजनक तरीक़े से काम नहीं कर सकती है.

आर. के. आनंद

आई. यू. खां

बीएमडब्ल्यू केस दरअसल गवाहों के मुकर जाने और दोषी संजीव नंदा के अमीर घराने से ताल्लुक रखने के कारण हमेशा विवादों में रहा. खंडपीठ ने चेतावनी के तौर पर कहा कि इस तरह के मामलों में बहुत अधिक सावधान रहने की ज़रूरत है ताकि लोगों का विश्वास बना रहे. अपने अवलोकन को इस मामले तक सीमित न करते हुए पीठ ने कहा कि ऐसे सभी मामले बाहरी हस्तक्षेप के कारण असफल होते हैं, जो पीड़ित के परिजनों के लिए दुखद हैं. सबसे महत्वपूर्ण यह है कि जब भी कोई ऐसा मामला होता है तो यह क़ानून और उस पर आधारित व्यवस्था का मज़ाक बनाता है.

सर्वोच्च न्यायालय में दायर याचिका में दोनों अधिवक्ताओं ने दिल्ली उच्च न्यायालय की अवमानना कार्रवाई का कड़ा विरोध किया था. उन्होंने कुलकर्णी की विश्वासनीयता, टीवी चैनल पर प्रस्तुत टेप और स्टिंग ऑपरेशन के औचित्य पर सवाल उठाए थे. हालांकि कोर्ट स्टिंग ऑपरेशन के प्रसारण के दौरान चैनल से हुई ग़लतियों से वाक़िफ़ था. कुलकर्णी– जो पूरे स्टिंग ऑपरेशन का सूत्रधार था– उसे उसकी अविश्वसनीयता की वजह से सरकारी गवाह के तौर से हटा दिया गया था. फिर भी कोर्ट ने इस तरह के भ्रष्टाचार को उजागर करने के लिए चैनल की कोशिश की सराहना की. सर्वोच्च न्यायालय ने स्टिंग ऑपरेशन के संबंध में और इस मामले में मीडिया की भूमिका के बारे में कहा कि तमाम ग़लतियों के बावजूद स्टिंग प्रोग्राम ने इस मामले में महत्वपूर्ण सहयोग दिया. सुप्रीम कोर्ट ने युवा टीवी रिपोर्टर के प्रयासों की सराहना भी की और कहा कि कुलकर्णी और आरके आनंद के संबंधों को उजागर करने के लिए की गई जांच ने उसे काफी प्रभावित किया.

सुप्रीम कोर्ट ने हाईकोर्ट में और स्टिंग ऑपरेशन के प्रसारण के समय टीवी चैनल की चीज़ों को जगह देने या न देने की बात दोहराई, ताकि भविष्य में दूसरे चैनल इससे सीख सकें. उसने कहा कि जो प्राइवेट चैनल इस समय देश में चल रहे हैं, वे काफी नए हैं. उनकी उम्र 18 से 20 वर्षों से ज़्यादा नहीं है. मानवीय क्रियाकलापों के हर पहलू की तरह चैनल भी हर तरह के हैं –कुछ अच्छे तो कुछ बेहद ख़राब. देश के अच्छे चैनल ख़बर दिखाने, रिपोर्टिंग में निष्पक्षता और वस्तुनिष्ठता, दर्शकों तक पहुंच और लोगों के विचार को प्रभावित करने की क्षमता में किसी भी विदेशी चैनल से कम नहीं हैं और बहुत से मामलों में विदेशी चैनलों से अच्छे हैं. हालांकि इसका यह मतलब नहीं है कि वे पक्षपात और पूर्वाग्रह से बिल्कुल स्वतंत्र हैं या वे ग़लतियां नहीं करते या कभी–कभी गंभीर मसले की सुधि नहीं लेते या वे सभी तरह के प्रोग्रामों में इसी तरह का समझदार रवैया अपनाते हैं. प्राइवेट टीवी चैनल अपने आप में बहुत बड़ा व्यापार है, जिससे वह व्यावसायिकता और पेशे की ज़रूरतों के बीच के असमंजस में फंसा है. दोनों हमेशा एक ओर नहीं जा सकते और उसके बाद टीवी चैनलों में व्यावसायिक हितों के लिए ख़बरों पर असर पड़ता है. मीडिया के अधिकतर शो टीआरपी (टेलीविजन रेटिंग प्वाइंट) प्राप्त करने के लिए होते हैं. ऐसा तब होता है, जब उच्च स्तरीय पत्रकारिता के पेशे पर व्यापारिक विचार हावी हो जाते हैं.

इस मामले से एक और महत्वपूर्ण मुद्दा जो सर्वोच्च न्यायालय के सामने आया है, वह वकीलों के बीच आचरण और पेशागत मूल्यों की गिरावट का है. दोनों अपीलकर्ताओं के आचरण को किसी अलग–थलग मामले की तरह नहीं देखा जाना चाहिए. सच्चाई तो यह है कि यह मामला वकीलों में मूल्यों की गिरावट का असली चेहरा दिखाता है. कुछ वकीलों के ग़लत आचरण को छोड़ भी दें तो बड़े वकील भी अपने अलग तौर–तरीक़ों पर चल रहे हैं. वे ऐसे मामलों में टीवी पर बहस करते या बयान देते नज़र आते हैं जो अभी न्यायालय में हैं और जिनमें वह शामिल हैं.

सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि अगर वकीलों के बीच पेशेगत गिरावट को रोका नहीं गया, तो इसके भारत में न्याय प्रक्रिया पर गंभीर असर होंगे. सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि बार काउंसिल इस मामले में अपनी जवाबदेही से मुंह नहीं मोड़ सकती. बार काउंसिलों ने वकीलों के हित, न्यायिक प्रक्रिया और जन कल्याण के मुद्दों पर अच्छा काम किया है, लेकिन उसे वकीलों और वकालत की गरिमा बनाए रखने के लिए और काम करने की ज़रूरत है. सर्वोच्च न्यायालय ने उम्मीद जताई कि अब काउंसिल इस मुद्दे को गंभीरता से लेगी और कम से कम अपने बनाए कोड का पालन कराने में गंभीरता बरतेगी.

सर्वोच्च न्यायालय ने बीएमडब्ल्यू मामले का संदर्भ देते हुए कहा कि ऐसे कई मामले देखने को मिलते हैं जिनमें कोई प्रभावशाली या अमीर होने के कारण ट्रायल को प्रभावित कर देता है. इस तरह का हर मामला क़ानून और व्यवस्था के लिए बेहद ख़तरनाक है और साथ ही राज्य के उच्च न्यायालयों के लिए भी एक ग़लत स्थिति है. ज़रूरी है कि उच्च न्यायालय ऐसे मामलों में अधिक सक्रिय भूमिका निभाए, ताकि लगे कि उच्च न्यायालय की नज़र सब पर है. उच्च न्यायालय के सही हस्तक्षेप से कोई मामला भटकने से बच सकता है. इसके अलावा उच्च न्यायालय की रजिस्ट्री की ओर से या किसी स्वतंत्र जांच अधिकारी की मदद से भी मामले पर नज़र रखी जा सकती है. संविधान में उच्च न्यायालय को ऐसे कई अधिकार हैं. समय आ गया है कि अब इन शक्तियों का इस्तेमाल हो और इसमें नए आयाम जोड़े जा सकें. भारतीय न्याय व्यवस्था को अक्षुण्ण रखने के लिए ऐसा करना बेहद ज़रूरी है.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback@chauthiduniya.com

प्रिय संपादक जी,

मैं चौथी दुनिया का नियमित पाठक हूं. वैसे तो यह अख़बार बहुत कम जगहों पर मिलता है. बावजूद इसके, मैं इसे दूर से भी लाकर पढ़ता ज़रूर हूं. यह मुझे इतना पसंद है कि सप्ताह भर का इंतज़ार भारी लगने लगता है. नया अंक मिला और शुरू से आख़िर तक पढ़ गया. हर बार की तरह बहुत रोचक लगा. कवर स्टोरी ने तो रुला ही दिया. बुंदेलखंड में पड़े सूखे और भूख के कारण किसानों की आत्महत्या पूरे देश के लिए शर्मनाक है. बुंदेलखंड के जिन किसानों ने हलफनामे के ज़रिए ख़ुदकुशी की इजाज़त मांगी है, वह राज्य और केंद्र सरकारों के ख़िलाफ़ आरोपपत्र है. क्या हमारे जनप्रतिनिधियों की कुंभकर्णी नींद किसान–मज़दूरों के लिए टूटेगी? उनकी समस्याओं को उठा कर आपने सराहनीय कार्य किया है.

अख़बार में विविध दुनिया तकनीकी ज्ञान से संपन्न है. इससे पाठकों को नई ख़ोज और बाजार में आई नई तकनीक से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारियां मिलती हैं. यह पन्ना युवाओं की जिज्ञासाओं को शांत करता है.

मेरी दुनिया में प्रकाशित कार्टून का तो जवाब ही नहीं. देश में तेज़ी से फैल रहे स्वाइन फ्लू के बारे में ग्राफिक के ज़रिए दी गई जानकारी बेजोड़ थी. आपने इसके साथ ही स्वास्थ्य विभाग की लचर व्यवस्था को उजागर करना भी नहीं छोड़ा. आशा करता हूं कि इस तरह के सामयिक मुद्दों को आप इसी तरह उठाते रहेंगे.

आपका
रोहित मंडल
नंदनगरी, दिल्ली.

जब तोप मुक़ाबिल हो

करकरे की मेहनत बेकार करने वालों की जांच क्यों नहीं

हेमंत करकरे को मालेगांव बम विस्फोट की जांच सौंपी गई थी. हेमंत ने जांच को पूर्णता पर ले जाने के क्रम में अपने संघ के सूत्रों का इस्तेमाल किया. हेमंत करकरे के पिता कमलाकर करकरे वामपंथी विचारधारा के थे, जबकि मां कुमुदिनी करकरे आरएसएस की बेहद सक्रिय और वरिष्ठ सदस्य थीं. हेमंत करकरे पर अपनी मां की छाप ज़्यादा थी और वह अक्सर संघ मुख्यालय में जाया करते थे.

हम लोगों में बहुत से ऐसे होंगे जिन्हें पिछली छब्बीस नवंबर को मुंबई में हुए आतंकी तांडव की याद होगी. हो सकता है कई ऐसे भी हों, जो इसे भूल गए हों. उस हमले में हमारे कई जांबाज़ शहीद हुए थे. हेमंत करकरे उनमें से एक थे. हेमंत करकरे की पत्नी ने घटना के तीन महीने के बाद कहा था कि *गोली से नहीं, सियासत से शहीद हुए हेमंत करकरे*. क्यों कहा था कविता करकरे ने ऐसा, उस समय हम नहीं समझ पाए, पर आज हमें उसे समझने की कोशिश करनी चाहिए.

हेमंत करकरे को मालेगांव बम विस्फोट की जांच सौंपी गई थी. हेमंत ने जांच को पूर्णता पर ले जाने के क्रम में अपने संघ के सूत्रों का इस्तेमाल किया. हेमंत करकरे के पिता कमलाकर करकरे वामपंथी विचारधारा के थे, जबकि मां कुमुदिनी करकरे आरएसएस की बेहद सक्रिय और वरिष्ठ सदस्य थीं. हेमंत करकरे पर अपनी मां की छाप ज़्यादा थी और वह अक्सर संघ मुख्यालय में जाया करते थे. उनके संपर्क संघ, विहिप और बजरंग दल के नेताओं से इसी कारण से थे, जिनका उन्होंने मालेगांव बम विस्फोट की जांच की तह में जाने के लिए बख़ूबी इस्तेमाल किया. हेमंत करकरे के सामने सवाल था कि वह अपनी आस्था का ध्यान रखें या अपने कर्तव्य पालन का, और करकरे ने अपनी धार्मिक आस्था को एक तरफ़ रख कर्तव्य पालन की कठोर चुनौती को अपना आदर्श बनाया. हेमंत करकरे की जांच में तथ्य खुलने लगे. उनके पास साध्वी प्रज्ञा के ख़िलाफ़ पुख्ता और पर्याप्त सबूत इकट्ठे हो गए. हेमंत करकरे की टीम के सामने दयानंद पांडे ने 29 सितंबर के मालेगांव धमाके में शामिल होने की बात भी क़बूल कर ली. हेमंत करकरे एटीएस के मुखिया थे और एटीएस ने काफी साख बना ली थी. उसने हेमंत करकरे की निगरानी में इस बात की सावधानी बरती कि आरोपियों के बयान को अदालत से मान्यता मिल जाए.

हेमंत करकरे ने अपनी शहादत से पहले इसे पूरी तरह पुख्ता कर लिया था कि दयानंद पांडे ही वह शख़्स है जिसने साध्वी प्रज्ञा सिंह और लेफ्टिनेंट कर्नल श्रीकांत प्रसाद पुरोहित के साथ मिलकर मालेगांव विस्फोट की साज़िश रची थी. कर्नल श्रीकांत पुरोहित, रामजी, राइका, सुनील डांगे, अभिनव भारत के संस्थापक सदस्य समीर कुलकर्णी, अजय राहिरकर, राकेश धावड़े, संजय चौधरी, राहुल पांडे, दिलीप पाटीदार, शिवनारायण सिंह, श्यामलाल साहू, धावले, रमेश उपाध्याय के क़बूलनामे और उनकी निशानदेही पर हासिल किए गए सबूत अदालत में सभी आरोपियों को अपराधी साबित करेंगे, इसका भरोसा करकरे को था. सभी आरोपियों के बयान पुलिस उपायुक्त के सामने दर्ज़ किए गए थे, जिन्हें मकोका अदालत ने मंज़ूर भी कर लिया था.

कर्नल पुरोहित ने कुछ आरोपियों को मिथुन चक्रवर्ती के नाम से नांदेड़ में जब बम बनाने की ट्रेनिंग दी थी, तब भी उनका रिश्ता साध्वी प्रज्ञा से था. करकरे ने पता लगा लिया था कि यह गिरोह न केवल मालेगांव धमाके में शामिल था बल्कि 2006 में नांदेड़ में हुए धमाकों में, 2003 में अजमेर धमाकों में, 2004 में जालना और परभणी बम धमाकों में तथा 2007 में पुणे के खिड़की स्थित वाइनयार्ड चर्च पर हमलों का भी ज़िम्मेदार है. हेमंत करकरे ने यह भी पता लगा लिया था कि समीर और साध्वी प्रज्ञा के पुराने रिश्ते थे, क्योंकि दोनों ही अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के सदस्य थे. हेमंत करकरे यहीं नहीं रुके. उनकी जांच ने उन्हें बताया कि साध्वी प्रज्ञा ने पंचमढ़ी, मध्य प्रदेश में अरबी और चीनी भाषा सीखी, जिसके लिए शिक्षक कर्नल पुरोहित ने उपलब्ध कराए. अहमदाबाद के एक आश्रम में पांच सौ लोगों को आतंक फैलाने की ट्रेनिंग भी कर्नल पुरोहित ने ही दी थी. हेमंत करकरे की जांच में साबित हुआ कि इस ग्रुप का नेटवर्क भारत से बाहर इस्लामिक देशों तक फैला हुआ था. वहां दहशत फैलाने का प्रशिक्षण तो दिया ही जाता था, साथ ही आर्थिक मदद भी दी जाती थी. विदेशों में फैले इनके साथी इन्हें आरडीएक्स भी उपलब्ध कराते थे. हेमंत करकरे ने इस बात की भी जांच की थी कि भारत में सक्रिय कुछ देशों की ख़ुफ़िया एजेंसियों की नांदेड़ और मालेगांव बम धमाकों में क्या कोई भूमिका थी? कुछ भारतीय साधुओं और एक देश के ख़ुफ़िया अधिकारियों के बीच क्या कोई तालमेल था? हेमंत करकरे की मौत के बाद इस बात की जांच नहीं हुई कि मुंबई की उस इमारत में, जिसमें ज़्यादातर इज़राइली नागरिक रहते थे, कैसे दो आतंकवादी दो महीनों तक रहे, वहां खाना व हथियारों का ज़ख़ीरा इकट्ठा करते रहे और किसी को पता ही नहीं चला.

हेमंत करकरे की जगह आए एटीएस चीफ के.पी. रघुवंशी ने पहला बयान तो यह दिया था कि जांच उसी दिशा में चलेगी जिसे हेमंत करकरे ने तय किया था. पर हुआ उल्टा. सभी आरोपी मकोका से बरी हो गए और अब साधारण न्यायायिक हिरासत में हैं. के.पी. रघुवंशी और महाराष्ट्र सरकार की सिफ़ारिश के बाद शहीद हुए लोगों को अशोक चक्र से सम्मानित किया गया, लेकिन शहीद सिपाही शिशिर शिंदे को केवल कीर्ति चक्र दिया गया.

हेमंत करकरे शहीद हो गए. बहसें चलीं, अख़बारों में शंकाएं भी आईं कि उनकी मौत कैसे हुई, लेकिन कोई जांच नहीं हुई. पर जिस बात पर सबसे ज़्यादा आश्चर्य है, वह यह कि हेमंत करकरे की सारी मेहनत पर पानी कैसे फिर गया. हेमंत करकरे ने इन सारे आरोपियों पर मकोका लगवाने के लिए सिफ़ारिश की थी. संघ, विहिप और बजरंग दल से जुड़े लोगों ने हेमंत करकरे पर काफी घटिया आरोप लगाए थे. हेमंत करकरे की शहादत के बाद इन आरोपियों पर मकोका लगा, लेकिन आरोप इतने लचर लगाए गए कि उन्हें अदालत ने मकोका लगाने लायक माना ही नहीं. अदालत में महाराष्ट्र पुलिस और सरकार ने कैसी पैरवी की कि उन पर से मकोका हटाने का अदालत ने निर्णय दे दिया. या तो आरोप लगाने में ही कोई चूक हो गई या फिर आरोपों को साबित करने में पुलिस और वकीलों ने असावधानी बरती. सरकार ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया और न ही मीडिया ने कोई छानबीन की कि यह कैसे हो गया.

हेमंत करकरे की जगह आए एटीएस चीफ के.पी. रघुवंशी ने पहला बयान तो यह दिया था कि जांच उसी दिशा में चलेगी जिसे हेमंत करकरे ने तय किया था. पर हुआ उल्टा. सभी आरोपी मकोका से बरी हो गए और अब साधारण न्यायायिक हिरासत में हैं. के.पी. रघुवंशी और महाराष्ट्र सरकार की सिफ़ारिश के बाद शहीद हुए लोगों को अशोक चक्र से सम्मानित किया गया, लेकिन शहीद सिपाही शिशिर शिंदे को केवल कीर्ति चक्र दिया गया. शिशिर शिंदे सीएसटी पर तैनात थे, जहां उन्होंने हमलावरों का डट कर मुक़ाबला किया और शहीद हो गए.

आख़िर में हेमंत करकरे के हिंदुत्व के बारे में. एक हिंदुत्व प्रज्ञा सिंह और कर्नल पुरोहित का है जो निरपराधियों की हत्या कर दहशत फैलाता है और दूसरा हिंदुत्व हेमंत करकरे का है जो उन्हें कर्तव्य पर डटे रहने की प्रेरणा देता है, यहां तक कि जान देने में भी आगे रहना सिखाता है. हेमंत करकरे के हिंदुत्व से प्रज्ञा और पुरोहित जैसे लोग भले सीख न लें लेकिन लाखों प्रेरित होंगे, पर कहीं न कहीं शर्म भी आएगी कि शहीद हेमंत करकरे की मेहनत पर जानबूझ कर पानी फिर गया और हमारी सरकार ने वकीलों और पुलिस अधिकारियों पर ज़िम्मेदारी तय नहीं की, जिनकी लापरवाही की वजह से मकोका हटा. अगर ऐसा ही रहा तो ये अपराधी आसानी से छूट जाएंगे, क्योंकि हमारी क़ानून–व्यवस्था का दुरुपयोग अक्सर होता है, और अपराधी शान से आज़ाद घूमते रहते हैं. अभिनव भारत की अध्यक्ष हिमानी सावरकर हैं, जो नाथू राम गोडसे के भाई की बेटी हैं और वीर सावरकर की बहू. इसी संगठन ने मालेगांव सहित कई जगहों पर धमाकों की साज़िश रची. आज भी यह संगठन काम कर रहा है. क्या कोई इस पर नज़र रख रहा है या हमें अभी कई और धमाकों का इंतज़ार है, जिसमें बेकसूर मारे जाने वाले हों?

संपादक

editor.chauthiduniya.com

एक अनैतिक दुनिया के प्रवेशद्वार पर भारत

डॉ. मोहम्मद मंज़ूर आलम

समलैंगिक संबंधों पर दिल्ली उच्च न्यायालय के फ़ैसले से भारत की शांत और बहुसंख्यक जनता को धक्का लगा है. फ़ैसले में न्यायालय ने आपसी सहमति से दो वयस्कों के बीच बनने वाले समलैंगिक संबंधों को ग़ैर–आपराधिक करार दिया है. इस फ़ैसले से हैरान लोगों के लिए यह फ़ैसला भारत के बड़े धर्मों से लिए गए मूल्यों पर हमला करता है, जो समलैंगिक संबंधों को ग़लत ठहराते हैं.

भारतीय दंड संहिता की धारा 377 पर यह फ़ैसला किसी टैबू (सामाजिक निषेध) के ख़िलाफ़ स्वतंत्रवादी दृष्टिकोण पर आधारित है. कोर्ट को लगता है कि भारत की सहनशील और सौम्य संस्कृति के लिए यही दृष्टिकोण सही है. इस विचार के तहत स्वतंत्रता की सबसे ज़्यादा अहमियत है, ऐसे में सारा ज़ोर पारंपरिक नैतिकता से हटाकर चुनने की आज़ादी पर दे दिया गया है.

भारतीय दंड संहिता की धारा 377 पर यह फ़ैसला किसी टैबू (सामाजिक निषेध) के ख़िलाफ़ स्वतंत्रवादी दृष्टिकोण पर आधारित है. कोर्ट को लगता है कि भारत की सहनशील और सौम्य संस्कृति के लिए यही दृष्टिकोण सही है.

समलैंगिकता के ग़ैर–अपराधीकरण के पैरोकार, पश्चिम की तरह, इस फ़ैसले का स्वागत कुछ सुपरिचित दलीलों के साथ कर रहे हैं. इनमें से एक कहता है कि एक उदारवादी जनतांत्रिक समाज किसी व्यक्ति पर दबाव डालने, उसे प्रताड़ित करने या उसे ब्लैकमेल करने की राज्य की शक्ति को रोकता है और उसे स्वतंत्रता के नियमों के प्रति जवाबदेह बनाता है. अब क्योंकि यह फ़ैसला राज्य–आमतौर पर पुलिस–को नागरिकों के शयनकक्षों में झांकने से रोकता है, इसलिए कुछ विशेष सेक्सुअल अभिरुचि वाले लोगों के अलावा भी इसका स्वागत सभी स्वतंत्रतावादी समूहों ने किया है. सार्वजनिक तौर पर प्रेम और निकटता का खुला प्रदर्शन सही नहीं है, चाहे वह किसी पति–पत्नी के मामले में हो या इस फ़ैसले के बावजूद समलैंगिकों के मामले में–हो.

पुलिस के लोगों के घरों में घुसने की ताक़त पर रोक सिर्फ़ समलैंगिक बिरादरी के लिए ही नहीं, किसी भी लोकतांत्रिक व्यक्ति के लिए एक राहत वाली ख़बर है. यह रोक पुलिसिया फ़र्ज़ी मुठभेड़ों और पुलिस के संरक्षण में चल रहे संगठित फिरौती रैकेटों के संदर्भ में तो और अहम है. भारत के किसी भी नागरिक को पुलिस प्रताड़ना और ब्लैकमेल से बचाने वाले फ़ैसले से कोई दिक़्क़त नहीं होगी. हालांकि यह मामला इतना सीधा नहीं है. यहां समाज के नैतिक मूल्यों पर हो रहे असर पर भी न्यायपालिका को ध्यान देना चाहिए. किसी लोकतांत्रिक समाज में स्वतंत्रता सर्वोच्च और पूर्ण है और इसकी अहमियत से हर कोई सहमत है. हालांकि यह स्वतंत्रता जिस धार्मिक, सांस्कृतिक और नैतिक दायरे में काम करती है और जिसके मध्य में इसे जगह दी गई है, उसे भी नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता.

लोग ऐसी दुनिया में बारे में काफी चिंतित हैं, जिसमें उनके बच्चे रहा करेंगे. क्या उस समय खेती, उद्योगों या घरों में इस्तेमाल के लिए साफ पानी होगा? क्या उस समय की हवा एक स्वस्थ ज़िंदगी के लिए सही होगी? या फिर वह दूषित और ज़हरीले तत्वों से भरी होगी? क्या उस समय की दुनिया में उचित मात्रा में फल, सब्ज़ियां और दूसरी ज़रूरी चीज़ें होंगी? पर्यावरण की स्थिति में हो रही गिरावट– हमारे भविष्य की पीढ़ी को ध्यान में रखते हुए–वर्तमान पीढ़ी के लोगों के लिए एक बेहद अहम मामला है. यह सब जानते हुए भी क्या यह समझना इतना मुश्किल है कि क्यों यह पीढ़ी भविष्य की दुनिया के नैतिक वातावरण को लेकर चिंतित है?

यह नैतिक संसार गैलिलीयो, कॉपरनिकस या आइंस्टीन का संसार नहीं है. यह नबियों, अवतारों, साधुओं, संतों और ऋषियों का संसार है. जिस तरह कोई धार्मिक ढांचा किसी वैज्ञानिक समस्या के समाधान में फिट नहीं बैठेगा, उसी तरह कोई वैज्ञानिक तरीक़ा या तथाकथित वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी हमारे सामने मौजूद नैतिक चुनौतियों को समझा नहीं सकता. नैतिक वर्ग दरअसल फीज़िक्स या बायोलॉजी की किसी किताब से नहीं, धार्मिक और आध्यात्मिक परंपराओं से बनते हैं.

समस्या यह है कि हम एक ऐसी दुनिया में रहते हैं जहां–कीट्स के शब्द उधार लें तो–चीज़ें बिखर जाती हैं क्योंकि जो केंद्र है, वही उन्हें पकड़े नहीं रख सकता. जहां आधुनिकतावाद ने संपूर्णता की कमी (लैक ऑफ अबसॉल्यूट्स) की परिभाषा चुनी तो उत्तर–आधुनिकता का ज़ोर विकेंद्रीकरण पर था. ये दोनों चीज़ें साथ मिलकर–यानी संपूर्णता की कमी और अंधाधुंध विकेंद्रीकरण–सामाजिक निषेधों जैसे समलैंगिकता और अंतर–पारिवारिक संबंधों को ख़त्म कर देगा. मेरे और मेरे जैसे कई भारतीयों के लिए बिना किसी तय संदर्भ बिंदु के एक नैतिक विश्व, एक दिशाहीन या दिशाज्ञान रहित विश्व है. मेरे जैसे लोग– मतलब अधिकतर भारतीय– यह भरोसा चाहते हैं कि हम किसी अनिश्चित नैतिक विश्व की ओर तो नहीं बढ़ रहे.

इसीलिए मेरी गुजारिश है कि ऐसे क़ानून लाएं जाएं, जिनसे आमजन की ज़िंदगी की निजता बनी रहे, राज्य को लोगों के घरों में झांकने की इजाज़त न हो, पुलिस के ब्लैकमेल और वसूली के लिए नए रास्ते न खुलें और इन सबके साथ ही यह क़ानून हमारे वर्षों पुराने सामाजिक निषेधों को ध्वस्त भी करता नज़र न आए. हमारे देश के सर्वश्रेष्ठ क़ानूनी दिमाग़ एक साथ जुटें और एक ऐसा क़ानून गढ़ें जो न तो समाज के किसी एक हिस्से को निशाना बनाए, न ही पुलिस की ताक़त और दखल को बढ़ावा दे और साथ ही देश की ख़ामोश बहुसंख्यक जनता की आशंकाओं को ख़त्म करे. यहूदी, ईसाई और इस्लामिक धर्मग्रंथों में इस बात का ज़िक्र है कि ख़ुदा का कहर उन गुमराह और सोडोमी लोगों पर बरपेगा जो समलिंगी संबंधों में लिप्त हों. मैं, मेरे जैसे अनेक लोग, यह दिखावा नहीं कर सकते कि वे ख़ुदा के कहर से नहीं डरते. मेरी गुजारिश है कि इस मुद्दे पर भारत के अधिकतर लोगों के मन में जो आशंकाएं हैं, उनका ध्यान रखते हुए इस मामले में क़दम उठाए जाएं. हालांकि इस बात का ध्यान रखा जाए कि इससे राज्य को जनता के ख़िलाफ़ और शक्ति न मिले. क़ानूनी बिरादरी और केंद्र सरकार को इन विरोधाभासी और एक–दूसरे से पूरी तरह अलग स्थितियों में किसी तरह सामंजस्य बिठाना होगा.

(लेखक इंस्टीट्यूट ऑफ ऑबजेक्टिव स्टडीज (आईओएस), नई दिल्ली के अध्यक्ष हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

ख़ुफ़िया एजेंसियों के सीक्रेट

एफबीआई का मुख़बिर/क़ानून का मुजरिम/अमेरिका का हीरो

मुख़बिर/मुज़रिम/हीरो-माफ कीजिएगा, यह किसी सरकारी फार्म में पूछा गया सवाल नहीं है कि सही जवाब पर निशान लगाना हो. दरअसल यह एक आदमी की ज़िंदगी की कहानी है. इस आदमी की दास्तां में कई अजीबोग़रीब पेंच हैं. यह आदमी एक सज़ायाफ्ता मुज़रिम है, सालों एफबीआई का मुखबिर रह चुका है और कुछ की मानें तो यह अमेरिका का एक सच्चा हीरो है. आख़िर सच्चाई क्या है? ऊपर दिए विकल्पों में कौन सा सही है? एक भी सही नहीं है या सारे सही हैं? आख़िर कौन है यह, जिसकी ज़िंदगी ही एक अबूझ पहेली है. एफबीआई की कहानी की इस कड़ी में सामना उसके असली चेहरे से..

पावस नीर

अपराध का कोई एक चेहरा नहीं होता. सारे अपराध काले भी नहीं होते. सफेदपोशी में भी सारे अपराध नहीं होते. मारियो पूजो के शब्द उधार लें, तो अपराध दरअसल अपराध नहीं, शुद्ध व्यापार है (देयर इज़ नथिंग पर्सनल, इट्स बिज़नेस, प्योर बिज़नेस). कुछ अपराध दिन के उजाले में, समाज में सम्मानजनक स्थिति रखने वाले, बड़ी पहुंच और ऊंचे रूतबे वाले भी करते हैं. ये कोई क़त्ल, चोरी या डकैती नहीं करते लेकिन करोड़ों के व्यारे-न्यारे यहां भी होते हैं. जुर्म की भाषा में यह व्हाइट कॉलर क्राइम (या फिर कहें व्यापार) कहलाता है.

काले अपराध की परत-दर-परत उधाड़ने वाला एफबीआई इस व्हाइट कॉलर अपराध की छानबीन में भी पीछे नहीं है. ऐसे ही एक व्हाइट कॉलर अपराध की कहानी शुरू हुई-1992 में. उन दिनों एफबीआई को कॉरपोरेट एसपायनेज़ (व्यापारिक सूचनाओं का अवैध लेनदेन) के मामले की छानबीन का ज़िम्मा मिला था. वह अमेरिका में खाने-पीने की चीज़ों के व्यापार से जुड़ी कंपनी एडीएम (आर्चर डेनियल्स मिडलैंड) के अधिकारियों से इस मामले में पूछताछ कर रही थी. अब तक उसके जांच के नतीजे किसी काम के नहीं थे. ऐसे में एडीएम के ख़िलाफ़ मामला ख़त्म करने की बात सोची जा रही थी. उसी वक़्त, पूछताछ के आख़िरी दौर में एक एडीएम अधिकारी ने कुछ ऐसी बात बताई जिससे एफबीआई सकते में आ गई. इस अधिकारी ने जो ख़ुलासा किया था उससे एसपायनेज़ के मामले में तो कोई मदद नहीं मिली लेकिन एक नया मामला खुल गया. यह कल्पना से भी कहीं भयावह सच था.

दरअसल उस अधिकारी ने बताया था कि एडीएम में वह और उसके साथी मिलकर चीज़ों- ख़ासकर लायसीन नाम के एक अमीनो एसिड- के दाम तय करने का काम करते हैं. यह एक बहुत बड़ा अपराध था क्योंकि इससे जनता और सरकार को बड़ा नुक़सान होता था और कंपनी को करोड़ों का फ़ायदा. यह मामला किसी एक कंपनी का ही नहीं था, इसमें कई देशों की कंपनियां शामिल थीं. इस पूरे मामले का ख़ुलासा करने वाला व्यक्ति एडीएम का वाइस-प्रेसीडेंट और भावी प्रेसीडेंट था. उसका कहना था कि वह अपनी कंपनी के कई बड़े अधिकारियों के साथ रिश्वत और धोखाधड़ी के ज़रिए दाम तय करवाने के काम में शामिल रहा था. इस पूरे मामले का ख़ुलासा करने की बात पर उसने कहा कि ऐसा उसने अपनी पत्नी के कहने पर किया. उस अनोखे आदमी का नाम था- मार्क विटक्रे.

मार्क विटक्रे कंपनी का सबसे तेज़ी से उभरता सितारा था और उसे कंपनी के अधिकतर मामलों की पूरी जानकारी थी. एफबीआई को उसके साथ आने से बहुत फ़ायदा हुआ. अगले तीन वर्षों तक मार्क विटक्रे पहले की तरह अपने ऑफिस जाता रहा लेकिन उसके साथ एफबीआई का दिया हुआ ट्रांसमीटर होता था. इसके ज़रिए एफबीआई ने एडीएम और साथी कंपनियों के सारे राज़ जुटा लिए. दाम तय करने के इस अपराध में एफबीआई ने एडीएम पर मुक़दमा चलाया तो विटक्रे उसका सबसे बड़ा गवाह था. इस मामले में अमेरिकी इतिहास का सबसे बड़ा एंटीट्रस्ट (धोखाधड़ी) का मुक़दमा चला. अदालत ने विटक्रे के जुटाए सबूतों के आधार पर एडीएम को 100 मिलियन डॉलर यानी 500 करोड़ रुपए के जुर्माने की सज़ा सुनाई. इसके अलावा दूसरे याचिकाकर्ताओं को भी कंपनी को बड़े पैमाने पर मुआवज़ा चुकाना पड़ा. ऐसा लगा कि अमेरिकी इतिहास के सबसे बड़े व्हाइट कॉलर अपराध का पटाक्षेप हो चुका था, लेकिन असली कहानी तो अभी बाक़ी थी. यह कहानी मार्क विटक्रे के दूसरे चेहरे की थी. मुख़बिर के तौर पर विटक्रे को पूरी दुनिया जान गई थी. अब मुज़रिम विटक्रे की बारी थी.

दरअसल जब मामला कोर्ट में पहुंचा तो एफबीआई का यह स्टार गवाह ख़ुद ही मुश्किलों में फंस गया. मुश्किल यह थी कि मार्क विटक्रे एफबीआई का सबसे बड़ा मुख़बिर होने के साथ-साथ अपनी कंपनी के फंड में धोखाधड़ी भी कर रहा था. उसपर आरोप लगाया कि उसने अपनी कंपनी के फंड से नौ मिलियन डॉलर से भी ज़्यादा का ग़बन कर लिया था. उसके काम करने का तरीक़ा बड़ा सीधा और सरल था. उसने कई फ़र्ज़ी कंपनियां बनाईं, उनके नाम से एडीएम को बिल भेजे और फिर उसके पैसे अपने अकाउंट में जमा करा लिए. जब ये बिल एडीएम के पास पहुंचते तो उन्हें पास कराने के लिए एक वाइस-प्रेसीडेंट के हस्ताक्षर की ज़रूरत पड़ती थी, ज़ाहिर तौर पर यह काम मार्क विटक्रे ख़ुद करता था. यह भी ख़ुलासा हुआ कि विटक्रे को असल में बाई-पोलर डिसॉर्डर यानी मूड में अचानक बदलाव की समस्या थी.

इन ख़ुलासों से एफबीआई और अमेरिकी जस्टिस डिपार्टमेंट के बीच खींचातानी शुरू हो गई. एफबीआई चाहती थी कि मार्क विटक्रे को उसके योगदान की वजह से सज़ा में छूट मिले, वहीं जस्टिस डिपार्टमेंट उसे सज़ा दिलवाने के हक़ में था. अंत में विटक्रे को दस साल की सज़ा हुई.

सबसे अजीब बात यह थी कि यह सज़ा एडीएम के दूसरे लोगों की दी गई सज़ा से तीन गुना ज़्यादा थी. कई लोगों को लगा कि विटक्रे को मिली सज़ा बहुत सख्त थी. कुछ लोगों ने यह भी आरोप लगाया कि विटक्रे को एडीएम के ख़िलाफ़ काम करने की सज़ा मिली है. साथ ही विटक्रे को राष्ट्रपति से क्षमादान दिलाने की कोशिशें तेज़ हो गईं. हालांकि इस समय विटक्रे के परिवार ने गजब की एकजुटता दिखाई. जिस भी जेल में विटक्रे को रखा जाता, उसका परिवार उसी शहर में रहने आ जाता और हर हफ़्ते उससे मिला करता.

उधर विटक्रे को माफी दिलवाने की कोशिश में लगे लोगों में कई बड़े नाम भी शामिल हो गए. हालांकि साढ़े आठ साल बाद मार्क विटक्रे को रिहाई मिली. इसके तुरंत बाद उसे कैलिफोर्निया की एक कंपनी साइप्रस सिस्टम्स में मुख्य ऑपरेशनल अधिकारी का पद मिल गया. 2008 में उनके मामले के निरीक्षक रहे पूर्व एफबीआई एजेंट पेसली ने एक बयान में कहा कि अगर विटक्रे पर धोखाधड़ी का आरोप न लगा होता तो वह एक राष्ट्रीय हीरो होते, सच कहूं तो वह वास्तव में एक हीरो हैं.

फ़िलहाल मार्क विटक्रे साइप्रस सिस्टम्स में सीओओ और प्रेसीडेंट ऑपरेशंस के पद पर काम कर रहा है. उसकी ज़िंदगी पर एक फिल्म-द इनफॉरमेंट- बन रही है जिसमें उसका किरदार मैट डेमन निभा रहे हैं. उसके समर्थक अभी भी उन्हें हीरो मानते हैं, जस्टिस डिपार्टमेंट की नज़रों में वह अभी भी एक मुज़रिम है तो एफबीआई उसे अपने सबसे क़ामयाब व्हाइट कॉलर क्राइम मिशन का स्टार मुख़बिर मानती है. विटक्रे को कौन सा चेहरा पसंद हैं, कोई नहीं जानता. आप क्या मानते हैं, आप ख़ुद फ़ैसला कीजिए.

pawas@chauthiduniya.com

आख़िर मार्क विटक्रे का क्या था असली चेहरा? इनसेट में मार्क की 1995 की तस्वीर

ज़रा हट के

सबसे बड़े दर्पण वाला टेलीस्कोप

ब्रह्मांड की गहराइयों में झांकने के लिए एक से एक दूरदर्शी (टेलीस्कोप) पृथ्वी पर हैं. इस समय संसार के सबसे बड़े टेलीस्कोप-अमेरिका के हवाई द्वीप पर *केक1* और *केक2,* अमेरिका के ही एरिज़ोना के माउंट ग्रैहम पर *एलबीटी* और चिली की सेरो पारानाल पहाड़ियों पर दक्षिण यूरोपीय *वीएलटी* जैसे टेलीस्कोप हैं. पिछली 28 जुलाई से एक और नाम इस सूची में जुड़ गया है- स्पेन के ला पाल्मा द्वीप पर *ग्रांतेकान* (ग्रान टेलीस्कोपियो कनेरिस). यह संसार का सबसे बड़ा दर्पण दूरदर्शी (मिरर टेलीस्कोप) है.

किसी 14 मंज़िली इमारत जितना बड़ा यह दूरदर्शी 400 टन भारी है और 2400 मीटर ऊंची एक पहाड़ी पर स्थित है. इसे बनाने में सात साल लगे हैं. इस पर ख़र्च आया है 13 करोड़ यूरो. 10 मीटर 40 सेंटीमीटर व्यास वाला उसका संसार का अब तक का सबसे बड़ा दर्पण जर्मनी की एक नामी कंपनी शोट ने बनाया है. यह दर्पण अतिशुद्ध कांच वाले 36 अलग-अलग टुकड़ों को जोड़ कर बना है और 18 टन भारी है. यह टेलीस्कोप तेल की एक पतली परत पर इस तरह तैरता है कि उसे हाथ से घुमाया-फिराया जा सकता है. इसे ला पाल्मा में लगाने की भी एक ख़ास वजह है. ला पाल्मा में एक जैसी हवा बहती है. आकाश हमेशा साफ़ रहता है. रातों को खुली रोशनी करने पर क़ानूनी रोक है. इसलिए खगोल वैज्ञानिक आशा करते हैं कि वे इस दूरदर्शी की सहायता से ब्रह्मांड की गहराइयों में सरलता से झांक सकेंगे. ग्रांतेकान वेधशाला के मुख्य खगोलविद नीदरलैंड के रेने रुटन बताते हैं कि इस दूरदर्शी से, जो हमारी आंख की 40 लाख पुतलियों के बराबर है, हम अपने सौरमंडल के बाहर के ग्रहों और तारों को और भी बेहतर ढंग से देख-समझ सकते हैं. ग्रांतेकान नए

ग्रहों और ग्रहमंडलों की खोज में ही सहायक नहीं बनेगा, वह ब्लैक होल जैसे ब्रह्मांड के अदृश्य रहस्यों की टोह लेने में भी उपयोगी सिद्ध होगा. ग्रांतेकान टेलीस्कोप के साथ लगा एक कैमरा गामा विकिरणों को दर्ज़ करेगा, जिससे ब्लैक होल को पहचाना जा सकता है.

हालांकि ग्रांतेकान भी बहुत लंबे समय तक संसार का सबसे बड़ा टेलीस्कोप नहीं रह पाएगा. उसके लगाए जाने के लगभग साथ ही अमेरिका से ख़बर आई है कि वहां हवाई द्वीप पर 2018 तक 30 मीटर व्यास वाले, यानी ग्रांतेकान से भी लगभग तीन गुना अधिक व्यास वाले और भी बड़े दूरदर्शी का निर्माण किया जाएगा. समझा जाता है कि यूरोपीय देशों का 40 मीटर से भी अधिक व्यास वाला यूरोपियन अतिविशाल टेलेस्कोप (ईईएलटी) भी ला पाल्मा द्वीप पर ही बनेगा.

पेट में चला गया लाखों का हीरा

जानवरों से प्यार करना किसे अच्छा नहीं लगता लेकिन अगर इस दुलार की क़ीमत लाखों में चुकानी पड़े तो? कुछ ऐसा ही वाकया ब्रिटेन में एक महिला के साथ हुआ. एक सुअर को पुचकारना महिला को महंगा पड़ गया. प्यार के बदले सुअर ने उस बेचारी महिला की 30 साल पुरानी बेशक़ीमती हीरे की अंगूठी निगल ली. इस अजीबोग़रीब वाकये से हैरान परेशान इस महिला एनी मून का कहना है कि वह लंदन के पास एक फ़ार्म की सैर के लिए गई थी. पॉल कैगिल नाम के किसान ने अपने इस फ़ार्म को आगंतुकों के लिए खोला हुआ है और कई जानवर भी पाले हुए हैं. इन जानवरों में कई सुअर हैं, जिन्हें देखकर महिला का प्यार उमड़ आया.

एनी एक सुअर को देखने के लिए उसके बाड़े के पास आई और उसे पुचकारना शुरू कर दिया. लेकिन खेल-खेल में सुअर ने उनकी अंगूठी का हीरा निकाल लिया और एनी के देखते-देखते फट से उसे गटक लिया.

यह सब कुछ इतनी जल्दी हुआ कि एनी को कुछ सोचने-समझने का समय भी नहीं मिल पाया. उसके बाद कोशिशें शुरू हुई अंगूठी का हीरा तलाशने की. इसके लिए एहतियातन सुअरबाड़ा छान मारा गया लेकिन नाकामी ही हाथ लगी. काफ़ी देर तक हीरा खोजने के प्रयास में जुटे किसान ने कहा कि उन्होंने सारी कोशिश कर ली है, इसके बावजूद वह अपनी तलाश जारी रखेंगे. किसान ने अपने सुअर पर भरोसा जताते हुए कहा कि वह एनी को नुक़सान नहीं पहुंचाना चाहता था, बस उसने अंगूठी का हीरा निगल लिया. एनी का कहना है कि वह अंगूठी के इस तरह ग़ायब होने की कल्पना नहीं कर सकती और उसकी एक ख़ास भावनात्मक अहमियत थी.

एनी ने अंगूठी की क़ीमत करीब डेढ़ हज़ार पाउंड थी यानी क़रीबन 75 हज़ार रूपये. उन्हें यह अंगूठी तीस साल पहले शादी में पति की तरफ़ से मिली थी. अब भले ही महिला को इसका दुख सता रहा हो लेकिन घटना इतनी दिलचस्प थी कि आग की तरह फैल गई और फार्म पर लोगों का मज़मा लग गया. ज़ाहिर सी बात है, पहुंचने वाले महिला के दुर्भाग्य पर अफ़सोस तो जता रहे ही थे लेकिन उससे भी ज़्यादा इस घटना के बारे में सुन-सुन कर मज़े ले रहे थे.

पिघलते जा रहे हैं दुनिया के बड़े ग्लेशियर

दुनिया भर में ग्लोबल वार्मिंग को लेकर चिंता जताई जा रही है. दुनिया भर में मौसम बदलने के साथ-साथ इसका सबसे अधिक असर मीठे पानी के सबसे बड़े स्रोतों और ग्लेशियरों पर पड़ रहा है. पिछले वर्षों में वैज्ञानिकों ने कई ग्लेशियरों के तेज़ी से पिघलने की घटनाएं दर्ज़ की हैं. अब बीबीसी ने एक ऐसे शोध के बारे में खुलासा किया है, जिससे पता चला है कि अंटार्कटिका के सबसे बड़े ग्लेशियरों में से एक अत्यधिक तेज़ी से पिघल रहा है. शोध के अनुसार 10 साल पहले यह ग्लेशियर जिस रफ़्तार से पिघल रहा था, उसके मुक़ाबले अब यह चार गुना तेज़ी से पिघल रहा है. उपग्रह की मदद से लिए गए आंकड़ों के मुताबिक़ पश्चिमी अंटार्कटिका स्थित पाइन आइलैंड ग्लेशियर हर साल 16 मीटर नीचे धंसता जा रहा है. 1994 से अब तक ग्लेशियर की सतह 90 मीटर तक नीचे जा चुकी है.

ज़ाहिर है अगर इस गति से पिघलना जारी रहा तो इसके कारण समुद्री जल स्तर को लेकर गंभीर समस्याएं हो सकती हैं. कुछ ब्रिटिश वैज्ञानिकों के द्वारा किया गया यह शोध जियोफ़िज़िकल रिसर्च लेटर्स में प्रकाशित हुआ है. शोध करने वाली टीम का नेतृत्व यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन के प्रोफ़ेसर डंकन विंघम कर रहे थे. उनके मुताबिक जिस रफ़्तार से यह ग्लेशियर 15 साल पहले पिघल रहा था, उसके आधार पर किए गए आकलन के मुताबिक़ इस ग्लेशियर को क़रीब 600 साल तक बने रहना था, लेकिन नए आंकड़ों के आधार पर अब कहा जा सकता है कि इस ग्लेशियर की उम्र मात्र 100 साल ही रह गई है. शोध करने वालों में से एक लीड्स विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर एंड्रयू शेफ़र्ड का कहना है कि ग्लेशियर के बीच में से पिघलने से विश्व भर में समुद्री जलस्तर में क़रीब तीन सेंटीमीटर की बढ़ोत्तरी होगी. उन्होंने कहा, हम जानते हैं कि ये ग्लेशियर कुछ समय से असंतुलित स्थिति में था, लेकिन ये अब ग्लेशियर बेहद तेज़ी से पिघल रहा है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

ऐसे बनाए जाते हैं पाकिस्तान में क़साब

पाकिस्तान में ऐसे कई इलाक़े हैं जहां की जनता ग़रीबी से त्रस्त है. कहने को लोकतंत्र है, राजनीतिक पार्टियां है, लेकिन अपने नसीब पर रोने वाले इन ग़रीबों को महज़ वादों के अलावा कुछ नहीं मिला. इसलिए पाकिस्तान जिहादियों के फलने-फूलने का सबसे उपजाऊ इलाक़ा साबित हो चुका है. पाकिस्तान के अख़बारों और टेलीविजन चैनलों पर इस तरह की रिपोर्ट आए दिन देखने को मिलती है. ग़रीबी से जूझ रहे इन लोगों के पास खाने का एक दाना नहीं है, लेकिन जुम्मे रोज़ मस्जिद की मीनार से गूंजती हैं : कश्मीर में तुम्हारे भाई को पिछले कई दशकों से मुस्लिम बाहुल्य पाकिस्तान में आने के हक़ को नकारा जा रहा है. उन्हें आज़ाद कराना है. उनकी आज़ादी के लिए दुआ करो. बोस्निया में तुम्हारे भाइयों का रोज़ सरेआम क़त्ल हो रहा है. उन्हें आज़ाद कराना है. उनकी आज़ादी के लिए दुआ करो...

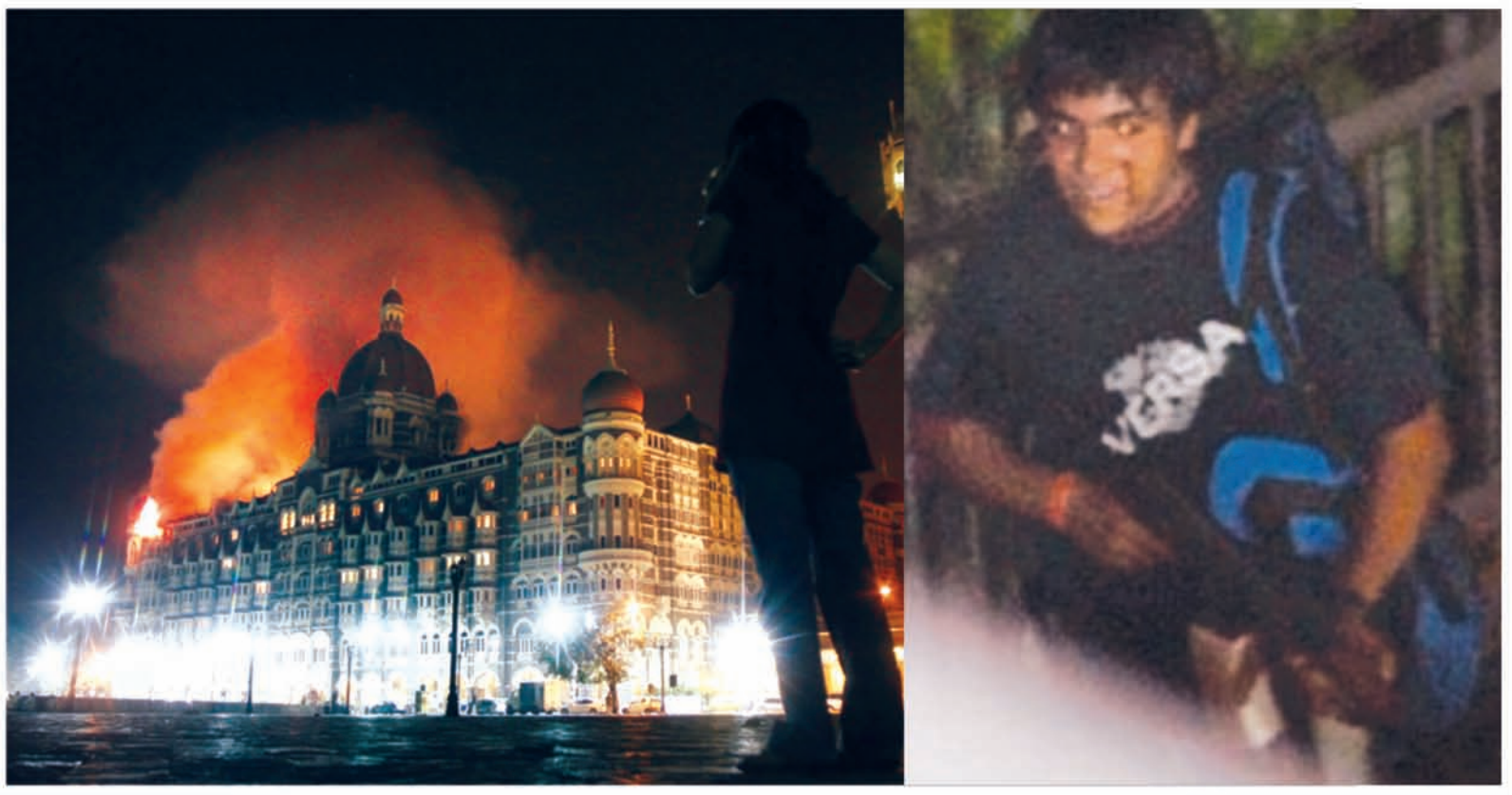

पाकिस्तान के पंजाब का फरीदकोट गांव मुंबई हमले में पकड़े गए आतंकी आमिर अजमल क़साब का ठिकाना है. उकाटा ज़िले का यह गांव ग़रीबी में डूबा है. यहां का हर परिवार उधार में डूबा था. क़साब के पिता इमाम क़साब के पास खेती के लिए ज़मीन नहीं है. वह जाति से कसाई है, जिसे क़साब या क़ुरैशी भी कहा जाता है. वह अपने पांच बच्चों का पेट भरने के लिए सड़क किनारे दही-पकौड़े की दुकान लगाता है. बच्चों को शिक्षा देने की हैसियत नहीं है. वैसे भी इस इलाक़े में शिक्षा कोई मायने नहीं रखती. बड़ा भाई अफ़ज़ल (उम्र 22 साल) मज़दूरी करता है और छोटा भाई मुनीर (उम्र 11 साल) स्थानीय मदरसे में पढ़ता है. बहन रुकैया (उम्र22 साल), और सुरैया (उम्र 14 साल) को मदरसे की अलिफ़-बे-ते-से भी नसीब नहीं हुई.

आमिर क़साब ने चौथी तक मदरसे में पढ़ा और फिर ग़रीबी और लाचारी के चलते साल 2000 में मदरसा छोड़ लाहौर चला गया. वहां अपने भाई अफ़ज़ल के साथ छोटी-मोटी मज़दूरी करने लगा. साल 2005 में वापस अपने गांव पहुंचने पर क़साब का पिता से झगड़ा हुआ और उसे वापस लाहौर आना पड़ा. इस बार उसे भाई ने भी आसरा नहीं दिया. उसने अली हज़वेरी दरबार के अनाथालय में शरण ले ली. यहां उसकी मुलाक़ात शफ़ीक़ से हुई जो कैटरिंग का काम करता था. यहीं काम करते हुए क़साब लाहौर और रावलपिंडी के अपराध से रूबरू हुआ. यह वही इलाक़ा है जहां से मरकज़-उद-दवा या फिर लश्कर-ए-तैयबा आतंकियों की भर्ती करता है. हालांकि, शफ़ीक़ एक सीधा-सादा व्यापारी था लेकिन वहां काम करते हुए क़साब अटौक के मुज़फ्फर लाल ख़ान के संपर्क में आया जिसके साथ वह अपराध की दुनिया में घुस गया. वे दोनों लाहौर छोड़कर रावलपिंडी चले गए और वहां उन्होंने चोरी और डकैती करने के लिए हथियार की जुगाड़ में लग गए. ये दोनों राजा बाज़ार में लश्कर-ए-तैयबा के संपर्क में आ गए. असलहों का लालच देख कर दोनों लश्कर के जिहादियों के संपर्क में आ गए. लश्कर ने दोनों को कश्मीर के जिहाद में लड़ने के नाम पर संगठन में शामिल कर लिया. इन दोनों की कई हफ़्तों तक ट्रेनिंग हुई.

उन्हें मरकज़-उद-दवा-वल इरशाद (मरकज़ और लश्कर की पैरेंट बॉडी) के लाहौर के पास मुरीदके कैंप में मिलिटेंट ट्रेनिंग के लिए भेज दिया गया. मुरीदके में एक बार फिर क़साब को सख्त ट्रेनिंग दी गई. इसके बाद उसको दौरा-शूफा (बेसिक ट्रेनिंग) के लिए चुन लिया गया. उसकी दिनचर्या सुबह चार बजकर पंद्रह मिनट पर शुरू होती थी जो रात के नौ बजे तक चलती थी. यह 21 दिन की ट्रेनिंग काफी कठोर थी, लेकिन क़साब को गोलियां चलाने में मज़ा आने लगा. कुरान और हादिथ का आतंकवादी अपने तरीक़े से व्याख्या करते हैं जो इनके दिलो दिमाग़ में डाल दिया जाता है. हिंदू और भारत के ख़िलाफ नफ़रत की बातें क़साब को बेहद पसंद आईं. इस ट्रेनिंग के दौरान भारत और कश्मीर में मुसलमानों पर हो रही ज़्यादती पर कई ऑडियो और वीडियो टेप भी दिखाए गए, जिसका क़साब के दिमाग़ पर काफी असर पड़ा. दौरा-शूफा ट्रेनिंग के बाद क़साब को 21 दिन की दौरा-आम ट्रेनिंग दी गई. इस ट्रेनिंग में भी दिनचर्या पहले जैसी ही थी, लेकिन यहां यातनाएं झेलने की अबु अनस की ट्रेनिंग काफी कठिन थी. इसी कैंप में क़साब को अब्दुर हमान ने कलाश्निकोव राइफल, ग्रीन-ओ, एसकेएस, ऊजी, पिस्टल और रिवॉल्वर चलाने की ट्रेनिंग दी. इस ट्रेनिंग के दौरान क़साब ने एचई ग्रेनेड, रॉकेट लांचर और मोर्टार चलाना भी सीखा.

भारतीय विदेश मंत्रालय की तरफ़ से पाकिस्तान, अमेरिका और इंग्लैंड को दिए गए डोज़ियर में कई विस्तृत जानकारी है, जो अति गोपनीय है. इसकी गोपनीयता को बरकरार रखते हुए जिस तरह से क़साब के बयान से जिहादियों को भर्ती करने और ट्रेनिंग देने की बात का ख़ुलासा हुआ है, वह अपने आप में पाकिस्तान में पनप रही फिदाइन फैक्टरी पर पूरी रोशनी नहीं डालते. इनमें से ज़्यादातर तथ्य क़साब के बयान और हमले से जुड़े साक्ष्यों पर आधारित हैं. लेकिन 26 नवंबर के हमले और उसकी जांच से एक बात एकदम साफ हो चुकी है कि पाकिस्तान सरकार (सेना और आईएसआई) लगातार जिहादियों को पैदा कर रही है. इन जिहादी आतंकियों को कश्मीर में आतंक का कारोबार करने के लिए भेजा जा रहा है.

ग़रीबी और भुखमरी से लाचार क़साब अजमल अपना घर छोड़ने को मजबूर था. क़साब ने अपराध की दुनिया में जैसे ही क़दम रखा, वह जिहाद के इन दहशतखोरों का शिकार हो गया. एक जिहादी बनने से अजमल को जीने का मक़सद मिल गया. इसके साथ ही उसे काम मिल गया. परिवार के लिए पैसा (जिससे क़साब की बहन रुकैया की शादी कराई जा सकी) मिला. इज़्ज़त मिली और सबसे अहम कि उसे इलाक़े के शोषकों से मुक्ति मिल गई.

अजमल क़साब जिहाद के ज़हर की ऐसी ही एक फैक्टरी की पैदावार है. पाकिस्तान में हर जगह ग़रीबी और भुखमरी झेल रहे बच्चे जिहाद की इस शिक्षा की ओर खिंच रहे हैं. आज के पाकिस्तान में जिहाद की यह शिक्षा सबसे ज़्यादा लोकप्रिय है और सेना के बाद जिहाद में शामिल होने पर ही सबसे ज़्यादा आर्थिक लाभ भी मिल रहा है. आज हालात यह है कि अल-क़ायदा, तालिबान, मरकज़-उद-दवा और आईएसआई की शह पर चल रही जिहादी तंज़ीम ने समाज को अपनी गिरफ़्त में ले लिया है. जिहादी, सेना और आईएसआई की सांठगांठ से आज पाकिस्तान जिहादी बनाने की फैक्टरी में तब्दील हो चुका है. दक्षिणी पाकिस्तान के एक मदरसे में दर्स-ए-निज़ामी नाम का एक पाठ पढ़ाया जाता है. इसकी शुरुआत 1747 में लखनऊ के मुल्लाह निज़ामुद्दीन सिहालवी की थी, जो इस्लामिक क़ानून और दर्शन के मशहूर विद्वान थे. यह पाठ ग्यारहवीं शताब्दी के मुल्लाह नसीरुद्दीन तूसी के मदरसा निज़ामिया में पढ़ाए जा रहे पाठ से अलग है, जिसे बगदाद में शुरू किया गया था. लगभग सभी सुन्नी मदरसे भले ही वे देवबंदी, बरेलवी या फिर अहल-ए-हादिथ धारा के हों, सभी 1867 में देवबंदी सम्मेलन में सहमति के बाद निज़ामी पाठों को पढ़ाते हैं. इस पाठ्यक्रम में महज़ चंद विषय ऐसे हैं जो मज़हबी शिक्षा देते हैं. इनमें ज़्यादातर विषय ऐसे हैं जो छात्रों को मेडिकल, गणित, इतिहास और दर्शन पढ़ाकर सरकारी नौकरियों के लिए तैयार करते हैं. लेकिन पाकिस्तान, बांग्लादेश और भारत में आज के मदरसे इस निज़ामी धारा से भटक गए हैं और जिहाद पर आधारित शिक्षा देने लगे हैं. आज पाकिस्तान में साठ लाख छात्र ऐसे मदरसों में पढ़ रहे हैं जो नफ़रत का ज़हर घोलने का काम कर रहे हैं. वहीं बांग्लादेश और भारत में ऐसे छात्रों की संख्या पैंतीस लाख और पच्चीस लाख है. यही वज़ह है कि आज ये मदरसे आतंक और जिहाद का ज़हर मिलाकर मासूस बच्चों को अपना शिकार बना रहे हैं. ग़रीब और दिशाहीन अजमल क़साब के लश्कर के जिहाद और फिदाइन दस्ते में शामिल होने के पीछे ग़रीबी ही अकेली वजह नहीं है. उसे यह भी यक़ीन दिलाया गया कि जिहाद ही जीवन का एकमात्र मक़सद है और जिसे हफीज़ इब्राहीम, अनवर-अल-अवलाक़ी और अल-जवाहरी के लेखों में भी समझाया गया है.

आज सवाल यह है कि हम कब तक सबकुछ जानते हुए मासूम बच्चों को ज़हर परोसने का यह काम करते रहेंगे? आज ज़रूरत है कि समाज के साथ-साथ सरकार और धार्मिक संस्थाएं अपनी-अपनी ज़िम्मेदारियों को समझें और समाज में पनप रही नफ़रत और मौत की फैक्टरियों पर हमेशा के लिए ताला लगाएं.

साभार : न्यू एज इस्लाम

feedback@chauthiduniya.com

पाकिस्तान की शिक्षा व्यवस्था की ज़िम्मेदारी

जिहादी पैदा करने के और भी कारण पाकिस्तान में मौजूद हैं. क़साब की तरह ग़रीब घरों के बच्चे मदरसों में ट्रेनिंग पा रहे हैं. मदरसों से शिक्षा देने का काम पाकिस्तान, बांग्लादेश और भारत में काफी तेज़ी से बढ़ रहा है. ये मदरसे मज़हबी शिक्षा देने के साथ नौजवानों को जिहाद की आग में धकेलने का काम भी कर रहे हैं.

पाकिस्तान में मदरसों की संख्या

माध्यमिक शिक्षा दे रहे मदरसे	6000
उच्च और ग्रैजुएट शिक्षा दे रहे मदरसे	4,335
देवबंदी मदरसा	2,333
बरेलवी मदरसा	1,625
अहल-ए-हादिथ मदरसा	224
शिया मदरसा	163
मदरसों में कुल छात्र	604,421
पाकिस्तानी छात्र	586,604
विदेशी छात्र	17,817
अफ़ग़ानी छात्र	16,598

1947 से 2001 में मदरसों में बढ़ोतरी

1947 के पहले	137
1950 तक	210
1960 तक	472
1971 तक	908
1979 तक	1,745
1984 तक	1,953
1986 तक	2,261
2001 तक	4,345

इन मदरसों और पाकिस्तान की स्कूली शिक्षा में भारत और हिंदुओं के ख़िलाफ़ नफ़रत का पाठ पढ़ाया जाता है. पाकिस्तान की एजुकेशन रिपोर्ट 1980 की शुरुआत ही *ट्रू नेशन थ्योरी* से होती है.

मुसलमानों की अलग राज्य की मांग हिंदू और मुसलमानों के बीच सांस्कृतिक अंतर और भविष्य के किसी संवैधानिक ढांचे में बहुसंख्यक हिंदुओं से मुसलमानों के ख़तरे के कारण हुई. यह ख़तरा निराधार नहीं था. उन्नीसवीं सदी के अंत तक यह ख़तरा साफ-साफ दिखने लगा, जिसके चलते सर सैयद अहमद ख़ान अपने आख़िरी दिनों में मुसलमानों के विकास और उत्थान के चैंपियन बने.

ये बातें 1980 की रिपोर्ट में लिखी गई, लेकिन पाकिस्तान 2009 की एजुकेशन रिपोर्ट में भी अलगाववादी और नफ़रत को साफ-साफ देखा जा सकता है. पाकिस्तान स्टडीज़ 2059, ओ लेवल 2009, के पहले अध्याय में मुगलों के पतन और ब्रिटिश साम्राज्य के उदय से पैदा हुए राजनीतिक और धार्मिक स्थिति को रखा गया है. इसमें शाह वली उल्लाह, सैयद अहमद, सईद बरेलवी और जिहाद, शरियत उल्लाह और फराज़ी आंदोलन को शामिल किया गया है. छात्रों को इन सभी शख्सियतों को उनके धार्मिक और ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में व्याख्या करनी होती है. इसके अलावा मुस्लिम पतन के लिए दिए गए इनके विचार भी पाठ्यक्रम का हिस्सा है. वार्षिक परिक्षाओं में छात्रों को इन शख्सियतों में से किन्हीं दो पर तुलनात्मक निबंध लिखना पड़ता है. पाकिस्तान के स्कूली पाठ्यक्रम ख़ासतौर पर वे अनिवार्य विषय, जैसे पाकिस्तान स्टडीज़ और सामाजिक शिक्षा को देखने से साफ पता चलता है कि पाकिस्तान सरकार ने किस तरह से इतिहास के साथ छेड़छाड़ की है और किस तरह पाकिस्तान सरकार स्कूली बच्चों में नफ़रत पैदा कर रहा है. छठी कक्षा की किताब की प्रस्तावना में पाकिस्तान की शिक्षा पद्धति को परिभाषित किया गया है. यह बताया गया है कि पाकिस्तान के नागिरिकों में सामाजिक समानता के लिए सामाजिक शिक्षा ज़रूरी है. लेकिन पांचवीं कक्षा की किताब में समझाया गया है कि ब्रिटिश साम्राज्य भारत में हिंदुओं की मदद से स्थापित हुआ और स्थापित होने के बाद हिंदुओं के साथ मिलकर मुसलमानों के उत्थान को रोका गया. आठवीं की किताब में लिखा है कि मुस्लिम संतों ने हिंदू धर्म से रूढ़िवादी मान्यताओं को ख़त्म किया, जिसके चलते पुराने समय का हिंदू धर्म ख़त्म हो गया. भारत-पाकिस्तान युद्ध के विषय पर किताब में जिहाद और शहादत को तरज़ीह दी गई है और छात्रों से मुजाहिद बनने और शहीद बनने की अपील की गई है. किताब के मुताबिक उनकी यह कोशिश होनी चाहिए कि भविष्य में कभी भी भारत और पाकिस्तान के संबंध मैत्रीपूर्ण नहीं होने चाहिए. इसी किताब में ज़िक्र है कि 1965 के युद्ध में पाकिस्तान ने भारत के कई इलाक़ों पर क़ब्ज़ा कर लिया और जब भारत हार के नज़दीक पहुंच गया तो उसने युद्ध रोकने के लिए संयुक्त राष्ट्र की मदद ली. 1965 के युद्ध के बाद भारत ने पूर्वी पाकिस्तान के लोगों को भड़काना शुरू किया और 1971 में पूर्वी पाकिस्तान पर हमला कर दिया. जिसका नतीजा यह हुआ कि पूर्वी पाकिस्तान अलग होकर बांग्लादेश बन गया, लिहाज़ा हर पाकिस्तानी को सैन्य ट्रेनिंग लेना ज़रूरी है ताकि वे दुश्मनों से लड़ने के लिए हमेशा तैयार रहें. उच्चतर माध्यमिक में चल रही किताब में पूर्वी पाकिस्तान में विद्रोह का ज़िक्र नहीं है और न ही यह कहा गया कि 90,000 से ज़्यादा पाकिस्तानी सैनिकों ने भारतीय फौजों के सामने समर्पण कर दिया था. इसके उलट किताब में लिखा गया है कि पाकिस्तानी सेना बहुत बहादुरी से लड़ी और उसने हर मोर्चे पर भारतीय सेना को शिकस्त दी. तीसरी कक्षा की किताब के ज़रिए बच्चों को पढ़ाया जा रहा है कि मोहम्मद अली जिन्ना को यह अहसास हो गया था कि बहुसंख्यक हिंदू मुसलमानों को गुलाम बनाकर रखना चाहते थे. जिन्ना गुलाम प्रथा के कट्टर विरोधी थे. लिहाज़ा, उन्होंने कांग्रेस पार्टी छोड़ दी. हैरतअंगेज बात यह है कि पांचवी कक्षा के बच्चों को पढ़ाया जा रहा है कि पहले भारत पाकिस्तान का हिस्सा था.

अलवाक़ी का जिहाद

इस तरह की शिक्षा के ज़रिए पाकिस्तान के मासूम बच्चों के दिमाग़ में नफ़रत का ज़हर घोला जा रहा. अमेरिका में पैदा हुए अनवर अल-अवलाक़ी जो पेशे से इंजीनियर है और फ़िलहाल यमन के साना शहर में रहता है, ने जिहाद के पक्ष में 44 नुस्ख़े बताए हैं. यह किताब पाकिस्तान के युवाओं के साथ-साथ दुनिया भर के जिहादियों के लिए बहुत अहम है. अलवाक़ी की यह किताब पाकिस्तान के युवाओं में काफी लोकप्रिय है. पाकिस्तान और दुनिया भर के मदरसों में इसे पढ़ाया जाता है.

अलवाक़ी ने जिहाद को जायज़ ठहराने के लिए लिखी इस किताब में जिहाद करने के तरीक़ों पर बहुत कुछ लिखा है. इसके कुछ महत्वपूर्ण निर्देश निम्नलिखित हैं-

- मुजाहिदीन के लिए फंड इकट्ठा करना
- मुजाहिद को फाइनेंस करना
- मुजाहिद के परिवार का ध्यान रखना
- शहीद के परिवार की आर्थिक मदद करना
- मुजाहिदीन को ज़ाका अदा करना
- मुजाहिदीन के पक्ष में खड़ा होना
- पश्चिमी मीडिया के झूठ से लड़ना
- जिहाद में लड़ने के लिए लोगों को प्रोत्साहित करना
- मुजाहिदीन की रक्षा करना और उनकी गोपनीयता बरकरार रखना
- मुजाहिदीन के लिए दुआ करना

जिहाद की ख़बरों को पढ़ना और उनका प्रचार करना, इत्यादि.

अलवाक़ी साहित्य में जिहाद के बारे में बहुत कुछ लिखा है. साहित्य की सारी बातें इस लेख में लिख पाना संभव नहीं है. इसे पढ़ कर एक बात साफ है कि अलवाक़ी जिहाद की दुनिया का नया मसीहा है और वह ओसामा बिन लादेन, अल-जवाहरी या लश्कर का हफीज़ इब्राहीम बनने की ओर आगे बढ़ रहा है. अलवाक़ी साहित्य, लश्कर-ए-तैयबा के कैंपों और पाकिस्तानी मदरसों में पढ़ाया जा रहा है. जिसके चलते मदरसे, सरकारी और प्राइवेट स्कूल और पाकिस्तान के तंज़ीम केंद्र आज जिहाद के ज़हर को फैला रहे है.

तुलसी माला ने बनाया आत्मनिर्भर

उमाशंकर मिश्र

भरतपुर जिले के बहताना गांव की महिलाओं की ज़िंदगी तब तक गांव-देहात की सामान्य महिलाओं की तरह ही हुआ करती थी, जब तक कि उन्होंने तुलसी माला उत्पादन के गुर नहीं सीख लिए थे. आज बहताना की महिलाएं आत्मनिर्भरता की ओर क़दम बढ़ा रही हैं.

राजस्थान के भरतपुर जिले के डीग तहसील के बहताना गांव की महिलाओं की ज़िंदगी आम ग्रामीण महिलाओं से इतर बिल्कुल नहीं थी. इसके बावजूद, ग्रामीण परिवेश में रहकर भी तमाम सामाजिक वर्जनाओं के बीच आज बहताना की महिलाओं ने ख़ुद को आत्मनिर्भर बनाने का रास्ता खोज लिया है. सामान्यत: अन्य गांवों की तरह अधिकांश स्थानीय महिलाओं का समय खेती एवं पशुपालन जैसे कामों में बीत जाता था. रोज़मर्रा की इन गतिविधियों से घरेलू उपभोग के लिए तो संसाधन जुटाए जा सकते थे, लेकिन महंगाई व सीमित संसाधनों को देखते हुए उसके आधार पर बच्चों के बेहतर भविष्य की ख़ातिर अच्छी शिक्षा के लिए धन जुटाना मुश्किल हो रहा था. महिलाओं की आर्थिक स्थिति इतनी कमज़ोर थी कि अपने बच्चों को स्कूल भेज पाना और उसका ख़र्च उठाना मुश्किल हो रहा था. लेकिन जब से बहताना की महिलाओं ने अपने घर में ही तुलसी माला निर्माण का कार्य शुरू किया है, तब से उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार आने लगा है. अब बहताना गांव की महिलाएं आर्थिक दृष्टि से तो आत्मनिर्भर हुई ही हैं, साथ ही परिवार में उनका सम्मान भी बढ़ा है. आज बहताना गांव में क़रीब 150 महिलाएं तुलसी माला बनाकर प्रति माह चार से पांच हज़ार रुपये आसानी से कमा रही हैं. इतना ही नहीं, इस व्यवसाय के लिए उन्हें अपने गांव से बाहर भी नहीं जाना पड़ता. कच्चा व तैयार किया हुआ माल व्यापारी स्वयं ही उपलब्ध करा जाते हैं और मज़दूरी भी उसी समय दे जाते हैं.

तीन वर्ष पूर्व स्वयंसेवी संस्था लुपिन ह्यूमन वेलफेयर एंड रिसर्च फाउंडेशन ने डीग तहसील के बहताना गांव में उपलब्ध संसाधनों एवं लोगों की रुचि की जानकारी जानने के लिए एक सर्वे किया. इसमें यह बात सामने आई कि उत्तर प्रदेश के गोवर्धन, मथुरा एवं वृंदावन जैसे धार्मिक स्थलों के पास होने के कारण बहताना गांव में धार्मिक

रोज़मर्रा की इन गतिविधियों से घरेलू उपभोग के लिए तो संसाधन जुटाए जा सकते थे, लेकिन महंगाई व सीमित संसाधनों को देखते हुए उसके आधार पर बच्चों के बेहतर भविष्य की ख़ातिर अच्छी शिक्षा के लिए धन जुटाना मुश्किल हो रहा था. महिलाओं की आर्थिक स्थिति इतनी कमज़ोर थी कि अपने बच्चों को स्कूल भेज पाना और उसका ख़र्च उठाना मुश्किल हो रहा था.

महत्व पर आधारित उद्यमीय प्रयोग आसानी से सफल हो सकते हैं. इसी बात को ध्यान में रखते हुए काम शुरू कर दिया गया. सबसे पहले उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले के जैंत गांव से तुलसी माला निर्माण का प्रशिक्षण देने वाले नेमचंद लोधा को बहताना की महिलाओं को प्रशिक्षित करने के लिए बुलाया गया और दस दिन का गहन प्रशिक्षण महिलाओं को दिलाया गया. शुरू में तो महिलाएं खुलकर प्रशिक्षण में शामिल होने से झिझक रही थीं और सिर्फ़ 10 महिलाएं ही आगे आईं. प्रशिक्षण के बाद इन महिलाओं के सामने अपना स्वरोज़गार संचालित करने के लिए आर्थिक संसाधनों की ज़रूरत महसूस हुई तो संस्था ने महिलाओं को राष्ट्रीय महिला कोष से प्रत्येक को 10-10 हज़ार रुपये का ऋण आसान किश्तों में उपलब्ध कराया. इस ऋण से महिलाओं ने तुलसी माला निर्माण के लिए मशीन ख़रीदी और जैंत गांव से कच्चा माल लाकर कार्य शुरू किया. लेकिन प्रारंभिक दिनों में इन महिलाओं को कोई ख़ास लाभ नहीं हुआ, क्योंकि महिलाएं बड़ी मुश्किल से पूरे दिन में पांच से सात मालाएं बना पाती थीं. लेकिन इन महिलाओं ने हार नहीं मानी और पूरे मनोयोग से कार्य जारी रखा. धीरे-धीरे माला निर्माण की गति बढ़ती गई और अब वे प्रतिदिन 40 मालाएं बना रही हैं. इससे उन्हें प्रतिमाह चार से पांच हज़ार रुपये की आसानी से आय हो रही है. इस आय से महिलाओं ने अपने घर के ज़रूरी ख़र्चे चलाना तो प्रारंभ किया ही है, साथ ही सभी बच्चों को बेहतर शिक्षा के लिए ग़ैर सरकारी स्कूलों में भेजना शुरू भी किया है.

तुलसी माला में विपणन की समस्या नहीं

बहताना गांव चूंकि गोवर्धन, मथुरा, वृंदावन, कामां आदि जैसे धार्मिक स्थलों के पास है, इसलिए इन क्षेत्रों में तुलसी माला की अधिक बिक्री होती है. स्थिति यह है कि जितनी तुलसी माला तैयार होती है, उसे व्यापारी ख़रीदने के लिए तुरंत तैयार रहते हैं. यहां तक कि कुछ व्यापारी तो तुलसी माला तैयार कराने के लिए अग्रिम राशि भी दे देते हैं. तुलसी माला निर्माण कराने वाले व्यापारी बहताना गांव की महिलाओं को कच्चा माल एवं तैयार माल को ख़रीदने स्वयं ही गांव में जाते हैं, जिससे इन महिलाओं के सामने तैयार माल के विपणन जैसी कोई समस्या सामने नहीं रहती. अभी तक तुलसी माला निर्माण में काम आने वाली तुलसी के डंठल जैंत गांव से 10 से 20 रुपये किलो की दर से ख़रीदे जा रहे हैं, लेकिन लुपिन संस्था ने इस समस्या से निजात दिलाने के लिए गांव में ही तुलसी की खेती शुरू कराई है. इसमें तुलसी के पत्तों की ख़रीद आयुर्वेदिक कंपनियों द्वारा की जाती है और डंठलों का उपयोग तुलसी माला निर्माण में किया जाता है.

50 रुपये तक की होती है तुलसी माला

तुलसी माला में दाने जितने छोटे होते हैं, उसके दाम उतने ही अधिक मिलते हैं. इसलिए कि छोटे दाने तैयार करने में समय अधिक लगता है और इसका कच्चा माल भी महंगा मिलता है. गांव में अधिकतर महिलाएं छोटे दाने की मालाएं बनाती हैं, जिसके लिए बैटरी से चलने वाली एक मशीन की ज़रूरत होती है जो क़रीब 450 रुपये में आसानी से मिल जाती है.

सामान्य मालाओं के साथ-साथ अब तुलसी माला बनाने वाली महिलाओं ने तुलसी राखी एवं सजावटी मालाओं का निर्माण भी शुरू कर दिया है. इसमें तुलसी के दानों के साथ-साथ पीतल या तांबे के दाने भी मालाओं में लगाए जा रहे हैं. इससे इन मालाओं के दाम और अधिक बढ़ गए हैं तथा महिलाओं के मुनाफ़े में भी वृद्धि हो रही है. गांव की तुलसी माला बनाने वाली श्रीमती रामपति के मुताबिक रक्षाबंधन पर तुलसी की राखियां बनाने का 25 हज़ार का आर्डर मिला था. पिछले ही दिनों महाराष्ट्र के पंडरपुर क़स्बे से तीन लाख रुपये की तुलसी मालाओं का आदेश मिला है. ये मालाएं वहां एक धार्मिक उत्सव में वितरित की जाएंगी.

दूसरे गांवों में भी हो रहा है विस्तार

बहताना गांव में महिलाओं की तुलसी माला निर्माण से आई समृद्धि को देखकर इस गांव के आसपास के क़रीब आधा दर्जन गांवों में तुलसी माला निर्माण का कार्य शुरू हो चुका है और वहां भी यह कार्य तेज़ी से आगे बढ़ रहा है. तुलसी माला निर्माण का कार्य सिनसिनी, चुचावटी, सोनगांव, खेरिया आदि में शुरू हो चुका है जिनमें भी लुपिन संस्था ने तुलसी माला निर्माण के प्रशिक्षण आयोजित किए हैं. यह नितांत सत्य है कि स्थानीय आवश्यकता एवं उपलब्ध संसाधनों पर आधारित शुरू किया गया व्यवसाय निश्चय ही सफल होता है. साथ ही जिन कामों में महिलाओं की भागीदारी अधिक होती है, वे कार्य सफलता के द्वार पर अधिक पहुंच पाते हैं. बहताना गांव में शुरू हुआ तुलसी माला निर्माण का कार्य निश्चय ही धार्मिक स्थलों के आस-पास के गांवों में आर्थिक समृद्धि का कारक बनेगा.

feedback@chauthiduniya.com

बैंगन को लेकर हो रही है ख़तरनाक बाज़ीगरी

संध्या पांडे

दुनिया से भुखमरी मिटाने और हर इंसान को भोजन उपलब्ध कराने के पवित्र उद्देश्य के नाम पर बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपने मुनाफ़े के लिए षड्यंत्र कर रही है. इसे समझे बिना पिछड़े और विकासशील देश इन लालची मुनाफ़ाखोर कंपनियों के चंगुल में फंसते जा रहे हैं.

विश्व स्तर पर अमेरिका जैसे संपन्न और ताक़तवर देश ही इन कंपनियों के पैरोकार बने हुए हैं. इसीलिए 2002 के विश्व खाद्य सम्मेलन में ग़रीबी और भुखमरी की समस्या पर चर्चा के दौरान विकसित देशों ने कहा कि आर्थिक वैश्वीकरण के ज़रिए ही दुनिया से ग़रीबी और भुखमरी दूर की जा सकती है. भुखमरी दूर करने के लिए अनाज और खाद्य पदार्थों का उत्पादन बढ़ाने के लिए बायो-टेक्नोलॉजी मददगार साबित हो रही है और दुनिया के सभी देशों को अपनी परंपरागत खेती के तौर-तरीक़ों में बदलाव लाने के लिए तैयार हो जाना चाहिए.

बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हित में यह दलील दी गई कि अनाज और खाद्य पदार्थों के परंपरागत बीज अब अधिक उत्पादन के लिए कारगर नहीं हैं. ज़रूरत ऐसे नए बीजों की है, जिनसे उत्पादन बढ़ सके और फ़सल को होने वाला नुक़सान रोका जा सके. 21वीं सदी की नई तकनीक के तौर पर बायो-टेक्नोलॉजी ने काफी प्रगति कर ली है और इसने बाज़ार में भी अपना दखल बढ़ा दिया है. रसायन, औषधि, उर्वरक, कीटनाशक और अनाज तथा फल-सब्ज़ी के नए बीजों के क्षेत्र में बायो-टेक्नोलॉजी का महत्व बढ़ता जा रहा है. कई बड़ी-बड़ी कंपनियां अब इस तकनीक का सहारा लेकर बाज़ार में अपने नए उत्पाद उतारने में सफल भी हुई हैं. कृषि क्षेत्र में गेहूं, मक्का, चावल आदि अनाजों के नए बीज और आलू, बैंगन और सब्ज़ियों के नए बीज अब बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा बाज़ार में खपाए जाने लगे हैं. इन नए बीजों को बेचने के लिए किसानों के बीच बड़ा ही आकर्षक और लुभावना प्रचार किया जाता है. भारत जैसे देश में, जहां प्रशासन और आर्थिक क्षेत्र में भारी भ्रष्टाचार है और बाज़ार में मुनाफ़ाखोरी की लालची प्रवृत्ति का ज़ोर है, धड़ल्ले से बीटी बीजों का बाज़ार जमने लगा है. बीटी बीज, अर्थात जैव-परिवर्धित बीज, यह कहकर बेचे जाते हैं कि इनसे उत्पादन अधिक होगा और फ़सल को कीड़े-मकौड़ों या मौसम के प्रकोप से नुक़सान नहीं होगा. 2002 में भारत सरकार ने जैव-विविधता संरक्षण क़ानून और जैव-परिवर्धित उत्पादों पर निगरानी रखने के क़ानून और नियम तो बनाए हैं, लेकिन इनके पालन के लिए आवश्यक दक्ष और विशेषज्ञ जानकारों की कमी के कारण इनका सही इस्तेमाल नहीं हो पा रहा है. बीटी बीज बनाने वाले इसका फ़ायदा उठा रहे हैं. भारत में बीटी-कॉटन की फ़सल का क्षेत्र लगातार बढ़ रहा है. मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक आदि राज्यों में बीटी कॉटन की फ़सल उगाई जा रही है. फिर भी इन राज्यों में कॉटन (कपास) उत्पादक किसानों की आत्महत्या की दर भी तेज़ी से बढ़ी है. साफ है कि बीटी के इस्तेमाल से आर्थिक स्थिति और उत्पादकता पर कोई ख़ास असर नहीं पड़ रहा है. अब भारत सरकार की जेनेटिक इंजीनियरिंग एप्रवुल कमेटी (जी.ई.ए.सी.) ने खाद्य फसलों के लिए भी इन बीजों के उपयोग को अनुमति देना शुरू कर दिया है.

मक्का, चावल और गेहूं के बाद अब सब्ज़ी के क्षेत्र में बीटी बीजों का प्रचलन बढ़ गया है. बहुराष्ट्रीय बीज निर्माता कंपनी मोनसेंटो ने एक फ़र्ज़ी अध्ययन का जमकर प्रचार किया है कि कीटों और बीमारियों के कारण हर साल लगभग 22 करोड़ डॉलर का बैगन उत्पादन बेकार हो जाता है. जबकि हक़ीक़त यह है कि भारत में बैगन का उत्पादन 1,000 करोड़ रुपयों का होता ही नहीं है. बैगन की फ़सल को होने वाले नुक़सान का प्रचार कर कंपनी ने बीटी बैंगन का बीज तैयार कर उसे बाज़ार में उतारा. जानकार बताते हैं कि इन बीजों में मोनसेंटो कंपनी ने वही वैक्टेरिया-क्राय 1 एसी जीन-डाला है, जो कपास के बीज में डाला गया था और जिसके खाने से भेड़ों के मरने की शिकायतें भी आई थीं. बायो-टेक्नोलॉजी के ज़रिए खाद्य बीजों, ख़ास तौर पर बैगन के बीजों में जिस क्राय 1 एसी जीन को प्रवेश कराया गया है, उसके प्रभावों को जांचने का एक प्रयोग चूहों पर किया गया. इससे परिणामों से पता चलता है कि यह प्रतिरोधक क्षमता को कमज़ोर करता है और आंतों में चिपक जाता है. क्राय1 एसी जीन पर हुए परीक्षण यह भी सिद्ध करते हैं कि उससे जीवों में ज़बरदस्त एलर्जी होती है और यदि यह जीन लगातार मानव शरीर में प्रवेश करे तो उसकी प्रतिरोधी क्षमता को कमज़ोर करता है. जीएम खाद्य पदार्थों पर हुआ कोई भी अध्ययन यह सिद्ध नहीं करता है कि ऐसे बीज या उत्पादन जानलेवा ख़तरनाक रसायनों और संकटों से मुक्त हैं. यही कारण है कि किसी भी विकसित देश ने अपने यहां जीएम खाद्यान्नों को प्रोत्साहन नहीं दिया है.

इसके अलावा बीटी बैगन के बीजों में एनपीटी-2 जीन का भी प्रयोग किया गया है. वास्तव में यह जीन कैनामायसिन प्रतिरोध के रूप में जाना जाता है. इसके कारण मानव शरीर की प्रतिरोधक क्षमता और कोशिकाएं ख़त्म हो जाती हैं. यदि व्यक्ति बीटी बैगन का उपयोग लगातार करता है तो उस पर एंटी-बायोटिक दवाओं का असर भी ख़त्म हो जाएगा. अजीब बात है कि जहां एक तरफ़ सरकार हेपेटाइटस-बी जैसी बीमारी से निपटने के लिए कार्यक्रम बना रही है तो वहीं दूसरी ओर इसी तरह की बीमारी फैलाने वाले कालीलोरवर मोसियेक वायरस को बीटी बैंगन के ज़रिए फैलाने की अनुमति बहुराष्ट्रीय कंपनियों को दे रही है.

भारत एक कृषि प्रधान देश है. खेती इस देश में सदियों से हो रही है और कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में ही देश ने उन्नति की है. भारत में खेती की प्रणाली और तकनीक पुरानी व समृद्ध है, लेकिन बाज़ार की लालची ताक़तों ने हमारे किसानों को मोहजाल में फांसने की जो कोशिश की है, और इन ताक़तों को जिस प्रकार सरकार का सहयोग और समर्थन मिल रहा है, उससे हमारा समझदार किसान भी भ्रमित हो रहा है. दुनिया के कई देशों में बीटी बीजों के ख़िलाफ़ किसान खड़े हो गए हैं. भारत में नुक़सानदेह बीटी बीजों का प्रचलन तेज़ी से बढ़ रहा है और इस पर सरकार को गंभीरता से ध्यान देना होगा. अगर समय रहते इस पर कोई कार्रवाई नहीं की गई तो इनसे भारत की परंपरागत कृषि बीज प्रणाली की जैव विविधता नष्ट होने का ख़तरा तो बढ़ेगा ही साथ ही यहां के नागरिकों का स्वास्थ्य भी दांव पर लग जाएगा.

feedback@chauthiduniya.com

इलाज में लापरवाही पर कसेगी लगाम

रीतिका सोनाली

लापरवाही कहें या अव्यवस्था, लेकिन सच तो यह है कि ज़िंदगी की आस लिए अस्पताल की चौखट पर आए कैलाश को मौत मिली. जिस अस्पताल में वह इलाज कराने गया था, वहीं उसका पोस्टमार्टम हुआ. देश की राजधानी के तीन बड़े अस्पतालों के चक्कर लगाने के बाद अगर उसे कहीं जगह मिली तो मृत्युशैया पर. अजीब बात यह है कि शहर के नामी अस्पतालों में कहीं सिटी स्कैन की मशीन नहीं थी, तो कहीं वह ख़राब पड़ी थी और कहीं वक़्त पर इलाज की जगह ही नहीं मिली. दरअसल बिल्डिंग निर्माण के वक़्त कैलाश घायल हो गया था. उसे पीतमपुरा स्थित अंबेडकर अस्पताल में भर्ती कराया गया, लेकिन वहां सिटी स्कैन की सुविधा न होने की वजह से उसे राममनोहर लोहिया अस्पताल के लिए रेफर कर दिया गया. वहां सिटी स्कैन की मशीन ख़राब थी. इससे उसे एलएनजेपी अस्पताल ले जाया गया, जहां वक़्त पर डॉक्टरी सुविधा ही उपलब्ध नहीं हो सकी और आख़िरकार कैलाश अपनी जान से हाथ धो बैठा.

कैलाश का यह क़िस्सा कोई अकेला उदाहरण नहीं है, जब लापरवाही या साधनों की कमी की वजह से किसी को अपनी जान गंवानी पड़ी हो. अभी हाल ही में जब दिल्ली में ही दुर्घटना में घायल 17 वर्षीय विकी को जीबी पंत अस्पताल में भर्ती करया गया, तो उसे बेड की कमी की वजह से एलएनजेपी के लिए रेफर कर दिया गया और उसकी बहन उसे लेकर दोनों अस्पतालों के बीच भटकती रही, और शिकायत करने पर उसके भाई की दो दिन की दवाई ही बंद कर दी गई. विकी 18 मई से ज़िंदगी से जूझ रहा है, पर उसकी सुध लेने के लिए अस्पताल और डॉक्टरों के पास वक़्त नहीं है. यही नहीं, बिहार के मोतिहारी से अपने बेटे राजन के ब्रेन ट्यूमर का इलाज कराने आई गुड़िया भी इसी प्रकार की परेशानी का सामना कर रही है. राजन एक महीने से अधिक समय से एलएनजेपी अस्पताल में भर्ती है. उसका ऑपरेशन 31 मई को हुआ था, उसके बाद डॉक्टरों ने कहा कि उसके सिर में पानी है, जिसका फिर से ऑपरेशन होगा. पर उसका इलाज अब तक नहीं हो पाया है. अब डॉक्टर कह रहे हैं कि घर चले जाओ.

यह हाल देश की राजधानी के अस्पतालों का है तो देश के अन्य शहरों से क्या उम्मीद की जा सकती है. यह घटनाएं हमारे देश के अस्पतालों की कड़वी हक़ीक़त है.

इलाज में होने वाली लापरवाही की वजह से भी हमारे देश में मरने वालों की संख्या काफी ज़्यादा है. ग़लत दवाओं द्वारा इलाज, बीमारी की ग़लत पहचान, ग़लत दवाएं और मूलभूत सुविधाएं प्राप्त न होने जैसी कई समस्याएं लापरवाही के अंतर्गत आती हैं.

कंज्यूमर प्रोटेक्शन एक्ट 1986 के बनने के बाद हमारे देश में कई बार मरीज़ों द्वारा डॉक्टरों के विरुद्ध लापरवाही के मामले दर्ज़ किए गए हैं. हालांकि इस क़ानून के बाद भी आम आदमी के लिए यह जानना-समझना मुश्किल था कि सिविल और क्रिमिनल लॉ के तहत मेडिकल लापरवाही क्या है और उसे सिद्ध करने के लिए कौन से सबूत चाहिए.

कंज्यूमर प्रोटेक्शन एक्ट 1986 के बनने के बाद हमारे देश में कई बार मरीज़ों द्वारा डॉक्टरों के विरुद्ध लापरवाही के मामले दर्ज़ किए गए हैं. हालांकि इस क़ानून के बाद भी आम आदमी के लिए यह जानना-समझना मुश्किल था कि सिविल और क्रिमिनल लॉ के तहत मेडिकल लापरवाही क्या है और उसे सिद्ध करने के लिए कौन से सबूत चाहिए. दर्ज़ किए जाने वाले मामलों से डॉक्टरों को यह समझ में आया कि वे किस प्रकार की लापरवाही करके भी बेपरवाह होते हैं.

देश की जनता को इस लापरवाही से होने वाले नुक़सान से बचाने के लिए सुप्रीम कोर्ट ने कहा है अब से उपचार संबंधी सभी तरह की लापरवाही में डॉक्टर, अस्पताल आदि के ऊपर मुक़दमा चलाया जा सकता है. यह व्यवस्था जस्टिस एस बी सिन्हा और दीपक वर्मा की बेंच ने एक मुक़दमे के फैसले में दी है. दरअसल, 1998 में कोलकाता के एडवांस्ड मेडिकेयर रिसर्च इंस्टीट्यूट में डॉक्टर द्वारा स्टेरॉयड की ज़्यादा मात्रा देने से अमेरिका निवासी अनुराधा ने दम तोड़ दिया था. जस्टिस सिन्हा और वर्मा की बेंच ने उसकी मौत के लिए अस्पताल और डॉक्टरों की लापरवाही को ज़िम्मेदार ठहराया है.

सुप्रीम कोर्ट के मुताबिक हर रोगी को दी जाने वाली दवाओं, उसके प्रतिकूल असर और प्रभावों के बारे में डॉक्टरों द्वारा जानकारी दिया जाना अनिवार्य है. डॉक्टरों को, ख़ासकर उस समय मरीज़ों के साथ दवाओं के बारे में चर्चा ज़रूर करनी चाहिए, जब वह दवा विवादित हो या उसके दुष्परिणाम की संभावनाएं ज़्यादा हों. इसके साथ ही उस दवा के वैकल्पिक इलाज के बारे में भी जानकारी दी जानी चाहिए, ताकि मरीज़ या परिजन यह फ़ैसला ले पाएं कि वह उस दवा से इलाज कराने के लिए तैयार है या नहीं. जस्टिस एस बी सिन्हा और दीपक वर्मा की बेंच ने अपने फ़ैसले में यह भी साफ कर दिया कि अस्पतालों में ऑक्सीजन सिलेंडर जैसी मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध नहीं होना भी एक अपराध है. इस फ़ैसले के तहत निजी व सरकारी अस्पतालों व मेडिकल सेंटर्स, क्लीनिक इत्यादि में मौजूद सुविधाओं से रोगी को वंचित रखना अपराध के तहत आएगा. हालांकि ऐसी स्थिति में मेडिकल लापरवाही तब नहीं मानी जाएगी, जब वांछित सुविधाएं अस्पताल में उपलब्ध ही न हों.

रोगियों को इलाज कराने में किसी भी प्रकार की परेशानी से बचाने के लिए कोर्ट ने कहा है कि मरीज़ के जानकारी पाने के अधिकार और मान बनाए रखने के लिए कठोर मानक तय किए जाने चाहिए. लेकिन इसके साथ ही यह ध्यान रखा जाए कि डॉक्टरों की स्वायत्तता प्रभावित न हो और बेवजह की दखलंदाज़ी से डॉक्टर बचा रहे. कोर्ट ने कहा कि इलाज में लापरवाही या उपेक्षा चिकित्सा और जांच में होनेवाली प्रगति को शर्मसार करता है. इसलिए यह ज़रूरी है कि इस क़ानून को कड़ाई से लागू किया जाए, जिससे चिकित्सा के क्षेत्र में इस प्रकार की ग़लत चीज़ों पर रोक लगाई जा सके.

ritika@chauthiduniya.com

डायटीशियन : एक बेहतर कैरियर विकल्प

शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के प्रयास में शुरू हुए आहार व पोषण की विद्या को डायटिक्स आहारिकी या फूड न्यूट्रिस्नीस्ट कहते हैं. अनियमितता से लिया गया खान-पान जीवन को प्रभावित करता है व उसके सुचारू रूप से चलने में बाधा का कारण बनता है. इससे शरीर में कई प्रकार की बीमारियां भी घर कर जाती हैं. डायटीशियन खान-पान में अच्छी आदतें विकसित कर जीवन के स्तर को ऊंचा करते हैं. वे लोगों के उम्र के हिसाब से भोजन निर्धारित कर उनके खाने-पीने के तौर-तरीक़े और सही वक़्त की सही सलाह देते हैं. इसके अलावा वे लोगों की बीमारियों, एलर्जी और कामकाज के रूटीन का भी ध्यान रखते हैं और उसी हिसाब से खाने-पीने की सलाह देते हैं.

योग्यता

वैसे विद्यार्थी जो आहारिकी व पोषण संकाय में करियर बनाना चाहते हैं, उन्हें स्नातक व स्नातकोत्तर स्तर पर होमसाइंस, फूड साइंस व आहारिकी व पोषण में पढ़ाई करनी चाहिए. इसमें स्नातक की पढ़ाई के लिए विद्यार्थी को होम साइंस, जीव विज्ञान, भौतिकी विज्ञान, रसायन शास्त्र में से किसी दो विषय में बारहवीं उत्तीर्ण होना आवश्यक होता है. आहारिकी में स्नातक के अलावा इसी क्षेत्र में फूड साइंस व टेक्नोलॉजी, मेडिसिन, होटल मैनेजमेंट या कैटरिंग टेक्नोलॉजी जैसे विकल्प भी हैं. स्नातकोत्तर डिग्री में यह कोर्स एक या दो साल का हो सकता है. एक वर्षीय डिप्लोमा इन डायटिक्स एंड पब्लिक हेल्थ न्यूट्रीशन में दाख़िला लेने के लिए फूड साइंस, होम साइंस, माइक्रोबायलॉजी, बायोकेमिस्ट्री, होटल मैनेजमेंट एंड कैटरिंग टेक्नालॉजी व मेडिसिन विषयों में स्नातक करना आवश्यक है. इसमें बायोकेमिस्ट्री, न्यूट्रीशन, अप्लायड फिजियोलॉजी, फूड, माइक्रोबायलॉजी, एडमीनिस्ट्रेशन, थेरॉप्टिक न्यूट्रिशन और पब्लिक हेल्थ न्यूट्रीशन जैसे विषयों पर पढ़ाया जाता है. इसके अंतर्गत विद्यार्थी को किसी हॉस्पिटल के डायटीशियन के अधीन तीन महीने का इंटर्नशिप करना अनिवार्य है. दो वर्षीय एमएससी होम साइंस पाठ्यक्रम में फूड साइंस व टेक्नोलॉजी, बायोकेमिस्ट्री, फिजियोलॉजी, बायोस्टाटिस्टिक्स, रिसर्च मेथड्स जैसे विषयों में विशेष अध्ययन कर सकते हैं. इसमें प्रथम वर्ष में मनुष्य की पोषण की ज़रूरतें, फूड माइक्रोबायोलॉजी और फूड साइंस के सिद्धांतों के बारे में पढ़ाया जाता है. दूसरे वर्ष में ह्यूमन न्यूट्रीशियन एंड डायट्रिक्स, इंस्टीट्यूशनल मैनेजमेंट एंड फूड साइंस पढ़ाया जाता है. निजी तौर पर एक अच्छे न्यूट्रीशियन या डायटीशियन की रुचि खाने-खिलाने में होनी चाहिए, साथ ही लेखनी और बोलचाल की भाषा भी दुरूस्त होनी चाहिए. इससे आगे चलकर लोगों के साथ घुलने-मिलने और रिपोर्ट, लीफलेट और ब्रॉशर बनाने में आसानी होती है. उन्हें प्लानिंग और प्रशासनिक गुणों में निपुण होना चाहिए. अच्छे स्वास्थ्य के साथ ही उनमें सहनशीलता और मिलनसार व वाक्पटुता के गुण होने चाहिए, जिससे वे अपनी टीम में सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाकर काम कर सकें.

संभावनाएं

दिल्ली स्थित रॉकलैंड अस्पताल की सीनियर डायटीशियन डॉ. सुनीता के अनुसार न्यूट्रीशनीस्ट और डायटीशियन की ज़रूरत अस्पतालों, स्वास्थ्य सुधार व्यवस्था, रिसर्च व विकास और समाज कल्याण के लिए सरकार द्वारा चलाए जा रहे पब्लिक हेल्थ डिपार्टमेंट, पब्लिक हेल्थ कम्यूनिटी जैसे क्षेत्र में पड़ती है. इसके अलावा स्वास्थ्य सुधार के क्षेत्र में अग्रसर एनजीओ व अन्य निजी संस्थानों में भी कुशल डायटीशियन की ज़रूरत है. आधुनिक समाज में कई लोग निजी स्वास्थ्य सलाहकार रखने लगे हैं. आने वाले दिनों में प्रत्येक व्यक्ति को डायटीशियन की सलाह के अनुसार प्रतिदिन के खान-पान के संतुलन को बनाए रखना अति आवश्यक हो जाएगा, क्योंकि आधुनिक लाइफस्टाइल में सभी बीमारियों की जड़ बेतरतीब खान-पान ही है.

संस्थान

ऑल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ हाइजीन एंड पब्लिक हेल्थ, कोलकाता.
विक्रम विश्वविद्यासय, कोठी रोड, उज्जैन.
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर, पंजाब.
इंस्टीट्यूट ऑफ होम इकॉनॉमिक्स, दिल्ली.
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली.
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़.
नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूट्रीशन, जामिया ओसमानिया, हैदराबाद, आंध्र प्रदेश.
नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर.
मुंबई विश्वविद्यालय, महाराष्ट्र.
छत्रपति साहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर.
महात्मा गांधी ग्रामोद्योग विश्वविद्यालय, चित्रकूट.
एम.एस यूनिवर्सिटी ऑफ बड़ोदरा, फतेहगंज, बड़ोदरा.
महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर.

वेतन अनुमान

न्यूट्रीशन व डायट्रिक्स प्रोफेशनल्स का वेतन उनके काम के प्रकार पर निर्भर करता है. निजी अस्पतालों में प्रशिक्षु न्यूट्रीशनिस्ट को 2500 रुपये प्रति माह मिल जाते हैं. एक साल के अनुभव के बाद वेतन 4500 और इससे ज़्यादा भी हो सकते हैं. फूड टेक्नोलॉजिस्ट, फूड सर्विस डिपार्टमेंट में भी नौकरी पा सकते हैं, जिसका वेतन 20,000 से 25,000 के बीच हो सकता है.

रीतिका सोनाली
ritika@chauthiduniya.com

नंगे पैर न लें मानसून का मज़ा

बारिश में नंगे पैर चलना वैसे तो बहुत अच्छा लगता है, पर ऐसा करना ख़तरे से ख़ाली नहीं है. कई लोगों को नंगे पैर रहने की आदत होती है और वे काम ख़त्म होते ही या घर में घुसते ही नंगे पैर हो जाते हैं. इस मौसम में पैरों के प्रति इस तरह की लापरवाही आपको परेशानी में डाल सकती है. ऐसी छोटी-सी अनदेखी से आपके पांव को काफी नुक़सान पहुंच हो सकता है. इस मौसम में यदि पैर में छाले हो जाएं, कट-फट जाए तो इंफेक्शन होने का ख़तरा बढ़ जाता है. कई बार थोड़े-बहुत कटने-फटने से भी घाव इंफेक्टेड होकर इतना भयावह हो जाता है कि ऑपरेशन कराने की नौबत आ जाती है. इस वजह से इस मौसम में बारिश का मज़ा लेने के लिए नंगे पैर न निकलें. बल्कि कुछ ज़रूरी और उपयुक्त उपाय करने के बाद ही बारिश में बाहर निकलें. बारिश में पांव को होने वाली परेशानी और उससे बचने के उपाय इस तरह हैं-

1. हर वर्ष मानसून में टेटनस का टीका लगवाएं. बच्चों को इंफेक्शन होने का ख़तरा सबसे अधिक रहता है, इसलिए उन्हें इंजेक्शन लगवाना बिल्कुल न भूलें.
2. स्विमिंग पूल, नदी, तालाब और नालों के किनारे नंगे पैर न जाएं. ऐसा करने से पांव के कटने-फटने, छाले पड़ने, खोराटी, वार्ट, कॉर्न होने का डर नहीं रहेगा.
3. बारिश के मौसम में ज़मीन पर भी कीड़े-मकोड़े हो सकते हैं, जो त्वचा से चिपक कर घाव, चकत्ते, फोड़े-फुंसी बना देते हैं.
4. अंगूठे में औ उंगलियों के बीच फंगल इंफेक्शन हो सकता है. इसलिए पांव को धो-पोछ कर हमेशा साफ रखें.

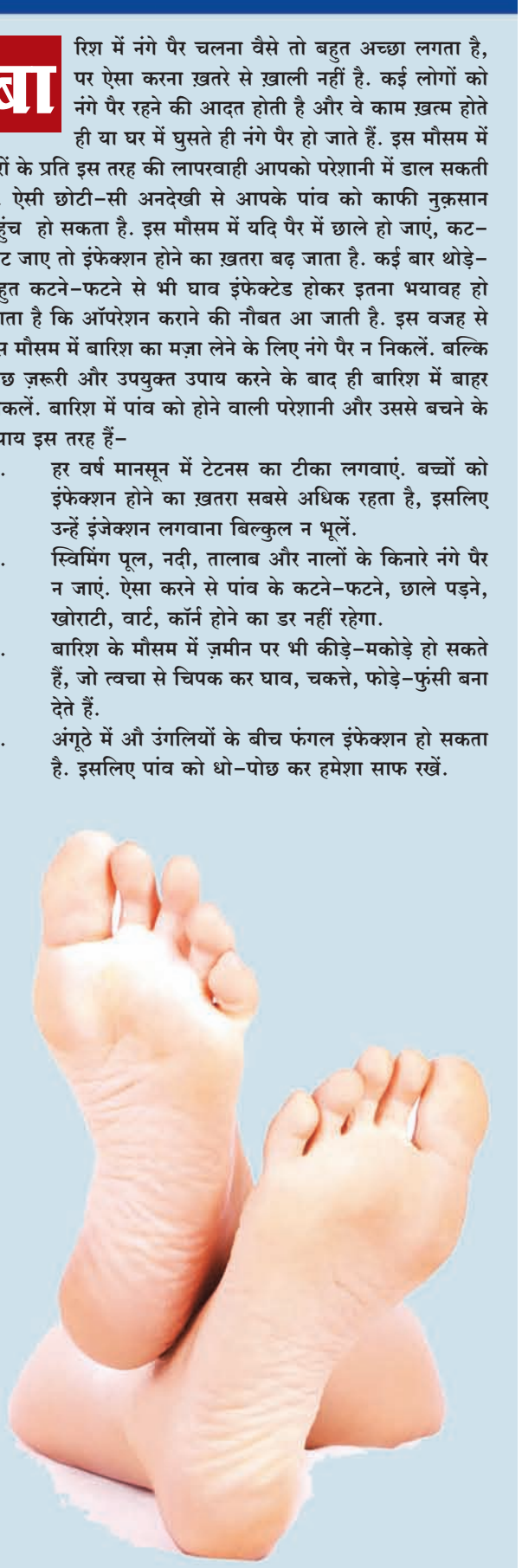

यदि पैर में किसी भी प्रकार की चीज़ चुभ जाए तो निकालने के बाद भी 24 घंटों के भीतर डॉक्टर को ज़रूर दिखाएं. चुभी हुई चीज़ को निकालने के लिए प्रभावित जगह को पहले अच्छी तरह से साफ कर लें, फिर उसे निकालने की कोशिश करें. नहीं निकलने पर, चुभी हुई नुकीली चीज़ से जोर-ज़बरदस्ती न करें, क्योंकि इससे टिश्यू को क्षति पहुंच सकती है, जिससे इंफेक्शन होने का ख़तरा बढ़ जाता है.

5. मधुमेह के रोगी नंगे पैर घर पर भी न चलें, क्योंकि कोई भी इंफेक्शन यदि उन्हें पैरों में होता है तो उन्हें पता नहीं चल पाता है और छोटे से इंफेक्शन से भी पैर कटवाने की नौबत आ सकती है.
6. यदि पैर में किसी भी प्रकार की चीज़ चुभ जाए तो निकालने के बाद भी 24 घंटों के भीतर डॉक्टर को ज़रूर दिखाएं. चुभी हुई चीज़ को निकालने के लिए प्रभावित जगह को पहले अच्छी तरह से साफ कर लें, फिर उसे निकालने की कोशिश करें. नहीं निकलने पर, चुभी हुई नुकीली चीज़ से जोर-ज़बरदस्ती न करें, क्योंकि इससे टिश्यू को क्षति पहुंच सकती है, जिससे इंफेक्शन होने का ख़तरा बढ़ जाता है.
7. इस मौसम में पांव की त्वचा संबंधी रोगों से बचने के लिए प्रतिदिन रात को सोते समय पांव की जांच-पड़ताल अवश्य करें. पैर के नाखूनों में कई बार छोटे-छोटे कीट फंसे रह जाते हैं, जो आमतौर पर दिखते नहीं हैं. इसलिए रात को सोते वक़्त पैर को धोने के बाद अच्छी तरह सुखा लें और उंगलियों के बीच में भी साफ करें. इस मौसम में स्केबीज का ख़तरा सबसे ज़्यादा रहता है. यह इंफेक्शन दो उंगुलियों के बीच की जगहों में ख़ास कर लगता है. यह छूत की बीमारी होती है, जो एक से दूसरे व्यक्ति में तेज़ी से फैलती है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

दाने-दाने को मोहताज हैं ढलवा मूर्ति के शिल्पकार

हिस्से की ज़मीन तलाशते, मोहताज ये शिल्पी
ज़िंदगी यूं हुई बसर तन्हा, क़ाफ़िला साथ और सफ़र तन्हा...

ग़ुलज़ार के गीत की इन पंक्तियों को आज चरितार्थ कर रहे हैं ललितपुर जनपद के जखौरा ब्लॉक के शिल्पी. पीतल के अनगढ़ टुकड़ों को अपने हुनर से मंदिर में भगवान के रूप में प्रतिष्ठा दिलाने वाले ये शिल्पी आज भूमंडलीकरण के कारण दाने-दाने को मोहताज हैं. सरकारी लालफीताशाही के चलते उनकी इस ढलवा मूर्ति शिल्पकला का लाभ दलाल खुलेआम लूट रहे हैं.

जखौरा की पीतल शिल्पकृतियों की महीन कलात्मकता और पारंपरिक विशिष्टता ने ललितपुर के इन अनजान से क़स्बे को ढलवा मूर्तिशिल्प जगत में नई पहचान दिलाई है. बुंदेलखंड के खजुराहो, ओरछा, चंदेरी, देवगढ़ तथा झांसी आने वाले विदेशी सैलानी आए दिन ढलवा, पीतल की मूर्तियां व अन्य सामग्री ख़रीदते हैं. लेकिन मूर्ति निर्माण से जुड़े जखौरा और ललितपुर के दर्जनों शिल्पी कड़ी मेहनत के बावजूद अपने परिवार का भरण-पोषण नहीं कर पा रहे हैं.

ललितपुर जनपद गुप्तकाल से ही मूर्ति गढ़ने के लिए प्रसिद्ध रहा है. पहले सैंडस्टोन, ग्रेनाइट और गोरा पत्थर की मूर्ति गढ़ी जाती थी. इसलिए यहां के एक स्थान का नाम देवगढ़ पड़ा. पिछले सौ वर्षों से यहां पीतल व अष्टधातु की मूर्ति बनाने की ढलवा कला फल-फूल रही थी. ललितपुर और जखौरा के शिल्पी अपनी अनूठी कला दक्षता के लिए उत्तर प्रदेश सरकार के विभिन्न पुरुस्कारों से सम्मानित भी हो चुके हैं. मूर्ति शिल्पी वृंदावन लाल सोनी बताते हैं कि ढलवा धातु शिल्प की कला अत्यंत धैर्य और कौशल के बिना अंजाम तक नहीं पहुंचती है. सबसे पहले हम मिट्टी पर आकृति गढ़ते हैं तथा विभिन्न प्रकार की बारीक़ नक़्क़ाशी करके मिट्टी की मूर्ति को सूखने के लिए रख दिया जाता है. जब मूर्ति सूख जाती है, तो उस पर कच्चे मोम का लेप चढ़ा देते हैं. लेप सूख जाने के बाद उस पर मिट्टी चढ़ा कर सांचा तैयार करते हैं, फिर उसे पीतल डालने के लिए पूरी तरह बंद करके सांचे को सूखने के लिए रख देते हैं. इसके बाद धरिया में पीतल के टुकड़ों को डालकर गर्म किया जाता है. जब धातु पानी की तरह तरल हो जाता है, तब उसे सांचे में डाला जाता है. गर्मी के कारण मोम जल जाता है और ख़ाली स्थान पर पीतल अपना आकार ले लेता है.

शिल्पी रमेश बताते हैं कि ढलाई के समय अत्यधिक सावधानी बरतनी पड़ती है. यदि पीतल बीच में रुक गया या ठंडा हो गया तो सारी मेहनत बेकार चली जाती है. मूर्ति की ढलाई पूर्ण हो जाने के बाद सांचा ठंडा करके तोड़ते हैं. मूर्ति की सफाई, छिलाई और पालिश करके बाज़ार में बेचने के लिए भेजा जाता है. यहां के मूर्तिकारों की कला मात्र धार्मिक मूर्तियों के निर्माण तक ही सीमित नहीं है. वे आधुनिक सोच और बाज़ार की मांग के अनुसार भी अपनी कला में परिवर्तन के प्रति संवेदनशील हैं. बुंदेलखंड की प्राचीन परंपरा को ध्यान में रखकर आधुनिक प्रयोग करने वाले शिल्पकारों द्वारा निर्मित शिल्प में रथ आरूढ़ श्रीकृष्ण, मूषक रथ पर गणपति, नृत्य करते गणेश, उमा महेश्वर, नृवराह, विष्णु-लक्ष्मी, राम-जानकी के अलावा चार घोड़ों के रथ पर सवार कृष्ण-अर्जुन आदि प्रमुख हैं. कलात्मकता से परिपूर्ण शीशदान, पानदान, श्रृंगारदान, इत्रदान, फूलदान, विभिन्न प्रकार के ऐश-ट्रे आदि महत्वपूर्ण हैं. कड़ी मेहनत और हुनर की बदौलत दो वक़्त की रोटी के लिए सृजनरत शिल्पकारों को जब कुरेदते हैं, तो उनका दर्द शब्दों के माध्यम से फूट पड़ता है. वे बताते हैं कि मुरादाबाद के पीतल शिल्प से तुलना किए जाने के कारण उनके श्रम का सही मूल्य नहीं मिलता है. मशीनों द्वारा निर्मित पीतल की सामग्री कभी कला का स्थान नहीं ले सकती है. हम प्रत्येक मूर्ति को गढ़ने के लिए हर बार नया सृजन करते हैं. पीतल की क़ीमत में निरंतर आने वाले उछाल के साथ लकड़ी तथा कोयले की बढ़ती क़ीमत से हमारा मुनाफ़ा घट रहा है. एक मूर्ति के निर्माण में चार से पांच दिन का समय लगता है. लगातार भट्टी के पास खड़े रहने के कारण अनेक जानलेवा रोग के शिकार होना शिल्पकारों की मजबूरी है. धातुकला की पारंगत विधि में दक्षता के लिए पुरस्कृत शिल्पकार राम बाबू स्वर्णकार कहते हैं कि हम सरकार से भीख नहीं मांग रहे हैं. हमें सिर्फ़ कच्चा माल ख़रीदने के लिए कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध हो जाए, तो हमारी शिल्प कला विदेशी मुद्रा कमाने का अच्छा स्रोत बन सकती है. आज हम साहूकारों के क़र्ज़ के कारण सस्ते मूल्य पर उन्हें ही अपनी मूर्ति बेचने को मजबूर हैं. साहूकार हमारी कलाकृतियों को दिल्ली, मुंबई जैसे बड़े महानगरों के शो-रूमों में ऊंची क़ीमत पर बेचते हैं. बिचौलियों की गिरफ़्त में ढलाई मूर्ति कला के शिल्पकारों को अपना हक़ नहीं मिल पा रहा है. इसके कारण अनेक शिल्पी परिवार अपनी पुस्तैनी व्यवसाय व हुनर से नाता तोड़ने को मजबूर हो गए हैं. राजशाही में पल्लवित और पोषित होने वाली धातु शिल्प कला लोकशाही के पांच दशक बाद भी अपनी संरक्षण का ठौर न पाने कारण दम तोड़ती नज़र आ रही है. समय रहते इस कला के संरक्षण के लिए पहल नहीं की गई तो ढलवा मूर्ति शिल्प सिर्फ़ किताबों में रह जाएगी. अपने हिस्से की ज़मीन तलाशते शिल्पकार नामचीन कलाकार की तरह अपनी कलाकृतियों के प्रदर्शन के लिए ऐसा मंच चाहते हैं, जहां कला के पारखी पहुंच सकें और उन्हें दो जून की रोटी के साथ कलाकार के रूप में पहचान मिल सके.

सुरेंद्र अग्निहोत्री
feedback@chauthiduniya.com

मेरी दुनिया.... असली नकली ...धीर

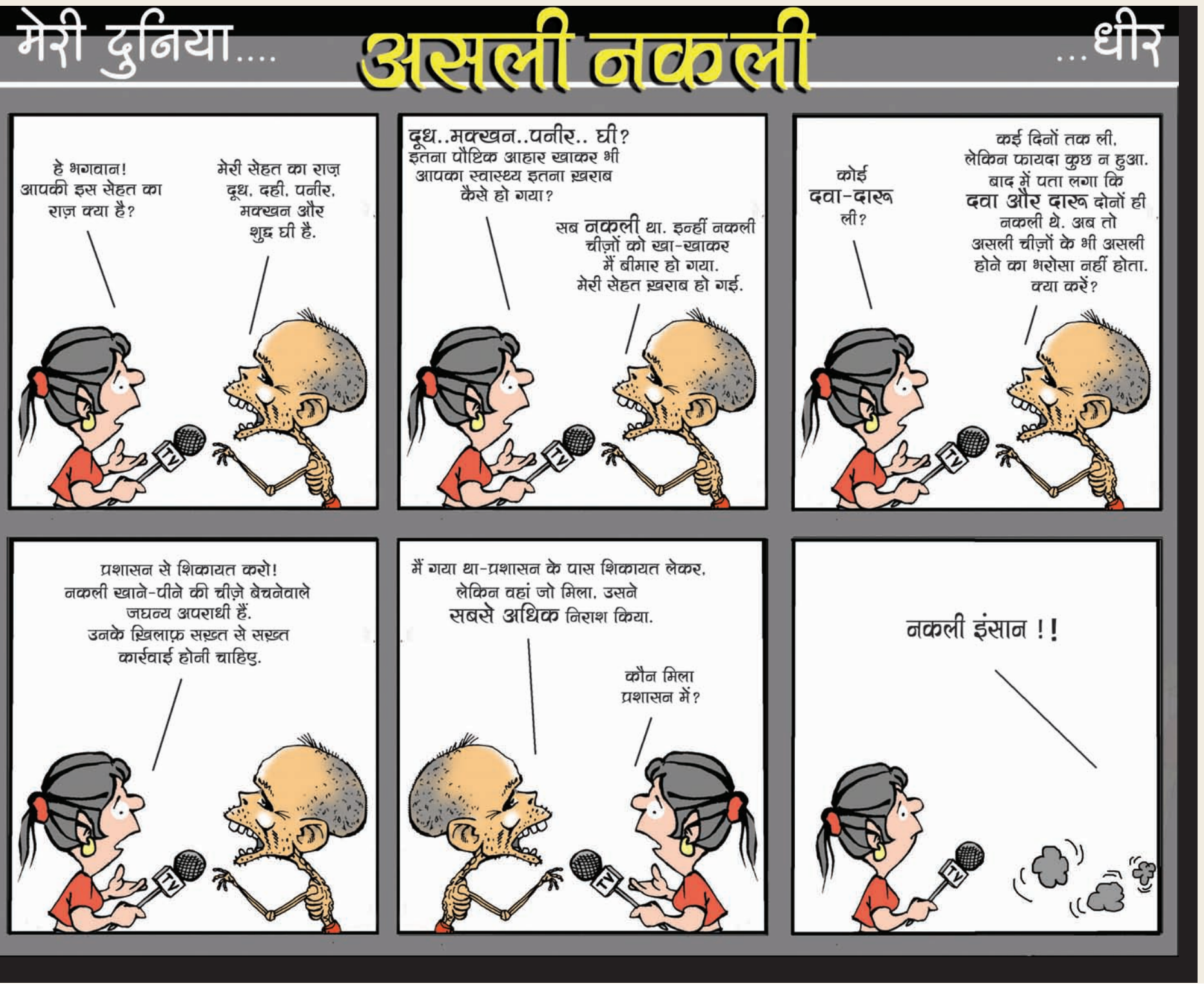

राशिफल

(24 अगस्त से 30 अगस्त तक)

मेष 21 मार्च से 20 अप्रैल

पारिवारिक मामलों में आप जो प्रयास कर रहे हैं, उसमें सफलता मिलने की संभावना है. यदि आप कहीं दूर जाने की सोच रहे हैं तो अवश्य जाएं, क्योंकि यह यात्रा सफलता दिला सकती है. बातचीत में सावधानी बरतें, क्योंकि आपकी किसी बात से कोई नाराज़ हो सकता है.

वृष 21 अप्रैल से 20 मई

आपके कुछ कार्य सफल होंगे. साथ ही आपके साथ अचानक कुछ ऐसा हो सकता है, जिससे लाभ प्राप्त होगा. अपने सम्मान की सुरक्षा के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. ज़रा सी चूक आपके सम्मान को ख़तरे में डाल सकती है. रक्तचाप से पीड़ित व्यक्ति अपने स्वास्थ्य पर ध्यान दें.

मिथुन 21 मई से 20 जून

छोटी-छोटी बातों पर गुस्सा न करें, तो दांपत्य जीवन में मिठास रहेगी. मकान, संपत्ति एवं ज़मीन आदि को लेकर चली आ रही समस्या का समाधान हो जाएगा. मानसिक एवं शारीरिक सुख में वृद्धि होगी. आय और व्यय दोनों पर नियंत्रण बनाए रखें. कुल मिला कर यह सप्ताह आपके लिए अच्छा रहेगा.

कर्क 21 जून से 20 जुलाई

शासन सत्ता का सहयोग मिलेगा. दूसरों के कार्यों में हस्तक्षेप न करें, नहीं तो व्यर्थ ही विवाद की स्थिति बन सकती है. बड़े भाई से मनमुटाव या छोटा-मोटा विवाद हो सकता है. अचानक ही मन चिंतित हो सकता है. किसी अज्ञात डर के कारण परेशान भी रह सकते हैं.

सिंह 21 जुलाई से 20 अगस्त

परिवार में बुज़ुर्गों का सहयोग मिलेगा. अधिक व्यस्त होने के बावजूद मनोरंजन के सुखद अवसर मिलेंगे. धैर्य बनाकर रखें, नहीं तो संबंधों में दरार आने की आशंका है. निकटता बढ़ेगी, शासन सत्ता का सहयोग भी प्राप्त होगा. यात्रा की स्थितियां बन रही हैं, जो लाभदायक हो सकती है.

कन्या 21 अगस्त से 20 सितंबर

रचनात्मक कार्यों की दिशा में किया जा रहा प्रयास सफल होगा. स्वास्थ्य संबंधी परेशानी आ सकती है. चिकित्सक से समय-समय पर सलाह अवश्य लें. सामाजिक क्षेत्र में मान प्रतिष्ठा में बढ़ोतरी होगी और सामाजिक कार्यों के लिए तत्पर रहेंगे. प्रतियोगी परीक्षा में सफलता मिल सकती है.

तुला 21 सितंबर से 20 अक्तूबर

आप अगर कहीं दूसरी जगह जाने की सोच रहे हैं तो उसमें सफलता प्राप्त होगी. पारिवारिक दायित्व की पूर्ति होगी. काम करने की क्षमता बढ़ेगी. साथ ही आलस्य से मुक्ति मिलेगी. आर्थिक क्षेत्र में लाभ की स्थिति बनी हुई है. ज़्यादा भावुक होना आपके लिए कष्टकारी हो सकता है.

वृश्चिक 21 अक्तूबर से 20 नवंबर

सामाजिक क्षेत्र में काम करने की सोचेंगे तो सम्मान प्राप्त होगा. कुछ भी ऐसा न करें जिससे आपको बेकार की परेशानी के कारण तनावग्रस्त रहना पड़े. परिवार का भरपूर सहयोग मिलेगा. किसी कार्य में कुछ नया करने की सोच रहे हैं, तो उसमें लाभ प्राप्त होगा.

धनु 21 नवंबर से 20 दिसंबर

कार्यक्षेत्र का विस्तार तो होगा, साथ ही आप बहुत व्यस्त भी रहेंगे. आपको कुछ अनावश्यक ख़र्च उठाना पड़ सकता है, नियंत्रण बनाए रखें. पिता से चले आ रहे वैचारिक मतभेद समाप्त हो जाएंगे. व्यावसायिक मामलों में चल रहे प्रयास में सफलता प्राप्त होगी.

मकर 21 दिसंबर से 20 जनवरी

कुछ नया करने की सोचेंगे तो आपके लिए लाभदायक साबित होगा. सहयोगियों का भरपूर सहयोग मिलेगा. नेत्र संबंधी विकार की आशंका है, डॉक्टर को अवश्य ही सलाह लें. काम की अधिकता की वजह से अधिक व्यस्त रहेंगे. सामाजिक क्षेत्र में उपहार और सम्मान प्राप्त होगा.

कुंभ 21 जनवरी से 20 फरवरी

सामाजिक क्षेत्र में प्रतिष्ठा बढ़ेगी. धन, पद, प्रतिष्ठा की दिशा में चल रहा प्रयास सफल होगा. जीवनसाथी का भरपूर सहयोग मिलेगा. आर्थिक क्षेत्र में कुछ नया करने की सोचेंगे तो लाभ अवश्य ही प्राप्त होगा. साथ ही आय के नए रास्ते खुलेंगे. घर में भौतिक सुख-सुविधाओं की वस्तुएं बढ़ेंगी.

मीन 21 फरवरी से 20 मार्च

काफी लंबे समय से जिस परेशानी से तनाव में थे, वह समाप्त हो जाएगी. अनचाहे ख़र्चे करने पड़ सकते हैं. नियंत्रण बनाए रखें. स्वास्थ्य के प्रति विशेष ध्यान दें. संतान के संबंध में सुखद समाचार मिलेगा. किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहे हैं तो उसमें सफलता का योग बना हुआ है.

ज्योतिषाचार्य पं. सुदर्शन

टूटते सपनों की दास्तां

अनंत विजय

एक रचनाकार के तौर पर मृदुला गर्ग आज हिंदी साहित्य में किसी परिचय की मोहताज नहीं है. मृदुला गर्ग लगभग चार दशक से लेखन में सक्रिय हैं. कहानी और उपन्यास के अलावा पत्र-पत्रिकाओं में भी उन्होंने विपुल लेखन किया है. मृदुला गर्ग का अध्ययन भी काफी है. लेकिन पिछले लगभग दस सालों से उनका कोई उपन्यास नहीं आया था. इस बीच उन्होंने यात्रा वृतांत लिखा, कहानी संग्रह और लेखों की किताबें भी आईं, लेकिन पाठकों को उनके उपन्यास का इंतज़ार था. पाठकों का यह इंतज़ार ख़त्म हुआ और लगभग तेरह सालों बाद मृदुला गर्ग का नया उपन्यास *मिलजुल मन*, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली से छपकर आया है. मृदुला गर्ग के दो उपन्यास- *चितकोबरा* और *कठगुलाब* जब छपे थे, तो साहित्यिक जगत में उनकी ख़ासी चर्चा हुई थी और लेखिका को प्रसिद्धि के साथ-साथ एक गंभीर लेखक के रूप में हिंदी जगत ने मान्यता दी थी. *चितकोबरा* में जो संवेदनशील स्त्री अपने नीरस जीवन से ऊब कर सेक्स के प्रति असामान्य आकर्षण दिखाती है, वह *कठगुलाब* तक पहुंच कर संवेदना के स्तर पर अधिक प्रौढ़ नज़र आती है और इस उपन्यास *मिलजुल मन* में वह और मैच्योरिटी के साथ सामने आती है.

इस उपन्यास-मिलजुल मन -की नायिका गुलमोहर है, जिसकी सहेली मोगरा है. अपने इस उपन्यास में लेखिका ने आज़ादी के बाद के दशक में लोगों के मोहभंग के दौर को बेहद शिद्दत के साथ उठाया है. आज़ादी मिलने पर लोगों के मन में एक सपना था, अपने और देश के लिए एक सुनहरे भविष्य की कल्पना थी, बेहतर जीवन जीने की ललक थी. देश के हर नागरिक में ख़ुशहाली की चाहत थी. युवा वर्ग के अपने सपने थे और युवक-युवतियों के मन में सफल होने की चाहत हिलोरें ले रही थीं. एक ख़ुशनुमा ज़िंदगी और समाज की उन्नति का सपना देख रहे लोगों ने आज़ादी की लड़ाई में जमकर संघर्ष किया था, अपना सब कुछ होम कर दिया था और जब आज़ादी मिली तो पूरे देश ने एकसाथ एक ख़ूबसूरत सपना देखा था. चंद सालों में ही लोगों का यह सुंदर सपना टूटा और व्यवस्था से लोगों का विश्वास दरकने लगा. सपने के टूटने और विश्वास के दरकने की कहानी है मृदुला गर्ग का नया उपन्यास-मिलजुल मन. इस उपन्यास की भूमिका में लेखिका कहती हैं-दुविधा के अलावा और कई मायनों में अजब था वह वक़्त. सदी भर पहले देखा, आज़ादी का सपना पूरा हुआ था. पर आज़ादी का जो सुंदर, सजीला, अहिंसक चेहरा हमने ख़यालों में तैयार किया था, मुल्क के तक्सीम होने के साथ, सपने की तरह तड़क कर बिखर गए. सपने के टूटने पर हमने असलियत में जीना क़बूल नहीं किया, नया सपना पाल लिया. दुविधा में आ मिला मासूमियत भरा यक़ीन कि हम गुटनिरपेक्ष और मिली-जुली अर्थव्यवस्था का ऐसा संसार बसाएंगे कि दुनिया हमारा लोहा मानेगी और हम विश्वगुरु कहलाएंगे. तो यह जो आज़ादी के बाद का मासूमियत और दुविधा के घालमेल से बना सपना था, जो आज़ादी के कुछ वर्षों बाद तक जनता ने देखा था, टूट कर बिखरने लगा. और सपने के इस टूटने और बिखरने को ही लेखिका ने इस उपन्यास का विषय बनाया. लगभग चार सौ पन्नों के इस वृहदाकार उपन्यास में गुल और मोगरा के बहाने मृदुला गर्ग ने आज़ादी के बाद के दशकों में लोगों की ज़िंदगी और समाज में आनेवाले बदलाव की पड़ताल करने की कोशिश की है. मोगरा के पिता बैजनाथ जैन के अलावा डॉ. कर्ण सिंह, मामा जी, बाबा, दादी और कनकलता के चरित्र चित्रण के बीच गुल बड़ी होती है और इस परिवेश का उसके मन पर जो मनोवैज्ञानिक असर होता है उसका भी लेखिका ने कथानक में इस्तेमाल किया है.

अपने इस नए उपन्यास में मृदुला गर्ग अपने पात्रों के माध्यम से हिंदी के लेखकों पर भी बेहद ही कठोर टिप्पणी करती हैं - तभी हिंदी के लेखक शराब पीकर फूहड़ मज़ाक से आगे नहीं बढ़ पाते. मैं सोचा करती थी, लिक्खाड़ हैं, सोच-विचार करने वाले दानिशमंद. पश्चिम के अदीबों की मानिंद, पी कर गहरी बातें क्यों नहीं करते, अदब की, मिसाइल की, इंसानी सरोकार की. अब समझी, वहां दावतों में अपनी शराब ख़ुद ख़रीदने का रिवाज क्यों है. न मुफ़्त की पियो और न सहने की ताक़त से आगे जाकर उड़ाओ. अपने यहां मुफ़्त की पीते हैं और तब तक चढ़ाते हैं जब तक अंदर बैठा फूहर मर्द बाहर न निकल आए. यह लेखिका का प्रिय विषय भी रहा है. हिंदी लेखकों को बेनक़ाब करता इनका एक उपन्यास 1984 में प्रकाशित हो चुका है. *मैं और मैं* में भी एक धूर्त लेखक द्वारा एक नई लेखिका के शोषण को विषय बनाकर महानगरीय परिवेश में लेखक समाज की विकृतियों को उद्घाटित किया था. इसके अलावा जब पिछले दिनों मृदुला गर्ग का यात्रा वृतांत पेंग्विन से प्रकाशित हुआ था, तो उसमें भी लेखिका ने विश्व हिंदी सम्मेलन में हिंदी के साहित्यकारों की टुच्चई को उजागर किया था. जब कुछ लोगों ने उनके साथ घूमने जाने के लिए सीट बुक करा कर अंतिम क्षणों में बहाना बना कर टाल दिया था.

इसके अलावा इस उपन्यास में गुल के व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं- एक लड़की, एक प्रेमिका, एक पत्नी, एक कथाकार को विस्तार से विश्लेषित किया गया है. हर पहलू का मनोविज्ञान उसके मन में चलने वाले विचार और उसका उसके व्यक्तित्व पर असर सब कुछ लिखा गया है. इस उपन्यास की भाषा में रवानगी तो है, लेकिन ख़ालिस उर्दू के शब्दों का ज़्यादा प्रयोग भाषा के प्रवाह को गाहे बगाहे बाधित करता है. इसके अलावा इस उपन्यास की एक बड़ी कमज़ोरी इसका आकार और घटनाओं का अनावश्यक विस्तार है, जिसे कुशल संपादन के ज़रिए कसा जा सकता था. इससे न केवल पाठकों को बांधा जा सकता था, बल्कि कथा भी सधती. इस उपन्यास को लेखिका ने जिस बड़े फलक पर उठाया है, उसको संभालने में काफी मशक्कत भी की है, श्रमपूर्वक घटनाओं को समेटा है, लेकिन हर घटना को बढ़ाते रहने का लोभ मृदुला गर्ग संवरित नहीं कर पाई हैं. नतीजा यह हुआ है कि उपन्यास विस्तृत होता चला गया और कहानी में बार-बार यह अहसास होने लगा कि ज़बरदस्ती विस्तार दिया जा रहा है. घटनाओं के अलावा संवाद भी काफी लंबे-लंबे हैं जिसमें पाठकों के उलझने का ख़तरा है.

(लेखक आईबीएन7 से जुड़े हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

सनातन की ही शाखा है शाक्त दर्शन

व्यालोक

शाक्त धर्म दरअसल क्या है? यह शक्ति की साधना का विज्ञान है. इसके मतावलंबी शाक्त धर्म को भी प्राचीन वैदिक धर्म के बराबर ही पुराना मानते हैं. यह बात दीगर है कि इस धर्म का विकास वैदिक धर्म के साथ ही साथ या सनातन धर्म में इसे समावेशित (एसिमिलेट) करने की ज़रूरत के साथ ही हुआ. इस पर चर्चा आगे, फ़िलहाल तो यह समझें कि शाक्त दर्शन है क्या? तंत्रनाद के अनुसार सृष्टि का उद्भव यानी शुरुआत शिव और शक्ति के संयोग से हुई है. हालांकि यही दर्शन यह भी कहता है कि शिव तो केवल शव हैं और शक्ति ही प्रेरणा है. जब तक शक्ति प्रेरित न करे, तब तक शिव निस्पंद रहते हैं, यानी उसमें गति नहीं होती. इसका एक अर्थ तो यह भी हो सकता है कि निरा ज्ञान स्पंदन और गति से हीन है, उसमें असल ताक़त तो ऊर्जा या शक्ति से ही आती है.

अब यहीं हम देख सकते हैं कि किस तरह से शाक्त दर्शन अपने मूल रूप में किस तरह सनातन धर्म से मिलता है. सनतान धर्म के ही दर्शन की एक शाखा सांख्य है. उसमें भी सृष्टि का संबंध पुरुष और प्रकृति के मिलन से लगाया गया है. सांख्य दर्शन कहता है कि पुरुष और प्रकृति तो अनादि और अनंत हैं, इनके मिलन से ही सृष्टि की उत्पत्ति होती है. सनातन धर्म के एक और विचार उल्टे अश्वत्थ/पीपल के पेड़ (इस पर चर्चा के लिए पूरा एक स्तंभ ही चाहिए) पर भी हम इसी दृष्टिकोण से विचार कर सकते हैं.

यह तो हम नहीं कह सकते कि सांख्य दर्शन का शाक्त दर्शन पर प्रभाव पड़ा या वह एक सहज और स्वतःस्फूर्त दर्शन था. हां, इतना तय है कि सांख्य ने बाक़ी दर्शनों पर तो प्रभाव डाला ही. विष्णु के साथ लक्ष्मी की पूजा और शिव के साथ पार्वती की पूजा भला और क्या है? यह और कुछ नहीं, पुरुष और प्रकृति में तादात्म्य बैठाने की ही कोशिश है. अगर थोड़ा आगे की सोचें, तो आज आधुनिक विश्व में भी संसार के रोमांसवादी चिंतकों ने जो यह फतवा दे दिया है कि नारी प्रेरणा का उद्गम है, पुरुष उसकी प्रेरणा और सहारे से बड़े काम करता है और नारी के बिना पुरुष अधूरा है, अपूर्ण है-वह भी दरअसल शाक्त दर्शन का विस्तार ही है.

शुरुआत में तो शाक्त और शैव दर्शन में अधिक अंतर भी नहीं था. आज की तारीख़ में भी शाक्त पंथ बाक़ी सब से दूर भले हो, लेकिन शैव दर्शन से यह कहीं-न-कहीं ज़रूर थोड़ी समानता रखता है. शैव पंथ हमेशा से ही ज्ञानमार्गी पंथ रहा है. इसका ध्येय आज भी मोक्ष, निर्वाण या मुक्ति ही है, आपकी मर्ज़ी आप इसे क्या कहना चाहते हैं? शाक्त पंथ मोक्ष को अंतिम लक्ष्य तो मानता है, लेकिन उसका ज़ोर सिद्धियों पर अधिक हो गया. यही वजह है कि इसमें तंत्र, मंत्र और योग की प्रधानता हो गई. एक तरह से कहें तो शाक्त पंथ ने योग को महज़ सिद्धि पाने का साधन बना लिया. हमने शुरू में यह कहा था कि शाक्त धर्म या शैव धर्म दरअसल सनातन धर्म की ही शाखा हैं. इसका मतलब यही है कि सनातन धर्म ने दरअसल हरेक जाति, वर्ण और समुदाय को अपने यहां समावेशित करने की कोशिश की. शिव को मूल तौर पर द्रविड़ों का देवता माना जाता है. यहां भी आर्य-द्रविड़ का झगड़ा हो सकता है, लेकिन वह तो विषयांतर हो जाएगा. इस पर चर्चा फिर कभी. सबको अपनाने की अपनी प्रवृत्ति की वजह से ही सनातन धर्म ने वनवासी समुदाय के देवी-देवताओं से लेकर कथित निम्न तबके के देवताओं को भी ख़ुद में शामिल कर लिया. बात चाहे शिव की हो, या राजा सलहेस की. यदि हम आर्य-अनार्य का झगड़ा भूल कर, आक्रामक और शिकार की बात भूल कर केवल यह ध्यान रखें कि समाज के हरेक वर्ग को उचित स्थान देने का जज़्बा ही सनातन धर्म के इतने रूप दिखाता है, तो फिर कोई समस्या शायद ही होगी.

vyalok@chauthiduniya.com

पिछले अंक में आपने पढ़ा कि घड़ियाल गोदी से तस्करी का माल टैक्सी में रखकर ले जाता है. इस तस्करी के पीछे इक़बाल अपना दिमाग़ लगाना शुरू करता है. अब आगे पढ़िए कि उसके बाद क्या हुआ...

मुसलमान

वह तुम्हें एक रुपये का नोट देगा, इंस्पेक्टर भेसाड़िया ने बताया, इस नोट का नंबर ग़ौर से देखकर मिला लेना, तुम्हारी पर्ची पर लिखा नंबर वही है.

इक़बाल ने जेब में से पर्ची निकालकर देखी, उस पर लंबा अंक लिखा हुआ था.

और कुछ पूछना है?

यह कार...

कुछ दिनों तक तुम इसमें ऐश करो, भेसाड़िया ने उदारतापूर्वक कहा, ज़रूरत होगी तो मंगा लूंगा.

कार स्टार्ट कर इक़बाल डोंगरी की दिशा में दौड़ गया.

दूसरे दिन सुबह अख़बार देखा तो इक़बाल ने मन-ही-मन अपनी पीठ थपथपाई. उसकी गणना एकदम सही निकली थी. इंस्पेक्टर भेसाड़िया के साहस का क़िस्सा अख़बार के पहले पन्ने पर चमका था.

जुहू के सागर-तट के पास भेसाड़िया ने एक टैक्सी रुकवाई थी. (बाली इस इलाक़े का ख़बरी था.) अख़बार की रिपोर्ट के अनुसार टैक्सी में से तेरह जॉकिटों के साथ (अर्थात जॉकिटें कुल पंद्रह थीं) तस्करी के दूसरे सामान भी हाथ लगे थे. जापान की कलाईघड़ी तथा ट्रांजिस्टर रेडियो उनमें मुख्य थे.

अख़बार फेंककर उसने घड़ी में देखा. ग्यारह बजे उसे दोनों जॉकिटों की डिलीवरी देने जाना था. अभी सुबह के सात बजे थे. उसने आमलेट तथा ब्रेड का नाश्ता किया और चाय पीते-पीते सोचने लगा. कॉलेज में पंद्रह दिन का नागा हो गया है. किसी विद्यार्थी के पास से कॉपियां लेकर पंद्रह दिन के नोट्स उतारने पड़ेंगे. पढ़ाई में पूरा ध्यान देना होगा, वर्ना भविष्य में डॉक्टर बनने का सपना सपना ही रह जाएगा.

सुबह आठ बजने से पहले उसके दोनों भाई रज़्ज़ाक और फीरोज़ जागे. दोनों अभी अपनी आंखें मल रहे थे कि इक़बाल ने उन्हें फटाफट तैयार होने के लिए कहा. दोनों ने उसके सामने देखा. स्कूल का समय होने में अभी दो घंटे की देर थी.

दोनों ने दैनिक क्रियाएं निपटाकर चाय-नाश्ता किया और बस्ते दोनों कंधों में फंसाकर पीठ पर लिए, तब तक नौ बज चुके थे.

अभी तक गुलबानू की समझ में भी कुछ नहीं आया था. उसने पूछा, इक़बाल आज इतनी जल्दी क्या है?

दोनों को थोड़ी ताज़ी हवा की ज़रूरत है, उसने दरवाज़े में खड़े रज़्ज़ाक तथा फीरोज़ के सामने देखकर उत्तर दिया.

घुमाने ले जाओगे?

कार में.

कार? गुलबानू की आंखें चौड़ी हो गईं.

चौपाटी तक एक चक्कर लगाकर दस बजे के पहले उन्हें स्कूल छोड़ दूंगा.

पर तेरे पास कार कहां से आई?

एक दोस्त की है अम्मी! उसने आगे बढ़कर दोनों छोटे भाइयों का हाथ थामते हुए कहा, अगले सप्ताह लौटानी है.

फिएट कार मुंडागली के बाहर पालखी मुहल्ले के मुहाने पर पार्क होकर खड़ी थी. दरवाज़ा खोलकर इक़बाल ने दोनों को अंदर बैठने के लिए कहा और ख़ुद ड्राइवर की सीट पर बैठ गया.

दोनों भाई अभी बाहर खड़े थे. टुकुर-टुकुर कार को देख रहे थे. रज़्ज़ाक कार की बॉडी पर इस तरह हाथ फेर रहा था, जैसे वह पालतू पिल्ला हो.

इक़बाल ने चाबी घुमाकर कार स्टार्ट की. मशीन की घरघराहट सुनते ही दोनों भाई तुरंत कार में घुसकर उसकी बगल में बैठ गए. कार पालखी मुहल्ला पार करके बायीं ओर मुड़ गई.

सुबह के इस समय अधिक ट्रॉफिक नहीं था. इसलिए कार फर्राटे भरती भिंडी बाज़ार, नल बाज़ार, गोल देवल, प्रार्थना समाज पार कर चौपाटी आ पहुंची.

समुद्र में भाटा होने के कारण पानी बहुत दूर चला गया था. किनारे की रेत पर, उंगलियों पर गिने जा सकें उतने आदमी दिखाई पड़ते थे. उनमें से कुछ टहल रहे थे, कुछ कोमल धूप का लुत्फ़ ले रहे थे.

यहां कार न रोककर इक़बाल ने हैंगिंग गार्डन की तरफ़ बढ़ा दी. पहाड़ी का घुमावदार चक्कर लेकर थोड़ी देर में वह ऊपर आ पहुंचा. कार पार्क करके उसने दोनों भाइयों को साथ लिया. यहां पहाड़ी के किनारे मुंडेर के पास खड़े होकर पूरी बंबई देखी जा सकती थी.

दोनों भाई लोहे का जंगला पकड़कर देखते रहे. उनके चेहरों पर विस्मय तैर रहा था. शहर पर तैरती धुंध लगभग बिखर गई थी, सूर्य की किरणों में थोड़ी कोमलता अभी भी शेष थी. यहां से मकान खिलौनों-जैसे लगते थे, धीरे-धीरे धुआं उगलती मिल की चिमनियों के ऊपर बनते बादल स्पष्ट देखे जा सकते थे.

इक़बाल ने पास में खड़े कुल्फी वाले से दो कुल्फी ख़रीदकर दोनों भाइयों के हाथ में एक-एक थमा दी. प्रसन्नता से उनके चेहरे चमकने लगे. इक़बाल का मन अपने बचपन में दौड़ गया.

वह अनाथ नहीं था, फिर भी उसका हाथ पकड़कर इस तरह कोई कभी उसे घुमाने नहीं ले आया था. किसी ने कुल्फी ख़रीदकर उसके हाथ में नहीं दी थी. उसके अम्मी-पापा का लगभग पूरा जीवन संघर्ष करते बीता था.

सुबह आठ बजने से पहले उसके दोनों भाई रज़्ज़ाक और फीरोज़ जागे. दोनों अभी अपनी आंखें मल रहे थे कि इक़बाल ने उन्हें फटाफट तैयार होने के लिए कहा. दोनों ने उसके सामने देखा. स्कूल का समय होने में अभी दो घंटे की देर थी. दोनों ने दैनिक क्रियाएं निपटाकर चाय-नाश्ता किया और बस्ते दोनों कंधों में फंसाकर पीठ पर लिए, तब तक नौ बज चुके थे.

सुबह के साढ़े नौ बजे उसने दोनों भाइयों को फिर कार में बैठाया. वापस जाने के लिए इस बार उसने नया रास्ता चुना था. कार माउंड प्लेजेंट रोड से नीचे उतरकर नेपियनसी रोड के समुद्र के समानांतर दौड़ रही थी.

ठीक नौ बजकर चालीस मिनट पर उसने कार हबीब हाईस्कूल के फाटक पर रोकी. दोनों छोटे भाई गर्वपूर्वक बाहर निकलकर उसे मुस्कुराहट देते हुए स्कूल के अंदर दौड़ गए. वह कार स्टार्ट कर पायधुनी की ओर दौड़ गया.

भेसाड़िया द्वारा सौंपी गई दोनों जॉकिटों की डिलीवरी किसी अजनबी को वहीं देनी थी और वह उस समय से पहले वहां आ पहुंचा था. कार पायधुनी पुलिस स्टेशन के पास स्थित दवा की दुकान के क़रीब रोककर वह सड़क पार कर गया.

वहां सामने के फुटपाथ पर खड़ा रहकर वह डिलीवरी लेने के लिए आने वाले जौहरी को बारीक़ी से देख सकता था. जौहरी उसको पहचाने, इसके पहले वह ख़ुद जौहरी को पहचान लेना चाहता था.

लगभग ग्यारह बज रहे थे. सुबह नौ बजे के पहले ही यहां भीड़ जमा होनी शुरू हो जाती थी. इस समय तो लोगों का आना-जाना देखकर ऐसा लगता था, मानो शहर पर बम गिरने वाला हो. लोग अपनी-अपनी धुन में अलग-अलग दिशाओं में दौड़ रहे थे. दवा की दुकान पर भी काफी भीड़ थी.

इक़बाल सरसरी निगाह से सब कुछ देख रहा था और उसे ख़याल आया. दवा की दुकान के बाहर धोती-कोट पहने एक आदमी आकर रुक गया था. सिर पर गांधी टोपी थी. आंखों पर तार की कमानी वाला चश्मा था. इक़बाल की तरह वह भी चुप-चाप खड़ा होकर लोगों के चेहरे देख रहा था.

इक़बाल को तसल्ली हो गई. रास्ता पार कर वह जौहरी के पीछे आया और धीरे से उसके कंधे पर हाथ रखा. चौंककर जौहरी ने पीछे देखा और देखता ही रह गया.

इक़बाल को कुछ कहने की ज़रूरत नहीं थी. वह कार की ओर बढ़ा. जौहरी उसके पीछे चला. थोड़ी देर बाद दोनों कार के पास आए और अगली सीट पर बैठ गए. इक़बाल ने कार स्टार्ट की.

जौहरी अभी भी उधेड़-बुन में था कि कार चलाने वाले इस लड़के ने उसे कैसे पहचाना होगा. आख़िर जिज्ञासा शांत करने के लिए उसने पूछ लिया. इक़बाल ने उसके प्रश्न की उपेक्षा करते हुए कहा, नोट कहां है?

जौहरी ने तुरंत अपने कोट में हाथ डालकर नोट निकाला और उसके सामने धर दिया. अब तक कार मोहम्मद अली रोड पार कर फ्लोरा फाउंटेन (आज के हुतात्मा चौक) तक पहुंच गई थी. यहां से उसने कार गेटवे ऑफ इंडिया पर ली और पार्क की.

अब उसने एक रुपये पर छपे नंबर को इंस्पेक्टर द्वारा पर्ची पर लिखे नंबर के साथ मिलाकर देखा. दोनों नंबर एक थे.

डिलीवरी के सबूत के तौर पर नोट अपने पास रखकर उसने सीट के नीचे से ब्राउन पेपर के पैकेट में लिपटी दोनों जॉकिटें निकालीं और जौहरी को सौंप दीं. फिर उसने पूछा, आपको कहां छोड़ूं?

दोपहर एक बजे से पहले इक़बाल जौहरी को प्रिंसेस स्ट्रीट के पास छोड़कर हाजी अली आया. इंस्पेक्टर भेसाड़िया उसी के इंतज़ार में पेट्रोल-पंप की केबिन में बैठा था.

कार पार्क कर इक़बाल केबिन में दाख़िल हुआ.

(अगले अंक में जारी)

इंटरनेट पर ज़रा संभल के

इंटरनेट को अगर शुद्ध हिंदी में कहना हो तो, कहेंगे- अंतरजाल. यह जाल ऐसा है, जिसने सारी दुनिया को अपने अंदर समेट रखा है. जब ग्लोबल विलेज़ की बात होती है तो सही मायनों में यह इंटरनेट ही है जिसने इस पूरी सोच को दिशा दी है. जानकारी और सूचना के भंडार के तौर पर भी इसका कोई जवाब नहीं. इसके असर का अंदाज़ा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि एक सर्वे के मुताबिक भारत भर में बच्चों के बीच इंटरनेट ही सूचना का सबसे बड़ा माध्यम है. टीवी और अख़बारों को इसने काफी पीछे छोड़ दिया है.

इंटरनेट अलादीन के चिराग़ के जिन्न की तरह है, जहां हर मुराद बस एक क्लिक दूर है. लेकिन इस जिन्न की भी अपनी समस्याएं हैं. इतनी सारी सुविधाओं के साथ ही इंटरनेट कई बुराइयों को साथ लेकर भी आया है. इसलिए यह बहुत ज़रूरी है कि इसका इस्तेमाल ज़रा संभल कर किया जाए.

पोर्न, सेक्स और फ्रेड-क्या ढूंढ़ रहे हैं बच्चे

उमस भरी गर्मी, स्वाइन फ्लू का डर और स्कूलों में छुट्टियां. ऐसे में बच्चे घर पर ही रहें तो मम्मी-पापा चैन की सांस लेते हैं. अब बच्चे घर पर रहें तो इंटरनेट तो सर्च करेंगे ही. वैसे भी भारत में सबसे ज़्यादा इंटरनेट पर काम करने वाले बच्चे ही हैं. हालांकि इंटरनेट का ख़तरा भी कोई कम नहीं है. बच्चे इंटरनेट पर क्या देख रहे हैं, यह भी मम्मी-पापा के लिए चिंता का विषय है. हो भी क्यों न, अगर बच्चों के इंटरनेट सर्च पर नज़र रखने वाले सॉफ्टवेयर नॉर्टन फैमिली की मानें तो यूट्यूब, फेसबुक और ऑरकुट जैसी वेबसाइट्स के साथ-साथ सेक्स और पोर्न भी बच्चों की सर्च लिस्ट में टॉप पर हैं. नॉर्टन फैमिली एक ऐसा सॉफ्टवेयर है, जिसके ज़रिए मां-बाप अपने बच्चों के सर्च और दूसरी इंटरनेट हरक़तों पर नज़र रख सकते हैं. इस सॉफ्टवेयर के ज़रिए इकट्ठा किए गए आंकड़ों को एक साथ मिलाकर नॉर्टन ने ये आंकड़े जारी किए हैं. इसके मुताबिक पिछले साल भर के दौरान दुनिया भर के बच्चों में यूट्यूब, गूगल, फेसबुक सर्च के मामले में सबसे ऊपर रहे. लेकिन सेक्स और पोर्न जैसे विषय भी टॉप छह में जगह बनाने में सफल रहे. जहां सेक्स को दुनिया भर में हुई सर्च के हिसाब से चौथा स्थान मिला, वहीं पोर्न छठे स्थान पर रहा. इसके अलावा पॉप स्टार माइकल जैक्सन भी इस साल बच्चों के सर्च में बहुत आगे रहे. इसके अलावा याहू और ई-बे भी दस सबसे ज़्यादा सर्च किए जाने वाले शब्दों में रहे.

हालांकि इन आंकड़ों से ज़्यादातर लोगों को हैरानी नहीं हुई है. नॉर्टन की मालिक कंपनी सायमनटेक की इंटरनेट सुरक्षा सलाहकार मरियन मैरिट कहती हैं कि सब जानते हैं कि इंटरनेट पर सेक्स और पोर्न का एक बहुत बड़ा बाज़ार है और अधिकतर बच्चे इससे जुड़ी सामग्री सर्च करते हैं. शायद यही वजह है कि मां-बाप को इससे कोई बहुत बड़ा आश्चर्य नहीं हुआ होगा. हां, यह ज़रूरी है कि मां-बाप इस बारे में बच्चों से बात करें और उन्हें समझाने की कोशिश करें.

हालांकि इस फेरहिस्त में एक शब्द है जिससे मां-बाप को बड़ी हैरानी हुई होगी और अधिकतर को जिसके बारे में कोई जानकारी भी नहीं है. वह है-फ्रेड. यह शब्द बच्चों की सर्च लिस्ट में नौंवे नंबर पर है. दरअसल फ्रेड, यूट्यूब पर एक वीडियो चलाने वाले फ्रेड फिगलहोर्न के लिए है. यह वीडियो चैनल बच्चों में काफी लोकप्रिय है.

बड़े धोखे हैं इस राह में

बच्चे भले ही इंटरनेट सर्च में आगे हों, लेकिन युवा और बड़े भी इंटरनेट के इस्तेमाल में ज़्यादा पीछे नहीं हैं. भारत में इंटरनेट का इस्तेमाल करने वाले अधिकतर लोग सोशल नेटवर्किंग साइट्स विजिट करते हैं. यारी-दोस्ती के मामले में भारत का जवाब नहीं है, लेकिन इस रास्ते में भी ख़तरे कम नहीं है. फेसबुक, हाई5, ट्विटर, माईस्पेस और ऑरकुट (जो भारत में सबसे ज़्यादा सर्च किए जाने वाले शब्द हैं) जैसी सोशल वेबसाइट्स का प्रयोग करने वाले लोगों को संभल कर रहने की ज़रूरत है. अगर आपको इन साइट्स पर किसी दोस्त या किसी सेलेब्रेटी के मज़ेदार वीडियो देखने का निमंत्रण मिल रहा हो, तो इस निमंत्रण को ठुकराने में ही आपकी और आपके कंम्यूटर की भलाई है. अगर आप इस तरह के वीडियो के चक्कर में फंस गए तो आप कोबफेस के फेर में आ सकते हैं. कोबफेस एक ऐसा वार्म है, जो वीडियो निमंत्रण के ज़रिए आपके कंप्यूटर में प्रवेश कर जाता है और आपकी निजी जानकारी उड़ा ले जाता है.

कोबफेस ऐसे काम करता है कि जब आप इस तरह के किसी वीडियो लिंक पर जाते हैं तो वह लिंक आपको इन नेटवर्किंग साइट्स से अलग एक दूसरी साइट्स पर ले जाते हैं.

जहां आपसे वीडियो देखने के लिए एडोब फ्लैश प्लेयर को अपडेट करने को कहा जाता है, ऐसा करते ही कोबफेस आपके सिस्टम पर हमला कर देता है.

कोबफेस का नाम सोशल नेटवर्किंग साइट फेसबुक के नाम को तोड़-मरोड़ कर बनाया गया है. कोबफेस का ख़तरा कितना बड़ा है, इसका अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि भारत सरकार की कंप्यूटर इमरजेंसी रिस्पांस टीम ने इस बारे में एक चेतावनी जारी की है.

अब लीजिए फेसबुक लाइट के मज़े

मशहूर सोशल साइट फेस बुक, युवाओं के लिए एक नई भेंट लेकर आई है. इसने अपनी सेवा में विस्तार करते हुए एक नई साइट-फेस बुक लाइट-को प्रयोग के तौर पर भारत में शुरू किया है. यह ब्रॉडबैंड के बिना भी चलेगा. यानी जहां ब्रॉडबैंड की सुविधा नहीं है, वहां भी लोग इसका धड़ल्ले से इस्तेमाल कर सकेंगे. पहले से ही लगभग 25 करोड़ सक्रिय यूजर वाले फेसबुक की इसके ज़रिए लोकप्रियता और बढ़नी तय है. बहरहाल, फेसबुक लाइट का टेस्ट शुरू हो चुका है. इसके ज़रिए मोबाइल और नेरोबैंड कनेक्शन पर नेटवर्किंग की सुविधा मुहैया कराई जाएगी. दरअसल यह फेसबुक का ही सरल रूप है. इसका लक्ष्य उन देशों में पैर ज़माना है जहां ब्रॉडबैंड इंटरनेट की सुविधा उतनी आसानी से उपलब्ध नहीं है. वर्तमान में प्रयोग के तौर पर इस साइट को भारत में शुरू किया गया है. इसे जल्द ही चीन और रूस में भी ले जाने की योजना बनाई गई है. फेसबुक प्रबंधन के मुताबिक यह नई साइट-फेसबुक लाइट-तेज़ स्पीड वाली और इस्तेमाल में आसान होगी. इसकी आसानी देखनी हो, तो इसका इस्तेमाल अपने मोबाइल पर करके देखिए. जी हां, फेसबुक लाइट जहां फास्ट लोडिंग करता है, वहीं इस पर कमेंट, नए लोगों को दोस्त बनाने, फोटो देखने और स्टेटस अप टू डेट करने की सुविधा भी होगी. फेसबुक ने दावा किया है कि उसके 25 करोड़ सक्रिय यूजर हैं. हालांकि उनमें से 72 परसेंट यूरोप और अमेरिका में है, जहां फास्ट ब्रॉडबैड इंटरनेट आम बात है. लेकिन भारत जैसे विकासशील देशों में मोबाइल फोन इंटरनेट के नए माध्यम के रूप में उभरकर सामने आ रहा है. यहां ब्रॉडबैंड के लिए इंफ्रास्ट्रक्चर विकसित नहीं है. इसलिए सर्फिंग के लिए यह विकल्प काफी लोकप्रिय हो रहा है.

सैमसंग ने उतारे दो नए हैंडसेट

नए-नए फीचर्स के साथ उपभोक्ताओं को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए सेलफोन कंपनियों में होड़-सी मची रहती है. हर कंपनी दूसरे को पीछे छोड़ने की फिराक़ में रहती है. शायद इसलिए नए-नए फीचर्स के साथ सेलफोन कंपनियां एक के बाद एक नए हैंडसेट बाज़ार में उतार रही हैं. इसी सिलसिले में सैमसंग ने भारतीय बाज़ार में अपने नए हैंडसेट्स उतारे हैं. इसमें कंपनी ने अपने उपभोक्ताओं को मनोरंजन से लेकर वेब ब्राउजिंग, हर तरह की सुविधा देने की कोशिश की है.

सैमसंग ने भारतीय बाज़ार में ओमनीया सीरीज के दो नए हैंडसेट्स उतारे हैं. कंपनी ने पहला सेट ओमनीया एचडी के नाम से लांच किया है. इसकी क़ीमत 33,990 रुपये है. इसकी सबसे बड़ी ख़ासियत इसकी हाई डीफिनिशन वीडियो रिकॉर्डिंग सुविधा है. इसके साथ 9.4 सेंटीमीटर का एएमओएलईडी स्क्रीन है. इसके अलावा कंपनी ने ओमनीया पीआरओ को भी लांच किया. इसकी क़ीमत 16,500 है. इस मॉडल में तीन मेगापिक्सल का कैमरा, एफएम रेडियो और वाई-फाई की सुविधा है.

सैमसंग ओमनीया एचडी इस बात का उदाहरण है कि कंपनी अपने उपभोक्ताओं को अच्छे से अच्छे हैंडसेट्स मुहैया कराना चाहती है. वह हर मामले में अपने कंज्यूमर को संतुष्ट करना चाहती है. चाहे बात फंक्शन की हो या स्टाइल की.

नोकिया और माइक्रोसॉफ्ट ने मिलाया हाथ

कहते हैं कि ज़रूरत पड़ने पर दुश्मन को भी दोस्त बना लेना अच्छे बिजनेससेंस की निशानी होती है. कभी एक ज़माने में एक-दूसरे के प्रतिद्वंद्वी रहे माइक्रोसॉफ्ट और नोकिया ने अब अच्छे बिज़नेस के लिए हाथ मिला लिया है. इन दोनों के बीच की यह दोस्ती दरअसल दोनों कंपनियों के लिए समय की मांग है. इनका साथ आने का मक़सद मोबाइल हैंडसेट और मोबाइल सॉफ्टवेयर के बाज़ार पर अपनी स्थिति मज़बूत करना है. हाल के समय में इन कंपनियों को कड़े मुक़ाबले का सामना करना पड़ रहा है. यह समझौता इसी चुनौती से निपटने की कोशिश है.

इन दोनों के बीच हुए इस सौदे से माइक्रोसॉफ्ट के ऑफिस और दूसरे सॉफ्टवेयरों को नोकिया के सेलफोनों में जगह मिलेगी. यह कामकाजी लोगों के बाज़ार को ध्यान में रखकर किया जा रहा है, जहां फ़िलहाल रिसर्च इन मोशन लिमिटेड कंपनी के ब्लैकबेरी स्मार्टफोन सेट्स का बोलबाला है.

इस समझौते के तहत नोकिया के सेलफोनों में माइक्रोसॉफ्ट (एमएस) की सुविधाएं जुड़ जाएंगी. लोग अब एक नंबर घुमा कर लोगों से सीधे संपर्क में रह सकेंगे. एमएस के वर्ड, एक्सेल, पावर प्वांइट जैसे प्रोग्राम नोकिया के फोन वर्ज़न में काम करेंगे. स्लाइड शो के ज़रिए लोग अपने प्रजेंटेशन रख सकेंगे. इससे नोकिया के फोन भी कामकाजी लोगों की ज़रूरतों को पूरा कर सकेंगे. उधर, एमएस की कोशिश अपने एमएस ऑफिस पैकेज को प्रोफेशनल लोगों के बीच लोकप्रिय बनाने की होगी. अभी एमएस को गूगल और सिस्को जैसे विरोधियों के बनाए प्रोग्रामों से काफी नुक़सान हुआ है. बहरहाल, यह साफ हो गया है कि इस सौदे का असल ज़ोर ब्लैकबेरी को पछाड़ने पर होगा. वैसे उम्मीद की जा रही थी कि नोकिया अपने सबसे मज़बूत विरोधी एप्पल से टक्कर लेगा, जिसके आईफोन ने दुनिया भर में धूम मचा रखी है. लेकिन अब लगता है कि नोकिया पहले ब्लैकबेरी से निपटना चाहती है.

वैसे नोकिया अभी भी बाज़ार में सबसे ज़्यादा स्मार्टफोन्स की बिक्री करती है. उसका क़ब्ज़ा बाज़ार के 45 फ़ीसदी हिस्से पर है. वहीं रिसर्च इन मोशन लिमिटेड (आरआईएम) 18 फ़ीसदी का हिस्सेदार है. हालांकि पिछले साल नोकिया 47 फ़ीसदी और आरआईएम 17 फ़ीसदी पर थे. नोकिया का बाज़ार धीरे-धीरे घट रहा है, इसकी वजह उसकी पुरानी सिंबियन तकनीक को माना जा रहा है. अब देखना है कि पुराने दुश्मनों की यह नई दोस्ती क्या रंग लाती है और इसका मोबाइल के बाज़ार पर क्या असर होता है.

भुवन भिड़ेगा गूगल अर्थ से!

गूगल अर्थ पर लोग इंटरनेट के माध्यम से अपने घर, मोहल्ले, शहर और देश की भौगेलिक स्थिति की तस्वीरें देखते हैं, लेकिन इस पर आपको तस्वीरें पुरानी दिखाई दे रहीं हो या साफ नहीं दिखाई दे रही हो, तो चिंता करने की कोई बात नहीं है. अब इसका देसी इलाज आ गया है. भारतीय स्पेस रिसर्च ऑर्गनाइजेशन (इसरो) ने गूगल अर्थ को टक्कर देने के लिए अपने देसी जियोपोर्टल भुवन को लांच किया है.

इसरो ने गूगल अर्थ के अपने देसी वर्ज़न भुवन की शुरुआत कर दी है. इसके ज़रिए यूजर्स दुनिया के किसी भी हिस्से को ज़ूम करके नज़दीक से देख सकते हैं. हालांकि संवेदनशील जगहों को देखना सभी के लिए आसान नहीं होगा, क्योंकि इसके लिए पासवर्ड की ज़रूरत पड़ेगी. इसरो के चेयरमैन जी. माधवन नायर ने राजधानी में एक कार्यक्रम में भुवन वेबपोर्टल को लांच किया. उन्होंने कहा कि गूगल के मुक़ाबले भुवन पर न सिर्फ़ ताज़ा तस्वीरें उपलब्ध हैं, बल्कि रोज़मर्रा की ज़िंदगी और सामाजिक उपयोग से जुड़ी कई जानकारियां भी मौजूद हैं. जिससे आपको काफी फ़ायदा होगा. भुवन के ज़रिए आप दो शहरों के बीच की हवाई दूरी भी नाप सकते हैं. इतना ही नहीं बंजर भूमि, मिट्टी और जल संसाधन संबंधी आंकड़े भी प्राप्त किए जा सकते हैं. ग़ौरतलब है कि इसरो ने इसे महज़ नौ महीनों में विकसित किया है.

भुवन आतंकी हमले से निपटने में भी काफी मददगार साबित होगा. इसके ज़रिए सुरक्षा बल किसी भी इलाक़े की भौगोलिक स्थिति की सही जानकारी प्राप्त कर सकते हैं. जिससे कार्रवाई करते वक़्त उन्हें काफी मदद मिलेगी. इस सुविधा का दुरुपयोग नहीं हो, इसके लिए सुरक्षा बल और सरकारी एजेंसियों को सुरक्षित पासवर्ड दिए जाएंगे. इसमें ऐसी जानकारियां होंगी, जो सामान्य लोगों तक नहीं पहुंच सकेंगी.

आम लोगों के लिए तो भुवन बड़े काम की चीज़ है, इसरो का दावा है कि इससे दस मीटर तक की दूरी से किसी चीज़ को देखा जा सकता है. भुवन को लेकर इतनी उत्सुकता थी कि पहले ही दिन लोगों ने इसे जमकर डाउनलोड किया. इतना ट्रैफिक रहा कि वेबसाइट धीमी हो गई, इसके अलावा भुवन को इस्तेमाल करने वालों की तरफ़ से मिलीजुली प्रतिक्रिया आई. कई लोगों को यह अच्छा लगा लेकिन अधिकतर लोगों का कहना है कि गूगल अर्थ के मुक़ाबले इसके नेविगेशन टूल्स को और बेहतर बनाना होगा, तभी यह गूगल अर्थ को टक्कर दे पाएगा.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

दिलदार बन गया बीसीसीआई

भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड यानी बीसीसीआई बदल गया है. उसका चेहरा हठी और घमंडी से बदलकर मानवीय हो गया है. चाहे वह अपने सीनियर खिलाड़ियों के प्रति रुख़ का मामला हो या बाग़ी क्रिकेटरों से सहानुभूति या दूसरे खेलों की मदद का-हर जगह बोर्ड अब बड़े भाई की भूमिका में दिखने लगा है. इसमें कोई शक़ नहीं कि बीसीसीआई अभी क्रिकेट जगत का सबसे शक्तिशाली बोर्ड है. इस ताक़त का फ़ायदा बीसीसीआई अपनी बात मनवाने के लिए भी उठाता रहता है. इसलिए क्रिकेट दुनिया में उसकी छवि भी कुछ ख़ास अच्छी नहीं है. इधर, घर में भी क्रिकेट की धूम भले हो लेकिन बीसीसीआई की छवि विलेन वाली ही है. अब लगता है कि क्रिकेट बोर्ड चाहता है कि उसकी छवि थोड़ी बदले और तभी उसने एक के बाद एक उदारताएं दिखाई हैं. वाडा के डोपिंग टेस्ट वाले मुद्दे पर वह अपने खिलाड़ियों के साथ खड़ा है, तो बग़ावत कर आईसीएल में चले गए खिलाड़ियों को वापस अपनी छत्रछाया में जगह दे दी है. अब वह क्रिकेट ही नहीं भारत में दूसरे खेलों का भी मददगार बन रहा है. कहना न होगा कि बीसीसीआई का यह रुख़ हैरान करता है. लेकिन उससे अधिक, इसका स्वागत किया जाना चाहिए.

फुटबॉल का तारणहार बना क्रिकेट

भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड ने भारतीय फुटबॉल के उद्धार का बीड़ा उठाने की कोशिश की है. बीसीसीआई ने भारतीय फुटबॉल संघ को 25 करोड़ रुपये की मदद देने का ऐलान किया है. इस रक़म को भारतीय फुटबॉल की बेहतरी पर ख़र्च किया जाएगा. बीसीआई की कार्यकारी समिति ने यह फ़ैसला किया कि अगले दो साल तक वह अखिल भारतीय फुटबॉल महासंघ को 25 करोड़ रुपये देगी. इस पैसे का इस्तेमाल फुटबॉल संघ 2011 में कतर में होने वाले एशियन कप की तैयारियों में करेगा. दरअसल, दुनिया के सबसे अमीर क्रिकेट बोर्ड बीसीसीआई से मदद की ये गुहार फुटबॉल संघ ने ही की थी. फुटबॉल संघ के अधिकारियों ने बीसीसीआई के सामने गोल-2011 नाम की योजना रखी थी. इसमें भारतीय फुटबॉल संघ ने उम्मीद जताई थी कि क्रिकेट बोर्ड की मदद से किस तरह भारतीय फुटबॉल को नई ज़िंदगी मिल सकती है. वैसे, फ़िलहाल भारतीय टीम अंतरराष्ट्रीय फुटबॉल रैंकिंग में 156वें स्थान पर है.अखिल भारतीय फुटबॉल महासंघ (एआईएफएफ) के मुताबिक एशियन कप के लिए वह 25 विशेष खिलाड़ियों को चुनेगा. संभावित खिलाड़ियों की यह टीम एशियन कप से नौ महीने पहले चुनी जाएगी. योजना के मुताबिक इन चुनिंदा खिलाड़ियों को फुटबॉल के लिए मशहूर स्पेन के शहर बार्सिलोना में ट्रेनिंग दी जाएगी. फुटबॉल संघ के खिलाड़ियों के मुताबिक बार्सिलोना जैसी कई सुविधाएं भारत में नहीं हैं. अब बीसीसीआई के इस प्रस्ताव को मान लेने से एआईएफएफ को अपने खिलाड़ियों को तैयार करने के लिए ज़रूरी संसाधन जुटाने का रास्ता खुल गया है. चलो अच्छा है, देर से ही अगर बीसीसीआई अपनी हैसियत का इस्तेमाल दूसरे खेलों को बढ़ावा देने में करे तो भारत में खेलों को बड़ा फ़ायदा पहुंचेगा.

सभी फोटो-*पीटीआई*

बाग़ियों को माफ़ी, घरेलू खिलाड़ी मालामाल

बीसीसीआई ने अपनी कृपादृष्टि केवल दूसरे खेलों पर ही नहीं, बल्कि अपने खेल यानी क्रिकेट पर भी डाली है. बीसीसीआई की दरियादिली का फ़ायदा बाग़ी हो चुके आईसीएल के क्रिकेटरों को भी ख़ूब मिला है. भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड ने माफी मांग चुके पूर्व आईसीएल क्रिकेटरों के तीसरे इंडियन प्रीमियर लीग में खेलने का रास्ता साफ कर दिया है. साथ ही बीसीसीआई ने उनकी भुगतान की सीमा अधिकतम 20 लाख रुपये तय कर दी. बीसीसीआई ने कहा, जिन पूर्व आईसीएल क्रिकेटरों को माफी दे दी गई है, वे अगले सत्र यानी 2010 में आईपीएल में खेल सकते हैं. ग़ौरतलब है कि आईसीएल में गए इन खिलाड़ियों के साथ बीसीसीआई ने अपने सारे रिश्ते तोड़ लिए थे. बीसीसीआई कार्यसमिति की बैठक में आईसीएल खिलाड़ियों को मुख्यधारा से जोड़ने का फ़ैसला लिया गया. साथ ही बीसीसीआई ने घरेलू क्रिकेट को भी सौगातें दी हैं. रणजी ट्रॉफी विजेताओं की पुरस्कार राशि और अंपायरों और मैच रैफरियों की मैच फीस भी बढ़ाने का फ़ैसला लिया गया. रणजी ट्रॉफी विजेता की पुरस्कार राशि अब दो करोड़ रुपये, उपविजेता को एक करोड़ रुपये और सेमीफाइनल हारने वाली टीमों को 50-50 लाख रुपये दिए जाएंगे.

अंपायरों और कोचों को प्रति मैच दिवस 7500 रुपये देने और 3750 रुपये उनके लिए बनाए गए फंड में जमा कराने का फ़ैसला भी किया गया है. अंपायरों, कोचों और मैच रैफरियों (आईपीएल को छोड़कर) को प्रति मैच रोज़ाना 10000 रुपये दिए जाएंगे. ऑस्ट्रेलिया में इमर्जिंग प्लेयर्स टूर्नामेंट जीतने वाली टीम और सहयोगी स्टाफ के प्रत्येक सदस्य को भी बीसीसीआई ने गिफ्ट दिया है. उन्हें एक लाख रुपये बोनस के रूप में दिए जाएंगे. जिस बीसीसीआई पर घरेलू क्रिकेट को नज़रअंदाज़ करने के आरोप लगते रहे हैं, उसकी यह दिलदारी देखकर खिलाड़ी भी दंग हैं.

द्रविड़ फिर बने दीवार

श्रीलंका दौरे और चैंपियंस ट्रॉफी के लिए राहुल द्रविड़ का चयन बताता है कि बीसीसीआई अपने पुराने ढर्रे पर लौट आया है. उसी तरह, जैसे बेंगलुरू रॉयल चैलेंजर्स के मालिक विजय माल्या ने आईपीएल के पहले सीज़न की ग़लतियों से दूसरे सीजन में सबक़ लेते दिखे थे. यक़ीनन इसके लिए सीनियर क्रिकेटरों के खेल का भी योगदान अधिक रहा है. यानी खेल में दम है तो उसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए. सिद्धांत रूप में यह कहना-सुनना अच्छा लगता है. लेकिन क्या इस पर अमल भी किया जाता है? शायद नहीं. अगर ऐसा होता तो पिछले दिनों आस्ट्रेलिया में इमर्जिंग प्लेयरों का टूर्नामेंट जिताने में प्रमुख भूमिका निभाने वाले विराट कोहली को भी टीम में होना चाहिए था. वैसे इस तरह के उदाहरण के लिए विराट कोहली अकेले नहीं हैं. फिर भी, यह उम्मीद की जा सकती है कि जैसे द्रविड़ के मामले में चयनकर्ताओं ने भूल सुधार कर ली है, उसी तरह कोहली और शिखर धवन जैसे युवा क्रिकेटरों के मामले में भी जल्द ही कुछ ऐसा ही देखने को मिल सकता है. द्रविड़ महान बल्लेबाज हैं और तकनीकी दृष्टि से वह आज भी औरों के मुक़ाबले बीस बैठते हैं. और, जब चोट के कारण सहवाग टीम में नहीं हैं, तब मध्यक्रम में द्रविड़ जैसे एक ठोस बल्लेबाज की जगह तो बनती ही थी. ग़ौरतलब है कि यह पिछली चयन समिति की राजनीति ही थी कि द्रविड़ जैसे खिलाड़ी को एकदिवसीय टीम से बाहर कर दिया गया था. वर्तमान मुख्य चयनकर्ता श्रीकांत अन्य के मुक़ाबले थोड़े अधिक संवेदनशील माने जाते हैं. इसलिए अपने सीनियर क्रिकेटर को एक मौक़ा देकर उन्होंने सही ही किया है. कम से कम द्रविड़ और देशवासियों के सामने अंतिम रूप से यह तो साफ हो जाएगा कि वह आज भी टीम की मज़बूत दीवार हैं. यक़ीन मानिए, द्रविड़ ऐसे खिलाड़ी हैं कि अगर उन्हें लगा कि वह न्याय नहीं कर पा रहे हैं तो ख़ुद ही खेल से हट तक सकते हैं. टेस्ट क्रिकेट की कप्तानी को लात मार कर उन्होंने ऐसा कर दिखाया है. इसमें कोई दो राय नहीं कि युवाओं को मौक़े मिलने ही चाहिए. लेकिन क्या इसका यह मतलब निकाला जाना चाहिए कि किसी सीनियर को ख़ुद को साबित करने के लिए दूसरा मौक़ा नहीं मिलना चाहिए?

फोटो-*प्रभात पाण्डेय*

बैडमिंटन का विश्व कप

साइना से शुरू, साइना पर ख़त्म

भारत में एक विश्व कप शुरू होकर ख़त्म भी हो गया. क्या आपको पता चला? शायद नहीं. इसलिए कि यह क्रिकेट से जुड़ा नहीं था. यह विश्व चैंपियनशिप थी बैडमिंटन की. संभव है कि कुछ लोगों को इसका पता भी रहा हो, लेकिन साइना नेहवाल से अधिक शायद ही उन्हें भी कुछ याद हो. इसमें कुछ ग़लत भी नहीं है. दरअसल, हाल के दिनों में साइना भारत में बैडमिंटन की पर्याय बन गई हैं. इतनी कि चैंपियनशिप से हार कर बाहर होते ही टीवी पर इस चैंपियनशिप का प्रसारण कर रहा चैनल भी दिखना बंद हो गया. वह चैनल था-डीडी स्पोर्ट्स.

सवाल भारत के प्रदर्शन का भी नहीं है, सवाल यह है कि आख़िर एक खेल की विश्व चैंपियनशिप को हमने आयोजित तो किया लेकिन महज़ खानापूर्ति के लिए. चैंपियनशिप के शुरू होने से पहले ही इंग्लैंड की टीम सुरक्षा कारणों से इसे छोड़ कर चली गईं. टूर्नामेंट के दौरान ही आस्ट्रिया के खिलाड़ी भी लौट गए. चैंपियनशिप तो हुई, लेकिन साइना के अलावा किसी और का नाम भी हमारी मीडिया में नज़र नहीं आया. अगर क्रिकेट के अलावा अन्य खेलों के आयोजन को हम ही गंभीरता से नहीं लेंगे, तो बाहर वाले तो खिल्ली उड़ाएंगे ही.

बहरहाल, इस टूर्नामेंट में शुरू से आख़िर तक चीनी खिलाड़ियों का दबदबा रहा. चीन के लिन डैन ने सिंगल्स में अपने ही देश के जिन चेन को सीधे सेटों में हराकर नया इतिहास रचा. इस जीत के साथ ही उन्होंने विश्व चैंपियनशिप का ख़िताब जीतने की हैट्रिक बनाई. बैडमिंटन के सुपर डॉन कहे जाने वाले लिन ऑल इंग्लैंड बैडमिंटन ख़िताब चार बार जीत चुके हैं. वह 2004 में दुनिया के नंबर एक खिलाड़ी बने और केवल महत्वपूर्ण प्रतियोगिताओं में हिस्सा लेने का निर्णय करने तक इस स्थान को बरकरार रखा. महिला सिंगल्स के फाइनल मुक़ाबले में चीन की ही लु लान ने अपने ही देश की शेई जिंगफांग को हराया. चीन की ही मा जिन व वांग जियाओली की जोड़ी ने महिला युगल का भी ख़िताब जीता. जबकि मिक्स्ड डबल्स का ख़िताब डेनमार्क के थॉमस लेबोर्न व कामिला राइटर की जोड़ी ने जीता.

जहां तक साइना की बात है, तो वह एक फाइटर हैं. इस बात का सबूत तो उन्होंने इस चैंपियनशिप में भाग लेकर ही दे दिया. साइना इस चैंपियनशिप से महज़ एक हफ़्ते पहले तक चिकन-पॉक्स से बीमार थीं. ऐसे में इस टूर्नामेंट में उतरना और इसके तीसरे दौर तक पहुंचना कोई छोटी बात नहीं है. ज़ाहिर है, साइना इस बार भले हार गईं लेकिन उन्होंने दिखा दिया कि उनमें वह ज़ज्बा और लगन है, जो चैंपियन के पास होती है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

ओलंपिक में शामिल हुई महिला मुक्केबाज़ी

चार बार विश्व विजेता रह चुकीं और हाल में ही खेल रत्न से सम्मानित महिला मुक्केबाज़ एम मैरीकॉम की नज़र अब एक और बड़े लक्ष्य पर है. लक्ष्य ओलंपिक विजेता बनने का है. सपना भारत के लिए सोना जीतने का है. मैरीकॉम के इस सपने की राह अब अंतरराष्ट्रीय ओलंपिक कमिटी (आईओसी) ने खोल दी है. 2012 के लंदन ओलंपिक में मुक्केबाज़ी के रिंग में महिलाएं भी दिखेंगी. आईओसी ने लंदन ओलंपिक में महिला मुक्केबाज़ी को जगह दे दी है. ग़ौरतलब है कि ओलंपिक में सिर्फ़ बॉक्सिंग ही ऐसा खेल है जिसमें महिलाओं का वर्ग नहीं था. अब आईओसी के इस फ़ैसले से महिला मुक्केबाज़ी को भी खेलों के सबसे बड़े महाकुंभ में जगह मिल जाएगी. इससे पहले महिला मुक्केबाज़ी को इस आधार पर ओलंपिक में जगह नहीं दी गई थी कि इस खेल की अपील पूरी दुनिया में नहीं है. अब ओलंपिक मुक्केबाज़ी में पुरुषों की 11 प्रतियोगिताओं की जगह 10 पुरुषों और 3 महिलाओं की प्रतियोगिताएं रखीं जाएंगी. भारत के लिए महिला मुक्केबाज़ी को ओलंपिक में शामिल करने की बात ख़ुशख़बरी है. इस खेल में भारतीयों ने अबतक अच्छा प्रदर्शन दिखाया है और भारत को मैरीकॉम और उसके साथियों से काफी उम्मीदें हैं. पिछली बार मुक्केबाज़ी ने ही भारत को दो कांस्य दिलवाए थे, अब महिलाओं के भी मैदान में होने से भारत और पदकों की उम्मीद तो लगा ही सकता है. वैसे लॉन टेनिस के मिक्स्ड डबल्स वर्ग को भी ओलंपिक में जगह देने की बात चल रही है.

फर्राटा दौड़ में बोल्ट ने फिर रौंदा रिकार्ड

पृथ्वी एक पल के लिए रुक गई और वह मंगल तक पहुंच गया. पूर्व विश्व विजेता मौरिस ग्रीन का यह बयान शायद उसैन बोल्ट के नए विश्व रिकार्ड को बख़ूबी बयान करता है. जब पिछले ओलंपिक (बीजिंग) में बोल्ट ने 100 मीटर की दौड़ में गोल्ड जीता था तो उन्होंने साबित कर दिया था कि वह दुनिया में सबसे तेज़ हैं. उन्होंने अपने ही रिकार्ड में से 0.11 सेकेंड का वक़्त कम करते हुए महज़ 9.58 सेकेंड में 100 मीटर की दौड़ लगाई है. उनके दबदबे का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि उनके प्रतिद्वंद्वी टायसन गे ने 9.71 सेकेंड का जो समय निकाला, वह अमेरिका के किसी भी खिलाड़ी का श्रेष्ठतम समय है, लेकिन वह भी बोल्ट से काफी पीछे रह गए.

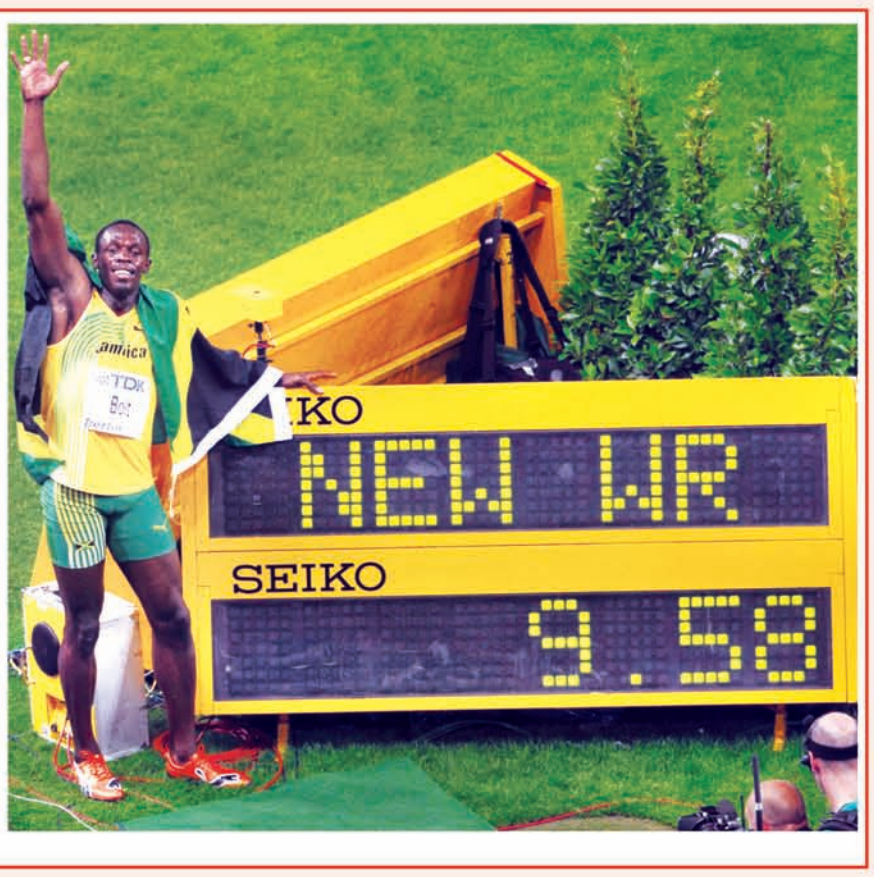

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

मधुर नहीं रहे रिश्ते

मधुर नहीं हो पा रहे हैं आशुतोष गोवारीकर और भंडारकर के रिश्ते. पहले दोनों अपनी-अपनी पसंदीदा हीरोइनों के पुरस्कार को लेकर उलझ गए थे, तो अब अपनी नई फिल्मों को रिलीज़ करने पर भिड़ गए हैं. प्रियंका चोपड़ा दोनों ही विवादों के केंद्र में हैं. ग़ौरतलब है कि जब मधुर भंडारकर की फिल्म *फैशन* के लिए प्रियंका को सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का आईफा अवार्ड मिला था, तब आशुतोष ने उस पर विरोध जता दिया था. उन्होंने यह कह कर विवाद खड़ा कर दिया था कि यह अवार्ड उनकी फिल्म *जोधा-अकबर* में बेहतरीन अभिनय करने वाली ऐश्वर्या को मिलना चाहिए था. लेकिन अब

ताज़ा विवाद दोनों की नई फिल्मों को रिलीज़ करने की तारीख़ को लेकर पैदा हो गया है. मधुर की नई फिल्म है- *जेल*, जबकि आशुतोष की नई फिल्म का नाम है- *व्हाट्स योर राशि?* दोनों को एक साथ रिलीज़ करने में अड़चन आ गई है. इसे दूर करने के लिए एसोसिएशन ऑफ मोशन पिक्चर एंड टीवी प्रोग्रामर (एएमपीटीपीपी) ने मधुर और *जेल* फिल्म की निर्माता कंपनी यूटीवी को समझाया. दोनों फिल्मों को एक ही दिन रिलीज़ करने में आ रही दिक़्क़तों के बारे में बताया. इसका असर हुआ और अब *जेल* जहां 23 अक्टूबर को रिलीज़ होगी, वहीं *व्हाट्स योर राशि* 25 सितंबर को ही रिलीज़ हो जाएगी. कहा जा रहा है कि अपनी फिल्म के रिलीज़ होने में आई एक महीने की इस देरी से मधुर काफी नाराज़ हैं. उन्हें यह बात भी नागवार गुज़री है कि *जेल* की रिलीज़ को टालने के लिए उनसे उस प्रियंका चोपड़ा ने भी कह डाला, जिसके लिए वह आशुतोष से भिड़ गए थे. कहते हैं कि प्रियंका चाहती हैं कि उनकी नई फिल्म- *व्हाट्स योर राशि*- के साथ कोई और बड़ी फिल्म रिलीज़ न हो, ताकि उन्हें दर्शकों का टोटा न पड़े. बहरहाल, मधुर और आशुतोष की इस लड़ाई का असर उनकी पत्नियों पर भी पड़ गया है. पहले आमतौर पर पिकनिक आदि के लिए दोनों के परिवार साथ ही जाते थे, लेकिन अब ऐसा नहीं हो रहा. मधुर की पत्नी रेणु और आशुतोष की पत्नी सुनीता तक में बातचीत बंद हो गई है.

कृपया अपने सबस्क्रिप्शन चेक अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के नाम पर अपने नाम और पूरे पते के साथ यहां भेजें : (गैनन) के-2, दूसरी मंज़िल, चौधरी बिल्डिंग, मिडिल सर्किल, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली -110001

वार्षिक शुल्क : 1000 रु.

जय हो...

स्लमडॉग मिलिनेयर को ऑस्कर अवार्ड मिले छह महीने हो चुके हैं. लेकिन उसके कलाकारों की लोकप्रियता आज भी बरकरार है. फिल्म के नायक रहे देव पटेल इन दिनों मनोहर नाइट श्यामलन की हॉलीवुड फिल्म की शूटिंग में व्यस्त हैं, तो नायिका फ्रीडा पिंटो अंतरराष्ट्रीय स्टार बन चुकी हैं. वह वूडी एलेन समेत हॉलीवुड के कई बड़े नामों के साथ काम कर रही हैं. रही बात बाल कलाकारों की, तो वह भी इनसे पीछे नहीं रह गए हैं. आइए, देखें कौन-सा बाल कलाकार क्या कर रहा है-

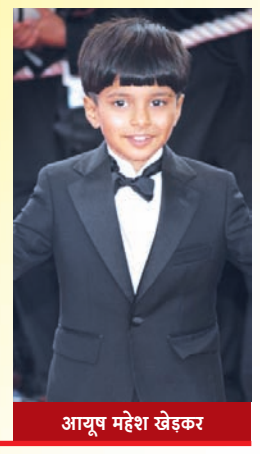

आयूष महेश खेड़कर

स्लमडॉग के बाद जीवन : मैं चौथी में पढ़ रहा हूं. *स्लमडॉग* के बाद तो मेरा पूरा जीवन ही बदल गया. लेकिन मेरे मित्र कतई नहीं बदले. बाहर लोग मुझे फौरन पहचान लेते हैं. मैं मई में कांस फिल्म फेस्टिवल में गया था, मज़ा आ गया.
प्रस्ताव: दो विज्ञापन फिल्में की हैं. इनमें से एक हृतिक रोशन के साथ रिलायंस मोबाइल का था, तो दूसरा ब्रिटानिया का. वैसे एक फ्रेंच फिल्म भी कर रहा हूं. उसका नाम है- *श्याम्स सीक्रेट्स*. इसकी शूटिंग दीपावली के आसपास शुरू होगी.

रूबीना अली

नौ वर्ष की उम्र में ही वह *स्लमगर्ल ड्रीमिंग* के नाम से अपनी जीवनी लिख चुकी है. उसने अभी हाल में हॉलीवुड की मशहूर हीरोइन निकोल किडमैन के साथ एक विज्ञापन फिल्म भी की है, जिसे शेखर कपूर ने बनाया है. इसके अलावा वाशु भागनानी की फिल्म-कल किसने देखा-में भी है.

आशुतोष लोबो गाजीवाला

स्लमडॉग के बाद का जीवन : बोर्ड परीक्षा में 86 फ़ीसदी अंक लाने के बाद मैं मुंबई जय हिंद कॉलेज में कॉमर्स की पढ़ाई कर रहा हूं. स्लमडॉग के बाद मेरा जीवन एकदम बदल गया है. सड़क पर देखते ही लोग पहचान लेते हैं. यहां तक कि भिखारी कहते हैं, तुम वही हो न. कॉलेज में तो लोकप्रिय हूं ही.
प्रस्ताव : *स्लमडॉग* के बाद कुछ प्रस्ताव आए थे, लेकिन उनमें से किसी में बात बन नहीं पाई. अभी एक बड़े बैनर की फिल्म मुझे मिली है, लेकिन इसके बारे में किसी को अभी न बताने का निर्देश है. मैं एक्टिंग को ही कैरियर बनाना चाहता हूं. वैसे मेरी रुचि वेब डिज़ाइनिंग में भी है.

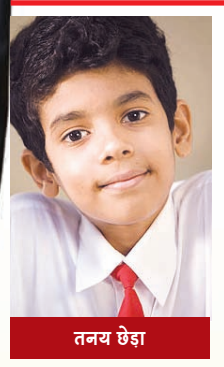

तनय छेड़ा

स्लमडॉग के बाद जीवन : इस समय आठवीं का छात्र हूं. लोग तो *स्लमडॉग* रिलीज होने से पहले ही मुझे जानने लगे थे. लेकिन अब अधिक लोग जानते हैं. मैं जब भी सड़क पर दिखता हूं, लोग गाने लगते हैं-जय हो. सुन कर अच्छा लगता है.
प्रस्ताव : मैंनें शाहरुख़ ख़ान की नई फिल्म- *माई नेम इज ख़ान*-में काम किया है. इस फिल्म में मेरी शूटिंग पूरी हो गई है. इसमें मैंने शाहरुख़ ख़ान के बचपन का रोल किया है. इसलिए उनके साथ मेरा कोई सीन नहीं है. लेकिन शूटिंग के समय वह सेट पर आते थे, और मेरी पूरी मदद करते थे. इसके अलावा मैं एक जर्मन फिल्म में भी काम कर रहा हूं.

अज़हरुद्दीन मोहम्मद इस्माइल

अज़हर हाल में ही झोपड़पट्टी से निकल कर मुंबई के शहरी इलाक़े में फ्लैट में आ गया है. वह पाली चिन्मया स्कूल का छात्र है. वह कहता है, फ्लैट में रहने का सपना मैंने कभी नहीं देखा था. सच कहें, तो मज़ा आ रहा है. लगता है कि मैं भी कोई हस्ती बन गया. रूबीना की तरह वह भी इन दिनों अपनी जीवनी लिख रहा है. इस जीवनी का विमोचन कराने के लिए वह दक्षिण अफ्रीका जाएगा.
फिल्मों में काम : *स्लमडॉग* के बाद अज़हर स्टार बन चुका है. वह वाशु भागनानी की फिल्म-कल किसने देखा-में भी है. वह टीवी के कुछ रियलिटी शो में भी भाग ले चुका है. इनमें *छोटे मियां बड़े मियां* और *दस का दम* प्रमुख हैं. *दस का दम* में उसे दो पुरस्कार मिले. एक तो अपने पसंदीदा स्टार सलमान ख़ान के साथ खड़ा होने का मौक़ा मिला, दूसरे सल्लू मियां ने उसे छोटी बाइक भी दी.
लक्ष्य: ख़ूब पढ़ाई करना है. बड़ा आदमी बनना है. अगर कोई नया ऑफर आया, तो काम ज़रूर करूंगा. वैसे अभी एक्टिंग पर ख़ास ध्यान नहीं दे रहा हूं, क्योंकि पहले पढ़ाई करना चाहता हूं.

मधुर मित्तल

स्लमडॉग के बाद जीवन : आसपास बहुत कुछ बदल गया है. लोग अब सिर्फ़ भारत में ही नहीं, बल्कि दुनिया भर में पहचानने लगे हैं. जब हवाई जहाज से यात्रा करता हूं, तो मुझे विशेष सुविधाएं अपने आप मिल जाती हैं. रेस्तराओं में बिल के पूरे पैसे नहीं लेते. यह सब अच्छा लगता है.
प्रस्ताव : बॉलीवुड में कोई ढंग का प्रस्ताव मुझे नहीं मिला है. लेकिन मुझे एक फ्रेंच फिल्म का प्रस्ताव ज़रूर मिला है. उसके निर्देशक हैं- फ्रेंकिओज एलांग. इसके अलावा लंदन की भी एक फिल्म मिली है.

रीमिक्स के लिए मान गए मनोज कुमार

रीमिक्स के इस दौर में देशभक्ति के गाने भी नहीं बचे. वैसे भी जब पुराने और मौलिक गानों को शोर मचा-मचा कर रीमिक्सों ने बाज़ार से धकेल दिया हो, तब नई पीढ़ी में देशभक्ति की भावना पहुंचाने के लिए रीमिक्स का सहारा लेना ही पड़ेगा. बाज़ार की मांग कहें या मजबूरी, नई पीढ़ी के लोगों को ध्यान में रखते हुए सोहेल ख़ान भी यही कोशिश कर रहे हैं. वह अपनी नई फिल्म- *किसान*-के ज़रिए मनोज कुमार की क्लासिक फिल्म उपकार का मशहूर गीत *मेरे देश की धरती* को रीमिक्स करके पहुंचाएंगे. सोहेल को यह सलाह छोटे भाई सलमान ख़ान ने दी है. इस गाने को इस्तेमाल करने से पहले उन्होंने मनोज कुमार से इजाज़त तो ले ही ली थी, बाद में पूरा दृश्य भी दिखा दिया. कहते हैं कि यह देख मनोज कुमार ख़ुश हो गए. आप भी जब इस गाने को सुनेंगे तो इसके पीछे की ईमानदार सोच से प्रभावित हुए बग़ैर नहीं रहेंगे. इसका उद्देश्य युवाओं में देशभक्ति की भावना पैदा करना है, जो आज के युवाओं में नहीं देखी जाती है. साथ ही गाने की 50 फ़ीसदी रॉयल्टी किसानों को देने की बात भी कही गई है. इस गाने का रीमिक्स तैयार किया है डब्बू मलिक ने, जो मशहूर संगीतकार अनु मलिक के छोटे भाई हैं. इस रीमिक्स को दलेर मेंहदी ने बिना मेहनताना लिए गाया है. अब देखते हैं कि यह रीमिक्स संगीत प्रेमियों पर पुराने गाने जैसा जादू चला पाता है या नहीं.

तीन मिनट की प्रतियोगिता

वन टेक मीडिया डॉट कॉम ने पहले की तरह इस वर्ष भी तीन मिनट की फिल्म प्रतियोगिता का आयोजन किया है. इसमें आपको तीन मिनट की फिल्म बनानी है और उसमें केवल भारत की अच्छाई दिखानी है. विषय क्रिकेट से लेकर कोई सामाजिक मसला या पर्यटन आदि तक कोई भी हो सकता है. यानी आप कोई भी ऐसा विषय ले सकते हैं, और उसे आप कैम कार्डर पर भी शूट करके डी.वी.डी. में लोड करके भेज सकते है. इस फिल्म को बाद में इटली के रिवर टू रिवर फ्लोरेंश इंडियन फिल्म फेस्टीवल में भेजा जाएगा. इसके लिए अक्टूबर 2009 तक प्रविष्टि भेजी सकती है. इसमें हिस्सा लेने के लिए कोई शुल्क नहीं है. यानी बिल्कुल मुफ़्त. यह उन लोगों के लिए एक सुनहरा मौक़ा है जो निर्माता बनने की सोचते हैं, लेकिन बन नहीं पाते. इसके ज़रिए वे लोग अपनी क़ाबिलियत दिखाकर अपने सपने को पूरा कर सकते हैं. इतना ही नहीं, आप अपनी फिल्म किसी भी भाषा में भेज सकते हैं. इस प्रतियोगिता के लिए उम्र आदि की भी कोई सीमा नहीं है. इसमें कोई भी हिस्सा ले सकता है. वैसे इसकी पूरी जानकारी *डब्लूडब्लू डॉट 1टेकमीडिया डॉट कॉम* से हासिल कर सकते हैं.

मोनिका पर मर्डर का शक़

मोनिका बेदी और पायल रोहतगी जल्द ही फिर एक रियलिटी शो में साथ दिखाई देंगी. इस शो के निर्माता अनुभव सिन्हा हैं. शो का नाम है- *मिस्टर एंड मिसेज शर्मा*. यह शो सितंबर से *सहारा वन* पर आएगा. इस शो की कहानी *बिग बॉस* की एक प्रतियोगी पर आधारित है. उस प्रतियोगी के किरदार का नाम है मेघा, जिसे पायल रोहतगी निभा रही हैं. इसमें दिखाया जाएगा कि *बिग बॉस* के घर में मेघा (पायल) का मर्डर हो जाता है, जिसका सबसे अधिक शक़ मोनिका बेदी पर जाता है. मोनिका का कहना है कि उन्हें इस शो की शूटिंग करने में बहुत मज़ा आया. यहां तक कि अनुभव सिन्हा ने मोनिका के लिए वर्कशाप तक का आयोजन कराया. ताकि मोनिका अपने रोल की बारीक़ियों को आसानी से समझ सकें. मोनिका को उम्मीद है कि इस नए थ्रिलर शो से उनकी छवि और बेहतर होगी. ग़ौरतलब है कि *बिग बॉस-2* से पहले उनकी पहचान सिर्फ़ अबु सलेम की पूर्व प्रेमिका के तौर पर थी. लेकिन पहले *बिग बॉस-2* और फिर *झलक दिखला जा-3* में काम करने के बाद उनकी छवि काफी हद तक सुधर गई है. लोग भी उन्हें गंभीरता से लेने लगे हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com